१

प्रेमचंद कृत गोदान : कथावस्तु

इकाई की रूपरेखा

१.० इकाई का उद्देश्य
१.१ प्रस्तावना
१.२ लेखक परिचय
१.३ गोदान : कथावस्तु
१.४ सारांश
१.५ वैकल्पिक प्रश्न
१.६ लघूत्तरीय प्रश्न
१.७ बोध प्रश्न
१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१.० इकाई का उद्देश्य

'गोदान' प्रेमचंद का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। इस उपन्यास में भारतीय ग्रामीण जीवन का ऐसा यथार्थ और प्रामाणिक चित्रण हुआ है कि इसकी सभी ने सर्वत्र सराहना की है। ग्राम्य जीवन का सजीव चित्रण प्रस्तुत करने की दृष्टि से यह उपन्यास विश्वसाहित्य में अपनी तरह की अकेली रचना है। यही कारण है कि 'गोदान' को ग्रामीण जीवन का महाकाव्य कहा जाता है। इस इकाई के माध्यम से विद्याथियों को उपन्यास कथावस्तु की जानकारी दी जाएगी। इसके साथ ही साथ कथावस्तु के माध्यम से विद्यार्थियों में यह समझ विकसित करने की चेष्टा होगी कि आखिरकार यह उपन्यास विश्वसाहित्य में कैसे और क्यों सम्मिलित है। इसे क्यों सर्वश्रेष्ठ उपन्यासों की कोटि में रखा गया है। इस इकाई का यही मुख्य उद्देश्य है।

१.१ प्रस्तावना

'गोदान' प्रेमचंद का अंतिम पूर्ण उपन्यास है जिसका प्रकाशन सन् १९३६ में हुआ था। यह उपन्यास प्रेमचंद की सर्वोत्कृष्ट रचना है। इस उपन्यास में इन्हे किसान एवं मजदूर जीवन को बहुत सूक्ष्मता सें अंकित करने में पूरी सफलता मिली है। गोदान उपन्यास में आरम्भ से लेकर अन्त तक भारतीय किसान की दूर्दशा को अत्यन्त सजीवता, जीवन्तता और यथार्थपरक शैली में उठाया गया है। उपन्यास का मुख्य कथानायक या पात्र होरी पूरी तरह से भारतीय किसानों का प्रतिनिधित्व करता है। यह उपन्यास 'गोदान' महज़ होरी जैसे पात्र की व्यथा कथा नहीं है बल्कि यह संपूर्ण भारतीय किसान की त्रासदपूर्ण परिस्थितियों, मनोदशाओं, जर्जर आर्थिक-सामाजिक झंझावातों का जीता-जागता, सजीव दस्तावेज़ है जो यह प्रत्यक्ष रूप से दर्शाया है कि भारत का कृषक ऋण में ही पैदा होता है, ऋण में ही आजीवन जीवन व्यतीत करता है और वृद्धावस्था तक जब तक वह जीवित रहता है कर्ज

mynotes.in

का भोर या बोझ उठाए काल (मौत) के मुँह में समा जाता है, यही नहीं अपने बच्चों के लिए विरासत के रूप में भी भारी-भक्कम कर्ज छोड़ जाता है । इस प्रकार भारतीय किसान अभावों एवं संघर्षों का सामना जीवन भर करते हुए अपनी साधारण-सी इच्छा-आकांश को भी पूरी नहीं कर पाता, अपनी अधूरी इच्छा लिए शरीर छोड़ देता है । इस उपन्यास का मुख्य पात्र होरी अपने सारे गुण-अवगुण और शक्ति के साथ भारत देश का किसान है। होरी की एक छोटी-सी इच्छा-आकांक्षा थी कि वह एक गाय पाले । गरीबी से त्रस्त वह किसान अपनी इस अभिलाषा (इच्छा) की पूर्ति करने के लिए अनेक यत्न करता है, झूठ भी बोलता है, अनेक-अनेक परेशानियों से भी घिर जाता है परन्तु फिर भी अपनी इच्छा का शव अपनी मृत्यु तक ढाता रहता है। इस उपन्यास में इन्हीं तथ्यों को बहुत संजीदगी एवं मार्मिकता से दर्शाया गया है।

१.२ लेखक परिचय

मुंशी प्रेमचंद हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार, कहानीकार थे । इनका जन्म बनारस के निकट लमही नामक ग्राँव, उत्तरप्रदेश में ३१ जुलाई सन् १८८० में हुआ था । इनका वास्तविक नाम धनपत राय था और लोग इन्हें नवाब राय के नाम से पुकारते थे । इनके पिता का नाम अजायब राय और माता का नाम आनन्दी देवी था । परिवार की आर्थिक स्थिति मध्यवर्ग-सी थी । अत: उनका जीवन अभाव और गरीबी में ही बीता । अपनी माता की मृत्यु के पश्चात सौतेली माता के क्रूर व्यवहार से संघर्ष करते प्रेमचंद के सिर से पिता का साया भी उठ गया । सौतेली माँ, उनके सौतेले भाई-बहनों और पत्नी समेत सबकी जिम्मेदारी असमय ही उनके कंधों पर आ गई थी, जिसका निवर्हन करते हुए उन्होंने किसी भी तरह से संघर्ष करते हुए, जर्जर आर्थिक स्थिति से गुजरते हुए अपनी पढ़ाई पूरी की । यही कारण है कि उनके साहित्य में भारतीय गरीबों-मजदूरों की मर्मान्तक पीड़ा और त्रासदी को भली-भाँति अत्यन्त सूक्ष्मता से दर्शाया है।

उनका पहला विवाह अनमेल था जो कि किसी मजबूरी के कारण संपन्न हुआ था। पत्नी का व्यवहार उनके ह्रदय को वेधने वाला बिल्कुल असंतोषजनक था । पहली पत्नी को त्यागने के पश्चात उनका विवाह सन् १९०५ में शिवरानी देवी के साथ संपन्न हुआ जो कि उस वक्त महज ग्यारह वर्ष की थीं । शिवरानी देवी अध्ययनशील प्रवृत्ति की थीं, पति के साथ रहकर लेखन कला में भी निपूण हो गई थीं । उन्होंने सन् १९४४ में 'प्रेमचंद घर में' नामक पुस्तक प्रकाशित करायी थी जिसका अध्ययन करके प्रेमचंद के व्यक्तित्व को और अधिक निकट से जाना जा सकता है।

मुंशी प्रेमचंद अपने लेखन के आरंभिक दिनों में नवाब राय के नाम से उर्दू में लिखा करते थे। इनकी पहली कहानी 'संसार का सबसे अनमोल रत्न' कानपूर से निकलने वाली पत्रिका 'जमाना' में प्रकाशित हुई थी । तत्पश्चात इनकी अनेक कहानियाँ उर्दू में ही 'सोजेवतन' शीर्षक कहानी संग्रह के रुप में प्रकाशित हुई । इन्होंने उर्दू भाषा में कुल मिलाकर लगभग १७८ कहानियाँ लिखीं जिनका बाद के दिनों में हिन्दी समेत अन्य देशी-विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ । इन कहानियों में खाके परवाना, प्रेम पचीसी, प्रेम बत्तीसी, प्रेम चालीसा, फिरदोसये ख्याल, जादेराह, दूध की कीमत, वारदात, नजात जैसी कहानियाँ शामिल हैं

जिनमें तत्कालीन सामाजिक परिवेश, ग्राम्य जीवन और वहाँ की अनेक-अनेक मुद्दों पर आधारित परिस्थितियों को अत्यन्त यथार्थपरक रूप में दिखाया गया है।

प्रेमचंद ने महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से सन् १९१६ में हिन्दी साहित्य जगत में पदार्पण किया और इसके बाद अनवरत हिन्दी में ही आजीवन लिखते रहे।

प्रेमचंद के संबंध में एक और तथ्य जानना आवश्यक है कि उर्दू में लिखित उनके कहानी संग्रह 'सोजेवतन' को जो कि सन् १९०७ में प्रकाशित हुआ था, उसे अंग्रेजों ने ज़ब्त कर लिया था क्योंकि इस कहानी संकलन की कहानियाँ भारत की स्वातन्त्र्य भावना, देश प्रेम से ओतप्रोत थीं। कहानियों में स्वाधीनता की भावना की अतिशयता होने के कारण ही उसे अंग्रेजों ने जब्त किया था। कालान्तर में प्रेमचंद हिन्दी में 'प्रेमचंद' उपनाम से लिखने लगे और उनका यह उपनाम ही हिन्दी कथा साहित्य में अजर-अमर हो गया, जो कि अनादि काल तक चलता रहेगा।

इनकी पहली कहानी 'पंच परमेश्वर' सन् १९१६ में प्रकाशित हुई थी और अंतिम कहानी 'कफन' सन् १९३६ में प्रकाशित हुई थी। इन बीस वर्षों में प्रेमचंद ने लगभग ३०० से अधिक कहानियों की रचना की, जो कि 'मान सरोवर' के आठ खंडों में संकलित हुई हैं।

प्रेमचंद जितने उत्कृष्ट कहानीकार हैं उतने ही महान उपन्यास कार भी हैं। इनके विषय में एक स्थान पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इनके साहित्य का मूल्यांकन करते हुए लिखा है – 'प्रेमचंद शताब्दियों से पददलित, अपमानित और उपेक्षित कृषकों की आवाज थे। अगर आप उत्तर भारत की समस्त जनता के आचार-विचार, भाषा-भाव, रहन-सहन, आशा-आकांक्षा, दुख-सुख और सूझ-बूझ जानना चाहते हैं तो प्रेमचंद से उत्तम परिचायक आपको नहीं मिल सकता।'

प्रेमचंद अपने युग में अपनी महान प्रतिभा के कारण युग प्रवर्तक के रूप में जाने जाते हैं। ऐसा पहली बार हुआ था कि उनके उपन्यासों में आम जन मानस की पीड़ा, त्रासदी और यथार्थ को अत्यन्त प्रामाणिक और वास्तविक रूप में दर्शाया गया था, आम जनता की अंतहीन समस्याओं को व्यापक रूप में कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान किया गया था। वास्तव में सच्चे अर्थों में प्रेमचंद ने ही हिंदी उपन्यास शिल्प को विकसित किया था। इनके उपन्यास अनमेल विवाह, विधवा विवाह, दहेज प्रथा, किसान समस्या, राष्ट्रीय आन्दोलन, वर्ग वैषम्यता, जमींदारी प्रथा, शोषण, भारतीय संस्कृति, मानवतावाद, जातिगत-वर्गगत भेदभाव जैसी तमाम सामाजिक विसंगतियों, विडंबनाओं और विकृतियों पर आधारित हैं। इनके द्वारा रचित मुख्य उपन्यास हैं – सेवासदन (१९१८ ई.), प्रेमाश्रम (१९२२ ई.), रंगभूमि (१९२५ ई.), कायाकल्प (१९२६ ई.), निर्मला (१९२७ ई.), गबन (१९३१ ई.), कर्मभूमि (१९३३ ई.), और गोदान (१९३६ ई.)।

प्रेमचंद ने हिन्दी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से ऊपर जीवन-जगत से जोड़ने का कार्य किया। इन्होंने 'सेवासदन' उपन्यास में शादी-ब्याह से संबंधित समस्याओं मसलन दहेज प्रथा, कुलीनता का प्रश्न, पत्नी का स्थान आदि को अत्यन्त अलग ढंग से उठाया है। 'निर्मला' उपन्यास में इन्होंने दहेज प्रथा, अनमेल विवाह से जुड़ी समस्याओं को उठाया है। 'कायाकल्प' उपन्यास पुनर्जन्म पर आधारित है, 'गबन' में स्त्रियों के आभूषण प्रेम के

दुष्परिणामों का चित्रण है, 'रंगभूमि' उपन्यास में शासक वर्ग के अत्याचारों का चित्रण है तो वहीं 'कर्मभूमि' उपन्यास में स्वतंत्रता संग्राम की एक झलक है। ग्रामीण कृषक जीवन की समस्याओं का यथार्थ चित्रण इन्होंने 'प्रेमाश्रम' और 'गोदान' में किया है। गोदान इनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। प्रेमचंद के उपन्यासों में ग्रामीण जीवन में व्याप्त सूक्ष्म से सूक्ष्मतम समस्याओं जैसे कि समाज में व्याप्त छुआछूत, जातिगत-वर्गगत भेदभाव, साप्रदायिकता, विवाह से जुड़ी समस्याएँ आदि अनेक मुद्दों को अत्यन्त जीवन्त और सजीवता से अभिव्यक्त किया गया है। विषयवस्तू और शिल्पगत दोनों ही दृष्टि से प्रेमचंद के समकक्ष हिन्दी का अन्य कोई उपन्यासकार खड़ा नहीं किया जा सकता है। विरले ही यदा-कदा कोई साहित्यकार ही प्रेमचंद जैसे जन्म लेते हैं। यही कारण है कि प्रेमचंद को 'उपन्यास सम्राट' की उपाधि से सम्मानित किया जाता है। उन्होंने अपनी अदम्य लेखनी से हिन्दी उपन्यास में एक नये युग का सूत्रपात ही नहीं किया, वरन् उसे विकसित करने में भी सफल हुए हैं। यही कारण है कि प्रेमचंद के नाम पर ही एक अवीध को 'प्रेमचंदयुगीन हिन्दी उपन्यास' या 'प्रेमचंदयुगीन हिन्दी कहानी' 'प्रेमचंदयुगीन साहित्य', 'प्रेमचंदोत्तर साहित्य' आदि कह कर संबोधित किया जाता है। प्रेमचंद का निधन ८ अक्टूबर, १९३६ में हुआ था।

इस प्रकार प्रेमचंद की गणना विश्वस्तरीय कथाकारों, उपन्यासकारों गोर्की, टॉलस्टॉय, डिकेन्स, चेखव, मोपासाँ तथा ओ'हेनरी जैसे अन्तरराष्ट्रीय साहित्यकारों से होती है।

१.३ गोदान : कथावस्तु

ग्राम्य जीवन का सजीव चित्रण प्रस्तुत करने की दृष्टि से प्रेमचन्द द्वारा रचित उपन्यास 'गोदान' विश्व साहित्य में अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इस उपन्यास की कथावस्तु या वस्तु योजना संक्षिप्त में कुछ इस प्रकार है:

इस उपन्यास का कथानायक होरी अवध प्रान्त के बेलारी गाँव का एक किसान है जिसके परिवार में उसकी पत्नी धनिया, सोलह वर्षीय बेटा गोबर और दो पुत्रियाँ सोना और रूपा हैं। हालाँकि होरी और धनिया की कुछ छह: सन्तानें हुई थीं लेकिन उनमें से तीन बच्चे अत्यन्त अल्प समय में ही इलाज के अभाव में गुजर गए। होरी के दो भाई भी हैं जो अपने-अपने परिवार के साथ रहते हैं। भाइयों के साथ जब से बँटवारा हुआ था, तब से होरी की आर्थिक दशा और अधिक जर्जर हो गई थी क्योंकि बँटवारे में भाईयों की बईमानी का शिकार बन चुका होरी इसे अपनी नियत समझकर परिस्थितियों से जूझता रहता है।

होरी के पड़ोस में रहने वाला परिवार भोला का है जिसके साथ उसकी विधवा बेटी रहती है झुनिया और रहती है एक सुन्दर सी गाय। होरी के मन में एक गाय रखने की खूब लालसा है। होरी जब-जब भोला की गाय को देखता है उसकी इच्छा और अधिक बलवती हो जाती है। वह भोला से बातचीत करके किसी तरह से सौदा पटाता है और परिणामत: अपने पिता के निर्देश पर गोबर भोला के घर उससे गाय ले आने के लिए पहुँचता है। वहाँ वह भोला की वैधव्यता काटती युवती बेटी झुनिया को देखता है। भोला और झुनिया दोनों एक दूसरे को देखकर पहली नज़र में ही एक दूसरे के प्रेमपाश में बँध जाते हैं।

गोबर जब गाय को लेकर घर आता है तो उसे देखने के लिए उसके सभी भाई बन्धु, पड़ोसी और अन्य गाँव वाले आते हैं लेकिन उसका एक सगा भाई हीरा और उसकी पत्नी पुनिया दोनों नहीं आते क्योंकि वे ईर्ष्याग्नि में जलते रहते हैं।

दरअसल होरी ने भोला से इस आश्वासन पर इस गाय का सौदा पटाया था कि होरी, अधेड़ उम्र के भोला का विवाह करवाएगा और भोला उस बदले में अपनी गाय दे देगा। धीरे-धीरे होरी उस गाय के ८० रू. भोला को चुका देगा। इस तरह से दोनों की इच्छाएँ-लालसाएँ पूरी हो जाएँगी। होरी अपने खूँटे पर गाय बाँधने, उसकी सेवा करने की तीव्र इच्छा की पूर्ति के लिए एक स्त्री को आधार बनाता है। हालाँकि इस समाज में एक स्त्री की तूलना गाय से ही की गई है जिसे जिसं खूँटे पर बाँध दिया जाए, वह वहीं पड़ी रहेगी। गाय की भी यही स्थिति है। दोनों को जहाँ बाँध दिया जाए वे कुछ प्रतिरोध नहीं कर सकतीं, उन्हें मजबूरी में वहीं रहना ही पड़ता है।

होरी के घर पर जब से यह गाय आयी है तब से गाँव वालों के मन में उसके प्रति ईर्ष्या की भावना बढ़ जाती है। होरी के मन की इच्छा इतनी आसानी से कैसे पूरी हो गई, यह बात गाँव वालों को हजम नहीं होती है। आषाढ़ के महीने में बरसात शुरू होने के बाद जमींदार का यह संदेशा आता है कि जब तक लगान की बकाया रकम नहीं चुक जाएगी तब तक कोई भी किसान खेत में हल लेकर नहीं जाएगा, कोई खेत जोतने नहीं जाएगा। जमींदार के इस फ़रमान को सुनने के बाद होरी लगान चुकाने के लिए महाजन झिंगरी सिंह के पास कर्ज लेने पहुँचता है। गाँव के इस साहूकार झिंगुरी सिंह की भी गिद्ध दृष्टि होरी की गाय पर रहती है। तब होरी उससे कर्ज माँगने जाता है तो झिंगुरी महाजन उसके सामने गाय उसे देने का प्रस्ताव रखता है। होरी का परिवार काफी विचार मंथन करने के बाद यह निर्णय लेता है कि वे लोग इस गाय को झिंगुरी सिंह को कदापि नहीं देंगे। इसी बीच होरी के भाई हीरा की धनिया के साथ किसी बात पर कहा-सुनी हो जाती है। क्रोध द्वेष और ईर्ष्या से धधकता हीरा उस रात होरी की गाय को जहर खिलाकर गाँव से भाग जाता है। धनिया और होरी अत्यन्त क्षुब्ध दुखी व चोटिल होते हैं। होरी के गाय पालन का स्वप्न, स्वप्न ही रह जाता है। होरी अपने भाई के विरूद्ध एक शब्द भी बोलना उचिंत नहीं समझता परन्तु धनिया शान्त नहीं होती। वह हंगामा खड़ा कर देती है। गाय की संदिग्ध मृत्यु की सूचना थानेदार को मिलती है और थानेदार जाँच-पड़ताल करने के लिए आता है। होरी धनिया की बातों को बहुत महत्त्व कभी नहीं देता है। उसे लगता है कि थानेदार के इस तरह से जाँच पड़ताल करने से उसके अपने परिवार और कुल खानदान की इज्जत मिट्टी में मिल रही है। महाजन झिंगुरी सिंह भी होरी को सलाह देता है कि वह पुलिस को रिश्वत वगैरह देकर इस मामले को निपटा दे। झिंगुरी सिंह के इस परामर्श के पीछे कारण यह भी था कि गाय की हत्या करने के लिए उन्हें भी कटघरे में रखा जा सकता था। महाजन की सलाह से प्रभावित होरी गाय की मृत्यु के मामले को रफा-दफा करने का प्रयत्न करता है। लेकिन धनिया इस प्रपंच का घोर विरोध करते हुए थानेदार समेत गाँव के अन्य लोगों को बहुत खरी-खोटी सुनाती है, उनकी बेइज्जत करती है। गाँव के शोषक वर्ग के लोगों के मन में यह बात गाँठ बँध जाती है और वे होरी से बदला लेने की योजना बनाने लगते हैं। और मौके की तलाश में जुट जाते हैं।

इधर गोबर और भोला की विधवा नवयुवती बेटी झुनिया का प्रेम-प्रंसग परवान चढ़ता है। गाँववालों में इसकी चर्चाएँ होने लगती हैं। गोबर पर झूठे लांछन लगने लगते हैं। गोबर के

पिता होरी को जाहिर है कि ये बातें अच्छी नहीं लगती। एक तरफ असह्य आर्थिक जर्जरता, तो दूसरी तरफ सामाजिक रूप से आरोप-प्रत्यारोप और लांछन।

इसी बीच फसल पकती है। खेत-खलिहान अन्न से भर जाने पर कुछ दिनों के लिए सारी चिन्ताएँ माना गायब हो जाती हैं, सबका मन खुशियों से भर उठता है। लेकिन होनी को कुछ और ही मंजूर होता है। उनकी सारी खुशियाँ काफूर हो जाती है। झुनिया गर्भवती हो जाती है। गोबर उसे अपने घर ले आता है। होरी इसका प्रतिरोध करता है लेकिन पत्नी धनिया, झुनिया की स्थिति से अवगत होने के बाद; जिसका हाथ उसके बेटे ने पकड़ा है, उसे बहू के रूप में स्वीकार करती है। धनिया बाद में होरी को भी झुनिया को अपनाने के लिए राजी करती है।

झुनिया विधवा युवती थी वह भी दूसरे जाति की। गाँव में विधवा विवाह और अन्तर्जातीय विवाह के खिलाफ़ आवाज उठती है। होरी से बदला लेने की तलाश में बैठे लोगों को मौका मिल जाता है। इस मुद्दे को और अधिक उछाल कर पंचायत बैठायी जाती है। जिसमें गाँव के शोषकों और धनिया के बीच जमकर पुन: तर्क-वितर्क होता है। वह अपने साथ हो रहे अन्याय-अत्याचार का खुला विरोध करती है। लेकिन उसकी बातों का किसी पर कोई फर्क नहीं होता। गर्भवती विधवा झुनिया को अपनाने के कारण होरी पर गाँव की पंचायत जबरदस्त जुर्माना लगाती है – सौ रूपये नकद और तीस मन अनाज। इतना जुर्माना होरी भला देगा भी तो कैसे देगा ? तीन मन अनाज दे देगा तो परिवार को खिलाएगा क्या ? सौ रूपये कहाँ से ले आएगा ?

इस दंड को भरने के लिए गरीब होरी अपना सारा अनाज झिंगुरी सिंह की चौपाल पर रख आता है और सौ रूपये नकद जुर्माना को भरने के लिए अपना मकान भी गिरवी रख देता है।

इन तमाम विषम परिस्थितियों से परिवार को संघर्ष करते देखकर गोबर मजदूरी करने लखनऊ चला जाता है। होरी की आर्थिक जर्जरता अपनी सारी पराकाष्ठाएँ पार कर जाती हैं। इधर भोला भी जिससे उसने गाय खरीदी थी, रूपयों के लिए तकादा करता रहता है। गाय पालने की लालसा में होरी इस कदर फँस चुका था कि लाख प्रयास करके भी वह चक्रव्यूह से बाहर नहीं निकल पा रहा था। भोला, गाय की कीमत के बदले होरी के उन बैलों को जिनसे वह अपना खेत जोतता था, उसको खोलकर ले जाता है। लाचार और मजबूर होकर होरी जो पहले खुद खेती करता था, अब दातादीन पंडित उसके समक्ष आधी फसल की शर्त पर खेतों की बुवाई-जोताई करवाने का प्रस्ताव रखता है। होरी इस शोषण के प्रति विद्रोह करना तो चाहता है परन्तु बेदखली के डर से वह प्रस्ताव स्वीकार कर लेता है जिससे वह और अधिक दयनीय दशा, कष्टदायक दशा में पहुँच जाता है। पंडित दातादीन के साथ साझे में बटाई खेतों से उसका गुजारा कैसे होगा, वह समझ नहीं पाता। साझे की इस खेती में उसके हिस्से में भी जो ईख की फसल आती है उसे भी साहूकार और लेनदार हड़प लेते हैं। होरी के भाग्य की ऐसी विड़म्बना ही है कि वह देखते-देखते एक किसान से बंटाईदार और बंटाईदार से एक मजदूर बन जाता है। घर चलाने के लिए, पत्नी बच्चों को जिन्दा रखने के लिए गाँव के अनेक लोगों से कुछ-न-कुछ रूपये-पैसे उधार लेता रहता है। मूल रक्कम पर सूद की कश्तें दिन-पर-दिन चढ़ती जाती हैं। एक ऋण को चुकता भीं नहीं किया कि उसे किसी न किसी कारण वश एक नया ऋण लेना पड़ता है। पंडित दातादीन के

यहाँ नौकरी करने लगता है। यही नहीं, उसकी पत्नी धनिया और बेटियाँ सोना और रूपा भी मजदूरी करने पर विवश हो जाती हैं।

गोबर मेहनत-मजदूरी करने शहर तो गया है परन्तु वह इतना नहीं कमाता कि अपनी पत्नी झुनिया और बच्चे को साथ रखकर, अपनी गृहस्थी की गाड़ी खींच कर अपने दीन-हीन पिता को कुछ आर्थिक सहयोग कर सके। अपने घर को इस विकटतम स्थिति से निकाल सके। इस पर दो बेटियों के ब्याह की जिम्मेदारियाँ अलग से थी।

होरी अपनी बड़ी बेटी सोना का विवाह पैसे वाले किसान मथुरा नामक व्यक्ति के साथ तय करता है। वह गाँव की सहुवाइन से २०० रूपए कर्ज लेता है और विवाह करता है। अपनी छोटी बेटी रूपा का विवाह अमीर लेकिन बूढ़े रामसेवक से कर देता है और बदले में अपना खेत बचाने के लिए रामसेवक से दौ सो रूपये पुन: उधार लेता है। अपनी बेटी के इन अनमेल ब्याह से वह अत्यन्त क्षुब्ध था। इस विवाह ने उसे किसी तरह की कोई खुशी नहीं दी, बल्कि वह मानसिक कष्ट की पराकाष्ठा तक पहुँच जाता है। इस तरह की आर्थिक जर्जरता की त्रासदपूर्ण स्थिति के सामने वह धर्म, मर्यादा की मजबूरीवश त्याग देता है जिसके कारण वह बहुत कष्टदायी दौर से गुजरता है। अपनी अपार दरिद्रता के कारण उसके सोचने समझने की क्षमता भी प्रभावित होती है।

दोनों बेटियों को ब्याहने के बाद होरी अपना जीवन किसी तरह से मेहनत मजदूरी करके बिताने लगता है। उसका शरीर अत्यन्त दुर्बल-क्षीण हो चुका है जिसके कारण वह अधिक परिश्रम करने में असक्षम है।

गर्मी के दिनों में मजदूरी करते होरी को लू लग जाती है। खेत से लाद कर उसे घर लाया जाता है। वह बिस्तर पर अलस्त पड़ जाता है। गाँव-देहात में लू लगने के लिए इलाज कराने का प्रश्न तो तब उठता है न, जब इलाज के लिए पैसे हों। वैसे भी गाँव में इस बीमारी का लोग देसी घरेलू उपचार ही करते हैं। होरी की तबियत बद से बदतर होती जाती हैं। पास-पड़ोस के लोग, गाँववाले, उसके भाई-बन्धु इकट्ठे हों जाते हैं। पत्नी धनिया का हाल रो-रोकर बेहाल है। वह कुछ समझ नहीं पाती कि क्या करे। तभ होरी का भाई हीरा रोते हुए अपनी भाभी से कहता है कि होरी दादा अब सबको छोड़कर जा रहे हैं, जल्दी से उनका 'गोदान' करवा दो।

धनिया भाव-विहवल अवस्था में कुछ समझ नहीं पाती कि वह होरी का 'गोदान' कराए भी तो कैसे ? उसके घर में भी कुछ नहीं है। उस दिन उसे मजदूरी में बीस आने (सवा रूपये) मिले थे। वह ये सवा रूपये अपने पति होरी के हाथ पर रखकर पंडित दाताहीन से कहती है कि "घर में न गाय है, न बधिया, न पैसा। महाराज यह जो कुछ है, यही इनका गोदान है।" धनिया की यह उक्तियाँ अत्यन्त मर्मान्तक रूप से अभिव्यक्ति पाकर 'गोदान' पुस्तक के शीर्षक की सार्थकता, प्रासंगिकता को प्रामाणिक करती हैं।

गोदान में ग्राम्य जीवन की प्रधानता प्रचुरता और व्यापकता तो है ही लेकिन इसके साथ-साथ नगर जीवन से भी संबंधित एक समानान्तर कथा उपलब्ध है। प्रेमचंद ने यहाँ दर्शाया है कि शहरी जीवन में मध्यवर्ग अपनी वृद्धि शीलता का अनावश्यक प्रदर्शन करता है। झूठे खोखले दिखावापन से मध्यवर्ग को बहुत लगाव है जो कि उनके पतन का ही कारण है। श्री

मान कौल जो कि मालती के पिता हैं अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा का झंडा गाड़ने और अपनी उदारता को जगजाहिर करने के लिए वे अपनी बेटियों को पढ़ने के लिए इंग्लैड भेजते हैं। इधर अथाह खर्च, अनियंत्रित शराब की लत और अतिशय दिखावा करने के कारण कर्ज में डूबते चले जाते हैं। वे बढ़ते कर्ज के साथ-साथ बढ़ती तनाव-ग्रस्तता के कारण लकवा-ग्रस्त हो जाते हैं और शारीरिक रूप से पूरी तरह अशक्त, असक्षम होकर कष्टकारी जिन्दगी जीने पर मज़बूर हो जाते हैं। उस दौरान जब वे लकवे के शिकार हुए थे तो उनकी बेटी मालती इंग्लैड में ही पढ़ रही थी। उपन्यास में मालती की कथा जैसे-जैसे आगे बढ़ती है वैसे शहरी जीवन से जुड़े अनेक मुद्दों का साक्षात्कार होता है। उदाहरण स्वरूप स्त्री-स्वतन्त्रता, स्त्री-पुरूष के समान अधिकार, प्रेम विवाह, पति-पत्नी की जिम्मेदारियाँ, राष्ट्रीय चेतना, पाश्चात्य अनुकरण के दुष्प्रभाव, धार्मिक एवं आध्यात्मिक भावनाएँ आदि का चित्रण प्रेमचंद ने अत्यन्त सफलता से किया है। इस प्रकार, उपन्यास की कथावस्तु यहीं समाप्त होती है।

१.४ सारांश

'गोदान' प्रेमचंद की महानतम उपलब्धि है। इस उपन्यास में इन्होंने उस समय के तत्कालीन समाज के सभी वर्गों का सजीव चित्रांकन किया है। गोदान का मुख्य पात्र होरी और पात्रा धनिया जहाँ एक तरफ किसान-मजदूर वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं तो वहीं वे अपनी व्यक्तिगत सत्ता को भी बनाए हुए हैं। प्रेमचंद इन पात्रों की अद्भुत संरचना से जहाँ उन गरीब किसानों-श्रमिकों-बंधुवा मजदूरों के साथ होने वाले शोषण का सजीव चित्र उतारने में सफल हुए हैं तो वहीं तमाम शोषकों जमींदारों, मिल मालिकों, सूदखोर साहूकारों, पुलिस, पटवारी, धार्मिक ठेकेदारों को चित्रांकित करने में भी उतने ही सफल हुए है।

इस उपन्यास में प्रेमचंद ने दर्शाया है कि गोदान का होरी मन से उदार है परन्तु जहाँ पुराने संस्कारों ने उसे एक तरफ धर्म भीरू बना दिया है तो वहीं जमींदारी प्रथा-महाजनी सभ्यता ने उसे अत्यन्त दरिद्र, कमजोर, सर्वहारा, बनाने के साथ ही साथ झूठा, बेईमान, बेटी बेचने वाला नीच और संकीर्ण बनने पर मजबूर कर दिया है। अपनी एक छोटी-सी इच्छा पूरी करने के एवज में उसे पूरी जिन्दगी भारी कीमत चुकानी पड़ती है। वह विषमतम-विकटतम परिस्थितियों के आगे अपना सबकुछ हार जाता है, मजबूरियों की मार से टूट अवश्य जाता है परन्तु झुकता नहीं है। वह अंत तक अन्तहीन असह्य अन्याय अत्याचार सहते हुए परिश्रम के यज्ञ में अपने संघर्षमय जीवन की आहुति चढ़ा देता है। लेकिन अपनी सामान्य-सी इच्छा पूरी नहीं कर पाता।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है गोदान में भारतीय जन-जीवन की यथार्थ झाँकी अपनी तमाम दुर्बलताओं-सबलताओं के साथ चित्रित है। इस उपन्यास में तत्कालीन समाज में व्याप्त विसंगतियों-विडंबनाओं और विकृतियों का यथार्थ चित्रण हुआ है।

१.५ वैकल्पिक प्रश्न

प्रश्न.१) 'गोदान' उपन्यास का प्रकाशन कब हुआ था?

(क) १९३२ (ख) १९४३

(ग) १९१४ (घ) १९३६

उत्तर: १९३६

प्रश्न.२) 'गोदान' का प्रमुख पात्र कौन है?

(क) हीरा (ख) शोभा

(ग) होरी (घ) मालती

उत्तर: होरी

प्रश्न.३) 'गोदान' उपन्यास की मुख्य स्त्री पात्र कौन है?

(क) धनिया (ख) झुनिया

(ग) मालती (घ) सोना

उत्तर: धनिया

प्रश्न.४) 'गोदान' का होरी उपन्यास में किसका प्रतिनिधित्व करता है?

(क) किसान-मजदूर (ख) पूंजीपति

(ग) पटवारी (घ) साहूकार

उत्तर: किसान-मजदूर

प्रश्न.५) होरी के मन में आजीवन कैसी लालसा बनी रहती है?

(क) जमींदार बनने की (ख) अपने खूँटे पर गाय पालने की

(ग) अमीर बनने की (घ) शादी करने की

उत्तर: अपने खूँटे पर गाय पालने की।

प्रश्न.६) ग्रामीण जीवन का महाकाव्य किस उपन्यास को कहा जाता है?

(क) गबन (ख) गोदान

(ग) कर्मभूमि (घ) रंगभूमि

उत्तर: गोदान

munotes.in

प्रश्न.७) गोबर घर की आर्थिक दशा को सुधारने के लिए मेहनत-मजदूरी करने कहाँ जाता है?

(क) लखनऊ (ख) बनारस

(ग) कलकत्ता (घ) मुंबई

उत्तर: लखनऊ

प्रश्न.८) होरी दौ सौ रूपये देकर किससे अपनी बेटी रूपा का विवाह करता है?

(क) भोला (ख) रामसेवक

(ग) झिंगुरी (घ) मथुरा

उत्तर: रामसेवक

प्रश्न.९) प्रेमचंद उर्दू में किस उपनाम से लिखते थे?

(क) नवाब राय (ख) प्रेमचन्द

(ग) अजायब राय (घ) धनपत राय

उत्तर: नवाब राय

प्रश्न.१०) प्रेमचंद का अंतिम पूर्ण उपन्यास कौन-सा है?

(क) गबन (ख) सेवासदन

(ग) रंगभूमि (घ) गोदान

उत्तर: गोदान

प्रश्न.११) प्रेमचंद की अंतिम कहानी कौन-सी है?

(क) कफ़न (ख) बड़े भाई साहब

(ग) ईदगाह (घ) बूढ़ी काकी

उत्तर: कफ़न

प्रश्न.१२) प्रेमचंद के जीवन काल की अवधि कब से कब है?

(क) १८८०-१९३६ (ख) १८६०-१९४६

(ग) १८९०-१९३० (घ) १८७०-१९७०

उत्तर: १८८०-१९३६

munotes.in

१.६ लघूत्तरीय प्रश्न

प्र.१) प्रेमचंद की गणना विश्व के किन महान साहित्यकारों से हुई है?

उ. प्रेमचंद की गिनती/गणना गोर्की, टॉलस्टॉय डिकेन्स, चेखव, मोंपासाँ तथा ओ'हेनरी जैसे विश्व स्तरीय साहित्यकारों से हुई है।

प्र.२) प्रेमचंद की विश्वस्तरीय कुछ कहानियों के नाम बताइए।

उ. शतरंज के खिलाड़ी, ईदगाह, बूढ़ीकाकी, नशा, लॉटरी, बड़े भाई साहब, नमक का दारोगा, पंच परमेश्वर, परिक्षा, मंत्र, बड़े घर की बेटी इत्यादि।

प्र.३) प्रेमचंद के प्रमुख उपन्यासों के नाम लिखिए।

उ. सेवासदन, गोदान, निर्मला, रंगभूमि, कर्मभूमि, गबन, प्रतिज्ञा, रूठी रानी, प्रेमाश्रम, कायाकल्प, मंगलसूत्र आदि।

प्र.४) 'गोदान' उपन्यास के मुख्य पात्रों के नाम लिखिए।

उ. होरी, धनिया, गोबर।

प्र.५) 'गोदान' का गोबर किससे प्रेम संबंध स्थापित कर बाद में उससे विवाह करता है?

उ. भोला की विधवा नवयुवती बेटी झुनिया से प्रेम करता है जो कि किसी अन्य जाति की रहती है। गोबर के प्रेमसंबंध में वह गर्भवती हो जाती है, जिसके बाद गोबर उससे विवाह करता है।

प्र.६) भोला किस प्रवृत्ति का नवयुवक है?

उ. गोबर जमींदारों, साहूकारों की सारी चालों, षडयत्रों को भली-भाँति समझता है। वह अपने पिता होरी की तरह भोला नहीं है। इसलिए अपने प्रतिरोध को व्यक्त करता है। वह व्यवस्था के प्रति विद्रोह करने वाला या विद्रोही प्रवृत्ति का है।

प्र.७) भोला होरी द्वारा गाय की कीमत नहीं चुकाने पर क्या करता है?

उ. भोला होरी के दरवाजे से गाय की कीमत के बजाय उसके बैलों को खोलकर लेकर जाता है। जिससे वह खेती करता है, खेत जोतता है।

प्र.८) होरी की गाय को कौन ज़हर देकर शहर भाग जाता है?

उ. होरी का सगा भाई हीरा गाय को ज़हर देकर शहर भाग जाता है।

प्र.९) भोला द्वारा बैल खोलकर ले जाने के बाद होरी किसके साथ बटाई पर खेती करना शुरू करता है?

उ. बैल के न रहने पर होरी पंडित दाता दीन के साथ साझे में बटाई पर खेती करना शुरु करता है।

mynotes.in

प्र.१०) 'गोदान' उपन्यास की मालती किस प्रवृत्ति की महिला है?

उ. मालती स्त्री-स्वतंत्रता को मानने वाली, खुले विचारों की स्त्री है।

१.७ बोध प्रश्न

प्र.१) 'गोदान' उपन्यास की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।

प्र.२) 'गोदान' की वस्तु-योजना पर प्रकाश डालिए।

प्र.३) 'गोदान' को किसानों का महाकाव्य क्यों कहा जाता है? कहानी के आधार पर लिखिए।

प्र.४) 'गोदान' के मूल कथ्य की विवेचना कीजिए।

प्र.५) 'गोदान' की विषय-वस्तु पर प्रकाश डालिए।

१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१. प्रेमचंद और उनका युग – राम विलास शर्मा

२. साहित्य का उद्देश्य – प्रेमचंद

३. प्रेमचंद – डॉ. सत्येन्द्र (सं.)

४. प्रेमचंद का संघर्ष – श्री नारायण पांडेय

५. कलम का मजदूर – मदन गोपाल

६. कलम का सिपाही - अमृतराय

७. कलम का मजदूर: प्रेमचंद – राजेश्वर गुरू

८. कलाकार प्रेमचंद – रामरतन भटनागर

९. कुछ विचार – प्रेमचंद

१०. गोदान : एक पुनर्विचार – परमानंद श्रीवास्तव

११. गोदान : नया परिप्रेक्ष्य – गोपाल राय

१२. साहित्य का भाषा चिन्तन – सं. वीणा श्रीवास्तव

१३. प्रेमचंद – सं. सत्येन्द्र ('प्रेमचंद' में संकलित डॉ. त्रिभुवन सिंह का निबंध 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद')

१४. प्रेमाश्रम – प्रेमचंद

१५. प्रतिज्ञा – मुंशी प्रेमचंद

*****

munotes.in

२

प्रेमचंद कृत गोदान : चरित्र-चित्रण

इकाई की रूपरेखा

२.० इकाई का उद्देश्य

२.१ प्रस्तावना

२.२ गोदान : चरित्र चित्रण

२.३ सारांश

२.४ वैकल्पिक प्रश्न

२.५ लघूत्तरीय प्रश्न

२.६ बोध प्रश्न

२.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

२.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है 'गोदान' उपन्यास के सभी पात्रों के संबंध में विद्यार्थियों को संपूर्ण जानकारी देना। कथा साहित्य को सफलता के चरम तक पहुँचाने में उसके पात्रों का चरित्र अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। ये पात्र ही अपने समस्त गुणों-अवगुणों, क्रिया-कलापों, कर्मो-कतव्यों, आदर्शों-सिद्धांतों समेत सभी मानवीय प्रवृत्तियों से कथा बुनते हैं। उनकी बुनावट, उनकी रचना जितनी व्यापक, भव्य, उदार और उदात्त होगी, वह कथा उतनी ही प्रभावशाली बनेगी पठनीय, सुग्राहय बनेगी। इसलिए उपन्यास के मुख्य तत्वों में एक महत्त्वपूर्ण तत्व है पात्रों का चरित्र–चित्रण; जिनपर प्रकाश डालना इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है।

२.१ प्रस्तावना

प्रेमचंद कृत 'गोदान' १९३६ में प्रकाशित कृषक जीवन का महाकाव्य है। इस उपन्यास का मुख्य पात्र होरी है जिसकी व्यथा-कथा यह दर्शाती है की वह किस प्रकार एक किसान से मजदूर बन जाता है। होरी नाम का यह पात्र उन तमाम वर्गों का प्रतिनिधित्व करता है जो विकटतम परिस्थितियों का सामना करते हुए, असहय शोषण को सहते हुए किसान से मजदूर बनने के लिए विवश लाचार हो जाते हैं। 'गोदान' उपन्यास में मुख्य पात्र होरी के अतिरिक्त उसकी पत्नी धुनिया, उसका पुत्र गोबर, उसकी दो बेटियाँ सोना और रूपा, सोना का पति मधुरा और रूपा का पति रामसेवक है। इसके अतिरिक्त होरी के दो भाई शोभा और हीरा-पुनिया, हीरा का परिवार, भोला, झुनिया, पंडित दाता दीन, मातादीन, झिंगुरी सिंह, सिलिया, खन्ना, मालती, मिस्टर मेहता, गोविन्दी, सहुआइन, रायसाहब, मिस्टर मेहरा, मिर्जा खुर्शेद, ओंकार नाथ, मिस्टर तंखा, खन्ना साहब, पुलिस, अन्य गाँववाले इस उपन्यास के ऐसे पात्र हैं जो अपनी-अपनी भूमिका से उपन्यास रूपी नदी को निरंतर

munotes.in

गतिशीलता, प्रवाहमयता प्रदान करते हैं । इनमें कथा के प्रसंगानुसार कुछ पात्र ग्रामीण परिवेश से जुडें हैं तो वहीं कुछ शहरी आबोहवा में रहते हैं । किसी भी रचना के लिए सफल पात्र योजना अत्यन्त आवश्यक हैं। उनमें इन तत्वों का होना आवश्यक हैं –

१) कथा के पात्र यथार्थ जगत से संबंधित हैं।

२) उपन्यासकार को चरित्र चित्रण के दौरान निष्पक्ष, तटस्थ रहना अधिक आवश्यक है ताकि वह किसी भी पात्र के साथ पक्षपात न कर सके।

३) पात्र / चरित्र–चित्रण में सुसंगति रहनी चाहिए।

४) पात्रों की गतिशीलता आवश्यक है।

५) पात्रों का सजीव, स्वाभाविक और पात्रानुकूल होना आवश्यक हैं।

६) चरित्र – चित्रण में सुसंगति तालमेल सामन्जस्य होना आवश्यक हैं।

७) पात्र अतिमानवीय नहीं होने चाहिए या अमानवीय भी नहीं होने चाहिए।

'गोदान' उपन्यास के पात्र इन सिद्धान्तों और आवश्यकताओं के अनुरूप हैं । वे अत्यन्त आदर्शवादी, महज उदात्र गुणों से युक्त नहीं हैं बल्कि उनमें अनेक कमियाँ या बुराइयाँ भी है क्योंकि बिना किसी दोष के अवगुण या कमी के मनुष्य की कल्पना ही नहीं हो सकती है । इस विषय में एक स्थान पर प्रेमचंद ने स्वयं कहा था – "चरित्र को उत्कृष्ट और आदर्श बनाने के लिए यह जरूरी नहीं है कि वह निर्दोष हो। महान से महान पुरूषों में भी कुछ कमजोरियाँ होती हैं । चरित्र को सजीव बनाने के लिए उसकी कमजोरियों का दिग्दर्शन कराने में कोई हानि नहीं होगी। बल्कि यही कमजोरियाँ चरित्र को मनुष्य बना देंगी। निर्दोष चरित्र तो देवता हो जाएगा और हम उसे समझ ही न सकेंगे। ऐसे चरित्र का हमारे ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड सकता।"

प्रेमचंद ने अपने पात्रों को गढ़ते समय मानवीय मूल्यों को एवं यथार्थ परिस्थितियों के केन्द्र में रखा । वे अपने पात्रों को देवता नहीं, बल्कि मनुष्य के रूप में दर्शाते हैं जिनमें गुणों के साथ-साथ अनेक कमियों या दुर्गुणों का भी समावेश है।

उपन्यास में मुख्य पात्र होरी किसानों का प्रतिनिधित्व करता है। जो गुण-दोष एक सामान्य किसान के अंदर होते हैं, होरी उन सभी गुण-दोषों से युक्त है। जैसे एक व्यक्ति अपनी करनी का फल ही भुगतता है वैसे ही होरी समेत अन्य पात्र भी अपने कर्मों का फल भोगते हैं । उपन्यास में राय साहब, जमींदार वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, मिस्टर मेहता बुद्धिजीवी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, मिस मालती सुशिक्षित, स्वतंत्र विचारों वाली स्त्री वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं तो वहीं होरी का पुत्र गोबर प्रगतिशील चेतना से युक्त नवयुवक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है । झुनिया वैधव्यता झेलती नवयुवतियों का प्रतिनिधित्व करती है, सूदखोर साहूकार का प्रतिनिधित्व करता है झिंगुरी सिंह। प्रेमचंद गोदान समेत अपने अन्य उपन्यासों में छोटे-से-छोटे पात्र को नजर अन्दाज नहीं करते, अवहेलना नहीं करते हैं । हकीकत तो यह है कि ये सभी पात्र अपनी विशिष्टताओं के साथ हमारे समक्ष प्रस्तुत होते हैं।

गोदान के पात्र हर क्षेत्र, हर वर्ग से संबंधित हैं जैसे कि पीड़ित, शोषित, शोषक वर्ग, जमींदार, सेठ-साहूकार एवं महाजन, सरकारी अधिकारी, राजनीतिक कार्यकर्ता, पाखंडी पंडे-पुरोहित, सिपाही दारोगा, चौकीदार, हरिजन, दस्तकार, क्लर्क, जमींदार के कर्मचारी बुद्धिजीवी वर्ग,

चाटु करिता करने वाले चमचे सभी इस उपन्यास को हिन्दी का सुप्रसिद्ध उपन्यास बनाते हैं।

प्रेमचंद के उपन्यास गोदान के खलपात्र शोषक वर्ग के लोग हैं, जो अपने-अपने वर्गानुसार अपनी भूमिका निभाते हैं। उनकी रचना प्रेमचन्द कुछ इस प्रकार करते हैं कि पाठक चाहकर भी उससे नफरत नहीं कर पाता है। जैसे कि जमींदार राससाहब अमरपाल सिंह किसानों का शोषण करते हैं। लेकिन देश की परिस्थितियों को देखते हुए किसानों के पक्ष में अपनी राय रखते हुए कहते हैं - ''बहुत जल्द हमारे वर्ग की हस्ती मिट जाने वाली है। मैं उस दिन का स्वागत करने को तैयार बैठा हूँ। ईश्वर वह दिन जल्द लाए। वह हमारे उद्धार का दिन होगा । हम परिस्थितियों का शिकार बने हुए हैं।''

प्रेमचंद की सबसे बड़ी विशेषता है कि वे अपने पात्रों की वैयक्तिक विशेषताओं को गहराई से समझते हुए परिस्थितिनुसार उनका उत्थान-पतन दिखाते हैं। मानव सुलभ कार्य व्यापार को अत्यन्त स्वाभाविकता प्रदान करते हैं।

अंतत: कहा जा सकता है कि प्रेमचंद के सभी पात्र मानवीय गुणों से संपृक्त (जुड़े हुए), मनोवैज्ञानिक स्तर पर सुदृढ़, गतिशील, सजीव, प्रभावशील, संघर्षशील एवं सशक्त हैं तथा अपने-अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं।

२.२ गोदन : चरित्र-चित्रण

'गोदान' उपन्यास के प्रमुख पात्रों का चित्रण:

१) होरी का चरित्र-चित्रण:

'गोदान' उपन्यास का मुख्य पात्र होरी है। वह अवध प्रांत के एक छोटे से गाँव बेलारी का रहने वाला है। इस उपन्यास में वह भारतवर्ष के समस्त किसानों का प्रतिनिधित्व करता है। वह गाँव का सीधा-सादा, निहायत ईमानदार, गरीबी-भुखमरी की स्थिति में भी घोर दृढ़ इच्छा शक्ति रखने वाला इंसान है। होरी के पास कुल मिलाकर पाँच बीघा जमीन है, जिस पर खेती करके किसी तरह वह अपने परिवार का गुजर-बसर करता है। होरी आर्थिक अभाव से बुरी तरह से ग्रस्त होने के कारण कर्ज के बोझ तले इस कदर जकड़ चुका है, कर्ज के चक्रव्यूह में ऐसे फँस चुका है की चाह कर भी वहाँ से नहीं निकाल पाता और कर्ज का बोझ लिए हुए ही वह यह संसार छोड़ देता है। भारत के हर किसान की तरह उसकी भी एक चाहत होती है कि वह अपने दरवाजे के खूँटे पर गाय पाले, लेकिन वह इतनी ईमानदारी और कर्मठता से काम करने के बावजूद एक गाय खरीदने की हैसियत नहीं जुटा पाता है।

होरी के चरित्र की दो खासियत है - वह अपनी भयावह गरीबी में भी दृढ़, इच्छाशक्ति और कर्म के प्रति अपने जुनून को कम नहीं होने देता और निरंतर जी जान से प्राणान्तक परिश्रम करता है। उसके जीवन की विपरीत परिस्थितियाँ उसे एक किसान से मजदूर बना कर रख देती हैं फिर भी वह हिम्मत नहीं हारता है। उसके स्वभाव में कुछ दुर्गुण भी हैं कि वह स्वार्थी है, अपने फायदे के लिए झूठ बोलता है। मसलन, अन्य किसानों की तरह रुई में बमैले मिला देना, सन को गीला कर देना, बांस बेचते समय कुछ पैसों के लिए अपने भाई के हिस्से को मारने के लिए बंसोर से सौदा करना, अपनी छोटी पुत्री रूपा का विवाह बूढ़े व्यक्ति

रामसेवक से करना ताकि अमीर दामाद से रुपए लेकर अपनी जमीन बचा सके। इस तरह के कुछ उदाहरण उसके स्वभाव की दुर्गुणता को दर्शाते तो हैं, लेकिन कहीं न कहीं उसकी ये बुराइयाँ उसके आर्थिक मजबूरियों के कारण वश ही हैं। अगर वह आर्थिक जर्जरता का शिकार नहीं होता तो शायद यह दुर्गुण उसके व्यक्तित्व से नहीं जुड़े होते।

होरी भाग्यवादी धर्मभीरु, व्यवहार कुशल, पुरानी परंपराओं, मान्यताओं, संस्कारों और रूढ़ियों में भी जकड़ा हुआ है। वह समाज और बिरादरी के नियमों से भी डरता है तभी तो जब झुनिया के प्रसंग में पंचायत उसको दंडित करती है तो वह हुक्का पानी न बंद हो, इसलिए वह अपने आपको घोर संकट में डाल कर भी पंच का जुर्माना भरता है लेकिन बिरादरी और पंचों के विरुद्ध में कुछ नहीं करता। वह जहाँ पंचों गांव-बिरादरी के लोगों की हर माँग को अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बचाने के लिए सिर - आंखों पर ले लेता है। वहीं अपने बेटे गोबर और झुनिया के अन्तर्जातीय विवाह को स्वीकृति देता है ताकि झुनिया और उसके बच्चे की जान बच सके। यदि गर्भवती झुनिया को होरी नहीं बचाता तो झुनिया तमाम दबावों के कारण आत्महत्या कर लेती। यही नहीं उसने निराश्रित सिलिया को भी अपने घर में शरण दी। हालाँकि झुनिया और सिलिया को अपनाने के लिए होरी की पत्नी ने उसको बहुत समझा-बुझाकर उसपर दबाव बनाया था। परन्तु होरी पुरुष प्रधान समाज से संबंध रखता है, वह चाहता तो पत्नी धनिया की बात को पुर्णत: नकार सकता था।

होरी के जीवन की एकमात्र अभिलाषा थी कि वह एक गाय अपने लिए खरीदे। दरवाजे पर गाय का खूँटे पर बँधे रहना उसके लिए बहुत प्रतिष्ठा की बात थी। अपनी इस आकांक्षा को पूरी करने के लिए वह भोला को बहला-फुसलाकर उसकी गाय अपने दरवाजे पर बांधने लगता है। पत्नी झुनिया इसका विरोध करती है, परन्तु इस मामले में वह किसी की परवाह नहीं करता। उसका सगा भाई हीरा इर्ष्यावश गाय को जहर देकर मार देता है और होरी के जीवन की सबसे बड़ी इच्छा, इच्छा बनकर ही रह जाती है। यह उसके जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी है जिसके बाद वह न शान्ति से जी पाता है, और न ही चैन से मर पाता है। वह आजीवन गाय पालने की अभिलाषा पूरी नहीं कर पाता और उसकी मृत्यु के समय उसका वही भाई हीरा, धनिया को होरी से गोदान करवाने के लिए कहता है जिसने कभी ईष्यावश उसके दरवाजे पर बँधी गाय को जहर देकर मारा था और खुद फरार हो गया था। अपने भाई के फरार होने के बाद होरी पुनिया-भाई के परिवार को पुलिस से बचाता है, उनके खेती-बाड़ी की देखभाल करता है और अपनी स्थिति की परवाह न करते हुए भी भाई के परिवार के इज्जत-आबरु, मान मर्यादा का ख्याल रखता है। उनको भूखों मरने - बिलबिलाने से बचाता है। इन दृष्टान्तो से यह शत-प्रतिशत समझा जा सकता है कि होरी की मनुष्यता का प्रमाण देने वाली अनेक घटनाएं गोदान में घटित होती हैं, जो उसके चरित्र के विषय में यह बताती है कि वह धीरोदात्र गुणों से संपन्न कोई नायक नहीं है बल्कि वह भारतीय किसानों की साधारण छवि से युक्त उनका प्रतिनिधित्व करने वाला पात्र हैं, जिनकी समाज में एक अलग पहचान है, अलग-अस्तित्व है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि असीम धैर्यवान, दृढ़ इच्छाशक्ति संपन्न होरी एक ऐसा पात्र है जो खुद संकट से घिरा होने के बावजूद निराश्रितों, असहायो को शरण देता है, उन्हें संभालता है। स्थितप्रज्ञ होकर सभी विकटतम परिस्थितियों का सामना करता है। अपने जीवन में वह जो गलतियाँ करता है, उसे स्वीकार करता है और उनको सुधारने के लिए

प्राणन्तक प्रयत्नशील रहता है, जी तोड़ मेहनत करता है । यही कारण है कि वह एक साधारण किसान होकर भी गोदान उपन्यास का अमर पात्र बन जाता है । इस संदर्भ में डॉ. रामविलास शर्मा ने होरी के बारे में लिखा है - "उपन्यास का प्रमुख पात्र होरी उपन्यासकार की अमर सृष्टि है। यह पहला अवसर है जबकि हिन्दी कथा साहित्य में किसान का चित्रण एक व्यक्ति के रूप में किया गया है ।.... होरी पेशे और व्यक्ति दोनों दृष्टियों से किसान है । उसके चरित्र का चित्रण करने में प्रेमचंद ने अपनी समस्त कला उड़ेल दी है ।" इस तरह डॉ. रामविलास शर्मा की ये उक्तियाँ दर्शाती है कि होरी प्रेमचंद की अमर सृष्टि है, प्रेमचंद के नाम के साथ-साथ होरी का स्मरण भी सदैव किया जाएगा ।

२) धनिया का चरित्र चित्रण:

धनिया उपन्यास 'गोदान' की मुख्य स्त्री पात्र है जो कथा के आरंभ से अंत तक एक गरीब जुझारु संघर्षशील किसान की पत्नी की भूमिका का निर्वाहन बखूबी करती है । इसके साथ ही साथ वह भारतीय ग्रामीण स्त्री का प्रतिनिधित्व करते हुए अपने उत्तरदायित्व को बखूबी निभाती है । धनिया भी अपने पति होरी के समान अत्यन्त संघर्षशील, परिस्थितियों का सामना डटकर करने वाली, आजीवन निर्धनता की चक्की में खुद को पीसने वाली औरत है। वास्तव में होरी उसके बिना बिल्कुल अधूरा है क्योंकि वह स्नेहमयी, कर्तव्यपरायण पत्नी और एक ममतामयी माँ की सभी जिम्मेदारियों का पालन भली-भांति करती है ।

आजीवन संघर्षों और दीनता-दरिद्रता के झेलते-झेलते धनिया अपने छत्तीस वर्ष की उम्र में ही बहुत बुढ़ीया नजर आने लगती हैं । चेहरे पर झुर्रियां पड़ चुकी हैं, बाल पक गए हैं, शरीर ढल चुका हैं । गेहुआ रंग साँवला हो चुका हैं, आंखों की रोशनी कमजोर पड़ चुकी है । शरीर में कमजोरी का एहसास होने लगा है ।

वह अपने पति के सुख-दुख में सदैव उसके साथ रहती है । लेकिन यदि उसे होरी के सीधे पन पर गुस्सा आता है तो वह उसे कुछ नहीं समझती और उसे खूब खरी-खोटी सुनाती है । वह अपने हक में, अपने परिवार की सुरक्षा न्याय और अधिकारों के हक में अक्सर होरी से या समाज एवं पंचों से कभी झुनिया के पक्ष में अपने तर्क से मुद्दों को इस तरह उठाता है ऐसे तर्क वितर्क करती है कि सामने वाला परास्त हो जाता है । हालॉकि यथार्थ के धरातल पर उसके तर्क बेबुनियाद नहीं होते हैं फिर भी गाँववाले उसे झगड़ालू स्त्री मानते हैं ।

धनिया स्वभाव से कठोर नहीं, कोमल ह्रदया स्त्री है परंतु इस सच को हमें अवश्य स्वीकार करना होगा कि उसके जीवन की विपरीत परिस्थितियों ने उसे कठोरता, कटुता की और अग्रसरित किया है । उसका पति होरी इतना दृढ़ निश्चयी नहीं है कि वह समाज, पंचो की परवाह किए बगैर दुनिया और सिलिया को अपने घर में पनाह दे सके । यह सब धनिया की वजह से ही होता है । जब धनिया को झुनिया की गर्भावस्था के बारे में पता चलता है तो वह गाँव-बिरादरी-पंचों की अवहेलना की परवाह किए बगैर अपने बेटे द्वारा गर्भवती हुई विधवा यौवना को अपनी बहू के रूप में स्वीकार करती है। अपने पति को समझा-बुझाकर भी अपने इस निर्णय में साथ ले आती है । यही नहीं पूरी दृढ़ता से पंचायत का सामना करती है और उन्हें भी उनकी औकात बताती है । वह पंचायत हो या पुलिस या फिर गाँव के सूदखोर महाजन किसी से डर कर नहीं जीती है । निडरता उसके स्वाभाविक गुण की पहचान है ।

धनिया एक भारतीय स्त्री के समस्त मानवीय गुणों से युक्त है। वह धर्मनिष्ठ, कर्तव्यनिष्ठ, सत्यवादिनी, पतीपरायण, मातृत्व भाव से ओत-प्रोत, तेजस्विनी और साहसी है। उसकी निडरता, निर्भीकता और स्पष्टवादिता के कारण सभी उसे झगड़ालू भले समझते हों, परंतु ऐसी स्त्रियों को यह समाज लड़ाकू औरत से अधिक कुछ समझ भी नहीं सकता है। पुरुष प्रधान समाज में स्त्रियों के गुण जल्दी से स्वीकार नहीं किए जाते हैं।

होरी जब धनिया को पूरे गांव के सामने मारता है तो वह उससे से बहुत नाराज होती है लेकिन पति के बीमार होते ही अपनी सरेआम हुई बेइज्जती को भूलकर उसकी सेवा सुश्रुषा में जुट जाती है।

वह अपने देवर हीरा के व्यवहार से बहुत क्षुब्ध होकर उसे देखना तक नहीं चाहती है परंतु जब हीरा घर छोड़ कर भाग जाता है और उसका परिवार दुख में होता है तब अपने पति होरी द्वारा उनकी मदद करने, उन्हें सम्हालने में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करती, बल्कि उसका साथ देती है। धनिया बाहर से इस्पात जैसी कठोर पर भीतर से मौम जैसी मुलायम है।

इस प्रकार धनिया के संपूर्ण व्यवहार और उसके आचार -विचार को देखकर निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद ने धनिया के चरित्र को अत्यन्त कुशलता से गढ़ा है जो उपन्यास को और अधिक जीवन्तता, सजीवता और यथार्थता प्रदान करती है। यही नहीं प्रेमचंद के साथ-साथ जैसे होरी अमर हो गया है वह ठीक वैसे ही धनिया भी इसी उपन्यास की एक कभी न विस्मृत होने वाली अमर पात्र है।

३) गोबर का चरित्र चित्रण:

गोबर होरी और धनिया का एकलौता पुत्र है। वह उपन्यास में नई पीढ़ी के प्रगतिशील चेतनायुक्त किसानों का प्रतिनिधित्व करता है। उसे अपने पिता का जमींदार रायसाहब की खुशामद करने बार-बार जाना अच्छा नहीं लगता है क्योंकि वह शोषक जमींदारों पूँजीपतियों की शोषण प्रवृत्ती को भली-भाँती समझता है। शोषकों की चालाकी, धूर्तता और स्वार्थी नियत के रग-रग से वाकिफ है गोबर। वह अच्छी तरह से जानता है कि कौन कितना धर्मात्मा और पुण्यात्मा है।

उसके अन्दर विद्रोह की आग है, व्यवस्था के प्रति असंतोष है। वह व्यवस्था बदलना चाहता है, लेकिन वह यह नहीं समझ पाता कि कैसे बदलना है। जमींदार, साहूकार और उनके गुर्गों द्वारा किए जाने वाले शोषण, अत्याचार का प्रतिकार किस प्रकार करें कि इन तमाम दीमकों, जोकों को व्यवस्था से समूल नष्ट कर सकें, वह इसे नहीं समझ पाता है। वह अनेक बार अपने सीधे-सादे, दब्बू पिता को इस बाबत समझाता भी है, उन्हें सजग जागरूक करता है, शोषकों के सच से पिता को आगाह करता है। गोबर झुनिया से प्रेम करता है तो उसे बखूबी निभाता भी है। झुनिया एक विधवा लड़की है, ऊपर से वह दूसरी जाति - बिरादरी की। फिर भी उसके गर्भधारण की खबर सुनने के बाद गोबर किसी की परवाह किए बगैर उसे अपने घर ले आता है, लेकिन वह अपने माता-पिता का लिहाज करने के कारण उनका सामना करने की हिम्मत नहीं जुटा पाता है। वह घर के बाहर खड़े रहकर अपनी माँ और झुनिया की बातचीत सुनता है और माँ द्वारा उसे अपना लिए जाने पर वह आश्वस्त

होता है। झुनिया को अपनाने के बाद उसका परिवार बिरादरी और पंचायत के दंड से इस तरह जर्जर हो जाता है कि गोबर यह सोचने पर विवश हो उठता है कि गाँव में रात-दिन खेतों में काम करने के बावजूद दो जून की रोटी शान्ति से मयस्सर नहीं, गाँव की खेती-बाड़ी से उसका मोहभंग होता है और वह शहर जाकर मेहनत मजदूरी करने, धन कमाने, परिवार की स्थिति सुधारने के उद्देश्य से गाँव से पलायन करता है। गोबर की यह आपबीती भारतदेश के अधिकांश युवाओं की आपबीती है। गोबर देश के अन्य युवाओं की तरह पैसे वाला बनना चाहता है। शहर में नौकरी मिलने के बाद वह अपनी झुनिया को अपनी माँ से तर्क-वितर्क करके अपने पास ले आता है। हालाँकि वह शहर आकर बुरी लत का शिकार होता है, ताड़ी के नशे में पत्नी झुनिया को पीटता है, गर्भावस्था में उसके स्वास्थ्य को बिल्कुल नजरअंदाज करता है। झुनिया को गोबर का यह रूप बिल्कुल नहीं पसंद है फिर भी वह एक पत्नी की भूमिका को भली-भाँति निभाती है। गोबर जब मिल की हड़ताल में लाठी खाने के कारण बुरी तरह घायल होता है तो झुनिया इस कदर इतनी तत्परता से उसकी सेवा सुश्रुषा करती है कि उसके बाद गोबर की सोच में काफी परिवर्तन आता है। वह झुनिया के प्रति विनम्र हो जाता है।

गोबर शहर में आने के बाद थोड़ा स्वार्थी बन जाता है। शायद शहर ने उसे ऐसा बनने पर विवश कर दिया है। वह अपने माता-पिता को एक पैसे का आर्थिक सहयोग नहीं कर पाता। पिता दो-दो बेटियों के ब्याह और कर्ज से सिर तक डूबे हुए हैं, लेकिन वह अपनी ही समस्या में घिरा है। यह बात पाठक वर्ग को थोड़ी खटकती है। हालाँकि मेहनत मजदूरी करके शहर में परिवार का किसी तरह गुजारा कर के गोबर द्वारा अपने पिता को सहयोग कर पाना भी संभव नहीं था, लेकिन बाद के दिनों में वह परिवार गांव छोड़कर जाता है और घर की स्थिति को संभालने का प्रयत्न भी करता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि गोबर आधुनिक युग के युवा किसानों, श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने वाला प्रगतिशील विचारों वाला नवयुवक है।

४) प्रोफेसर मेहता का चरित्र चित्रण:

प्रोफ़ेसर मेहता के चरित्र के संबंध में डॉ. रामविलास शर्मा का विचार है कि यदि होरी और प्रो. मेहता के चरित्र को मिला दिया जाए तो प्रेमचंद का अपना व्यक्तित्व बन जाएगा। प्रोफ़ेसर मेहता को प्रेमचंद ने अपने विचारों का प्रवक्ता बनाया है। आलोचकों समीक्षकों ने उनमे स्वयं प्रेमचंद के व्यक्तित्व की झलक पाई है क्योंकि 'गोदान' उपन्यास में प्रेमचंद अपने विचारों द्वारा जो कुछ कहना चाहते थे, उसे उन्होंने प्रो. मेहता के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। मेहता प्रेमचंद के विचारों के संवाहक हैं।

प्रोफेसर मेहता उपन्यास में बुद्धिजीवी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर हैं। वे अविवाहित हैं। जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह के मित्रों में से एक है। हालाँकि मेहता जी का चरित्र राय साहब के चरित्र से बिल्कुल विपरीत है। इसके पीछे का कारण यह है कि रायसाहब की कथनी और करनी में रत्ती भर भी समानता नहीं है। वे कहते कुछ हैं और करते कुछ और हैं परंतु मेहता जी ठीक इसके उलट हैं। वे कथनी और करने की समानता-एकरूपता में विश्वास करने वाले हैं।

मेहता जी किसी भी तरह के शोषण के घोर विरोधी हैं, गरीबों के प्रति सहानुभूति रखने वाले व्यक्ती हैं। वे समाजहित में बहुत तत्परता-तल्लीनता से कार्य करते हैं। उनकी उदारता और सहृदयता के कारण ही अनेक निर्धन विद्यार्थी उन्हीं के पैसों से शिक्षा प्राप्त करते हैं। वे सदैव समाज कल्याण के लिए तत्पर रहने वाले, सेवाभाव रखने वाले सच्चे आदर्शवादी इंसान हैं।

प्रो. मेहता का मानना है कि इस समाज के तमाम छोटे-बड़े के भेद को कदापि समाप्त नहीं किया जा सकता है, कारण यह है कि यह अंतर सिर्फ आर्थिक आधार पर नहीं है अपितु बुद्धि, रूप, चरित्र, शक्ति, प्रतिभा आदि अनेक ऐसे कारण हैं जिससे समाज से दो वर्गों के भेद को समाप्त नही किया जा सकता है। वे यह मानते हैं कि हमेशा से बुद्धि राज करती आई है इसलिए इन अंतरों को मिटा पाना संभव नहीं।

मि. मेहता आकर्षक व्यक्तित्व के धनी हैं। स्वभाव से जिंदादिल, स्पष्ट वक्ता, हँसी-मजाक करने वाले, प्रत्येक मुद्दे पर अपनी बेवाक स्पष्ट राय-परामर्श रखने वाले, अत्यंत निर्भीक व्यक्ती हैं। स्त्रियों के विषय में उनकी धारणा यह है कि स्त्रियों को पश्चिमी अंधानुकरण कदापि नहीं करना चाहिए बल्कि उन्हें भारतीय संस्कृति में वर्णित आदर्श गुणों को आत्मसात करना चाहिए क्योंकि इसी से भारतीय जीवन मूल्यों की रक्षा हो सकती है। पश्चिमी अंधानुकरण से भारतीय जीवन मूल्य, भारतीय संस्कृति ध्वस्त होकर धराशायी हो जाएगा।

इस प्रकार प्रोफेसर मेहता एक आदर्शवादी चरित्र हैं, बुद्धिजीवी वर्ग के पात्र हैं, प्रत्येक मुद्दे पर अपनी स्वतंत्र धारणा, स्वतंत्र विचार रखते हैं। स्त्रियों के विषय में उनके विचार परम्परावादी है। जीवन में दिखावेबाजी, नुमाइशी के विरोधी हैं, नकली जिन्दगी के विरोधी है। इसलिए वे राय साहब जैसे लोग जो गिरगिट की तरह रंग बदलते हैं, रंग सियार हैं, उनको बखूबी फटकारते हैं। मेहता जी के व्यक्तित्व की एक खासियत और है कि उनके स्वभाव से सभी लोग प्रभावित होते हैं। डॉ. मालती का हृदय परिवर्तन, जीवन परिवर्तन, प्रो. मेहता के व्यक्तित्व के प्रभाव से ही संभव हो सका, जिसने मिस मालती के जीवन के उद्देश्य को ही बदल कर रख दिया है। इस प्रकार प्रो. मेहता निश्चित रूप से 'गोदान' उपन्यास के एक आदर्शवादी पात्र के रूप में पाठकों पर अपनी अमिट छाप छोड़ते हैं।

५) रायसाहब अमरपाल सिंह का चरित्र-चित्रण:

'गोदान' उपन्यास में रायसाहब अमरपाल सिंह जमींदार वर्ग अर्थात शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे अवध प्रांत में सेमरी ग्राम के जमींदार हैं, कौंसिल के सदस्य हैं, कुशल वक्ता हैं, सभा चतुर होने के साथ-साथ राष्ट्रवादियों से भी संपर्क रखते हैं और अंग्रेज हुक्मशनों और अंग्रेज अधिकारियों को भी प्रसन्न रखते हैं। रायसाहब खुद को किसानों का शुभेच्छुक मानते हैं परन्तु उन पर लैसमात्र भी रियासत नहीं करते। वे अपने अनाप-शनाप खर्चों की भरपाई करने के लिए निरंतर किसानों का शोषण करते हैं, नजराने लेते हैं, बेगार लेते हैं, इजाफा लगान वसूल करते हैं, उन्हें कोड़े से पिटवाने की धमकी देते हैं। वे वास्तव में एक क्रूर, निर्दय, स्वार्थी जमींदार है। वह कम्यूनिस्टों की तरह बातें तो करते हैं, परंतु उनका जीवन भोग-विलास से युक्त, स्वार्थ से भरा हुआ है। राय साहब की कथनी और करनी में तनिक भी एकरूपता व समानता नहीं। वे कहते कुछ हैं, करते कुछ और हैं। वे

विचारों से प्रगतिशील दिखाई देते हैं, परंतु कार्य से प्रतिक्रियावादी हैं। राय साहब के सिद्धांत और व्यवहार में भी भारी अंतर है।

गोदान के राय साहब उपन्यास में दो तरह की भूमिका निभाते हैं। एक तरफ वे जमींदारों का प्रतिनिधित्व करते हैं, पतनोन्मुख हो चुकी सामंती व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करते हैं तो वहीं दूसरी तरफ वे गोदान की दोनों कथाओं - ग्रामीण कथा और शहरी कथा को जोड़ने वाले सेतु की भूमिका का निर्वाहन भी करते हैं। रायसाहब मीठा-मीठा बोल कर अपना काम निकालने में माहिर हैं। उपन्यास का मुख्य पात्र होरी उनका प्रशंसक है परन्तु उसका बेटा गोबर चुँकि रायसाहब का असली रूप पहचानता है इसलिए वह उनसे घृणा करता है। रायसाहब धर्मात्मा, पुण्यात्मा बनने की खातिर घंटो पूजा पाठ करते हैं परंतु गरीबों - किसानों – श्रमिकों का खून चूसने के बाद सब कुछ व्यर्थ है। रामनामी चादर ओड़कर जनता का शोषण करना, मुफ्तखोरी की आदतें, भोग-विलास का नशा ये तमाम वे मुद्दे हैं जो रायसाहब के पुरुषार्थ को नष्ट करते हैं। हालाँकि रायसाहब अनेक स्थानों पर अनेक पात्रों से बतौर जमींदार अपनी लाचारी-मजबूरी-विवशता का राग अलाप चुके हैं, रोना रो चुके हैं और अपनी यह इच्छा बता चुके हैं कि अब जमीदारी प्रथा का अंत होना चाहिए। उन्हें जमीदारी प्रथा का अवसान समीप ही दिख रहा है। समय के बदलते दौर को देखकर वे समझ चुके हैं कि अब यह जमींदरी अधिक दिनों तक नहीं चलने वाली है।

समग्रत: यह कह सकते हैं कि राय साहब प्रेमचंद के अमर पात्रों में से एक प्रभावशाली पात्र है। उपन्यासकार प्रेमचंद ने रायसाहब के चरित्र को इस रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है कि वे उपन्यास के खल पात्र होते हुए भी खलपात्र प्रतीत नहीं होते हैं।

६) मालती का चरित्र:

मालती 'गोदान' में शिक्षित स्त्री वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली आधुनिक विचारों वाली नवयुवती है। वह इंग्लैंड से मेडिकल की पढ़ाई पढ़ कर डॉक्टर बन कर आई है। उच्च वर्ग के उँचे घर-घरानों, लोगों के बीच उसका उठना बैठना अधिक है, गरीबों से आमना-सामना न के बराबर होता है।

मालती अत्यंत सुंदर होने के साथ-साथ बहुत बुद्धिमती भी है। उसकी तार्किकता अकाट्य है। वह अपने पारिवारिक दायित्वों का निवर्हन बखुबी करती है। पिता के अपाहिज हो जाने के बाद दो छोटी बहनों, सरोज और वरदा के भरण-पोषण, शिक्षा-दीक्षा से संबंधित जिम्मेदारियाँ अपने कंधे पर लेती है। यही नहीं पता कि रईसों जैसी शराब कबाब की बिगड़ी आदतों पर झुझलाते हुए भी उन्हें सहन करके संभालती है।

धनाढ्य उद्योगपति खन्ना साहब मालती को अपनाना चाहते हैं, परन्तु वह व्यक्ति के धन को नगण्य समझते हुए उसके चारित्रिक गुणों को अधिक महत्व देती है। यही कारण है कि वह उद्योगपति खन्ना के ऑफर को ठुकरा देती है। वह प्रो. मेहता के व्यक्तित्व के प्रति आकृष्ट होती है। प्रो. मेहता के संपर्क में आने के बाद उसके जीवन की दशा, दिशा एवं उद्देश्य ही बदल जाता है। वह सेवा, त्याग की प्रतिमूर्ति बन जाती है। अब जब प्रो. मेहता उसके समक्ष विवाह प्रस्ताव रखते हैं तो वह उसे स्वीकार नहीं करती बल्कि आजीवन उनकी मित्र बनकर रहती है।

उपन्यास 'गोदान' में हमें मालती के तीन रूप दिखाई देते हैं - तितली रूप, मानवी रूप और देवी के रूप में। एक तितली के रूप में वह पाश्चात्य रंग में रंगी हुई, मनोरंजन भोग - विलास – आमोद - प्रमोद में डूबी रहने वाली, रसिक पुरुषों के बीच बैठकर शराब पीने-पिलाने वाली और अपने रूप-रंग की प्रभा बिखेरने वाली अत्याधुनिक विचारों वाली नवयौवना है। वह पुरुष - मनोविज्ञान की अच्छी जानकार, मेकअप में प्रवीण, गजब की हाजिर जवाब, लुभाने-रिझाने की कला में निपुण लड़की है।

प्रो. मेहता के संपर्क में आने के बाद उसका तितली रूप तिरोहित हो जाता है और वह मधु संचित करने वाली मधुमक्खी बनती जा रही है। वह उन्हें चाहती है उनके और अपने बीच किसी और की उपस्थिति उसे स्वीकार नहीं। वह मेहता जी से विवाह करना चाहती है, परन्तु उनके साथ रहते-रहते उनके विचारों से प्रभावित होकर उसके विचारों में, जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन होता है। वह ग्रामीणों, गरीबों, जरूरतमंदों की सेवा-सहायता करने में पूरी तल्लीनता के साथ डूबती चली जाती है। मेहता जी के विवाह प्रस्ताव को अस्वीकार करके परमार्थ को ही अपने जीवन का उद्देश्य बना लेती है। यहां मालती के समक्ष प्रो. मेहता का चरित्र बौना नजर आता है। प्रेमचंद ने तितली सी विलासिनी मालती के व्यक्तित्व का मानवीयता के ऐसे चरण शिखर तक पहुँचा दिया हैं, जहाँ पहुँचने के बाद यह समस्त संसार के अन्याय, शोषण, अत्याचार, आतंक, भय, अंधविश्वास जैसे अनगिनत समस्याओं के समाधान हेतु आत्मत्सर्ग कर देती है, समाज हित में अपना सब कुछ अर्पित कर देती है। मालती का हृदय परिवर्तन एवं चारित्रिक विकास अनायास एक दिन में ही नहीं हुआ हैं बल्कि यह उत्तरोत्तर धीरे-धीरे विकसित हुआ है। इसलिए यह विश्वसनीय है। इस प्रकार कह सकते हैं कि मालती का चरित्र एक गत्यात्मक चरित्र है। प्रेमचंद ने इस चरित्र को यथार्थ से आदर्श की ओर उन्मुख किया है।

२.३ सारांश

सारांश के रूप में कहा जा सकता है कि 'गोदान' उपन्यास के ये मुख्य पात्र अपने-अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनके चारित्रिक गुण-दोषों का चित्रण करते समय प्रेमचंद ने इनके वर्ग-विशेष की सुक्ष्म से सुक्ष्मतम बातों को भी अत्यन्त उत्कृष्टता से व्यक्त किया है। अपने पात्रों की योजना करते समय उपन्यासकार के मानवीय मूल्यों, जीवन मूल्यों, नैतिक मूल्यों को सदैव ध्यान में रखा है। किसानों-श्रमिकों के प्रति इनके हृदय में गहरी संवेदना, सहानुभूति और सहृदयता की भावना विद्यमान रही, जो उनके इस उपन्यास में द्रष्टत्य है। वे अपने पात्रों को एक मनुष्य के समस्त मानवीय गुण-दोषों के साथ प्रस्तुत करते हैं। खलपात्र के गुणों को उताना ही महत्त्व देते हैं, जितना कि मुख्य पात्र के गुणों को चित्रांकित करते हैं। वे उपन्यास में छोटे-से-छोटे पात्र के संपूर्ण व्यक्तित्व को भी बड़े ध्यान से, सुक्ष्मता से दर्शाते हैं ताकि ये सभी पात्र अपनी समस्त विशिष्टताओं के साथ हमारे समक्ष प्रस्तुत हो सकें।

निष्कर्षता: कहा जा सकता है कि उपन्यास में लगभग ७० पात्र है। गोदान के प्राय: अधिकांश पात्र अपने-अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे व्यक्ति चरित्र होते हुए भी समुह चरित्र लगते हैं। गोदान उपन्यास के इन सभी पात्रों का गहन अध्ययन करने के उपरांत यह बहुत सहजता से कहा जा सकता है कि प्रेमचंद मानव-स्वभाव के सच्चे पारखी हैं, वे

मनोविज्ञान की गहरी समझ रखते हैं। अपनी लेखनी से उन्होंने गोदान के सभी पात्रों को अमरता प्रदान की है।

२.४ वैकल्पिक प्रश्न

प्र.१ गोदान का मुख्य पात्र कौन है?

क) होरी ख) हीरा

ग) दातादीन घ) खन्ना साहब

उ. क) होरी

प्र.२ होरी किसका ब्याह अधेड़ उम्र के व्यक्ति से करता है?

क) सोना ख) रूपा

ग) झुनिया घ) सिलिया

उ. ख) रूपा

प्र.३ यह किस समीक्षक का मानना है कि प्रेमचंद के साथ-साथ होरी भी अमर हो चुका है?

क) पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी ख) प. हजारी प्रसाद द्विवेदी

ग) डॉ. रामविलास शर्मा घ) डॉ. नगेन्द्र

उ. ग) डॉ. रामविलास शर्मा

प्र.४ गोदान का होरी किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है?

क) पुँजीपति ख) किसान

ग) बुद्धिजीवी घ) जमींदार

उ. ख) किसान

प्र.५ गोदान के प्रोफेसर मेहता किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है?

क) पुँजीपति ख) किसान

ग) बुद्धिजीवी घ) जमींदार

उ. ग) बुद्धिजीवी

प्र.६ गोदान के रायसाहब अमरपाल सिंह किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है?

क) पुँजीपति ख) किसान

ग) बुध्दिजीवी घ) जमींदार

उ. घ) जमींदार

munotes.in

प्र.७ गोदान की डॉक्टर मालती किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है?

क) आधुनिक शिक्षित स्त्री ख) उद्योगपति

ग) परम्परावादी स्त्री घ) नेता

उ. क) आधुनिक शिक्षित स्त्री

प्र.८ मेहता जी किस विषय के प्रोफेसर है?

क) गणित ख) इतिहास

ग) भूगोल घ) दर्शनशास्त्र

उ. घ) दर्शनशास्त्र

प्र.९ राय साहब, अमरपाल सिंह किस गाँव के जमींदार है?

क) सेमरी और बेलारी ख) ददरा

ग) नगवां घ) बेलहरी

उ. क) सेमरी और बेलारी

प्र.१० मालती कहाँ से डॉक्टर की पढ़ाई करती है?

क) दिल्ली ख) कोलकाता

ग) अमेरिका घ) इंग्लैंड

उ. घ) इंग्लैंड

२.५ लघु उत्तरीय प्रश्न

प्र.१ प्रेमचंद ने प्रोफ़ेसर मेहता के चरित्र को किस रूप में हमारे समक्ष रखा है?

उत्तर: प्रेमचंद ने प्रोफ़ेसर मेहता का आदर्शवादी रूप हमारे समक्ष रखा है।

प्र.२ होरी और धुनिया के बच्चों का नाम क्या है?

उत्तर: गोबर ,सोना और रूपा उसके तीन बच्चे हैं।

प्र.३ धुनिया की स्पष्टवादीता और तार्किकता के कारण गांव वाले उसे क्या समझते हैं?

उत्तर: गांव वाले धुनिया को लड़ाकू या झगड़ालू समझते हैं।

प्र.४ गोबर किस तरह की लड़की से प्रेम करता है?

उत्तर: गोबर झुनिया से, जो कि वह दूसरी जाति की एक विधवा लड़की है, प्रेम करता है।

nnunotes.in

प्र.५ उपन्यास गोदान में शोभा और हीरा कौन है?

उत्तर: शोभा और हीरा दोनों होरी के सगे भाई हैं।

प्र.६ गोबर किससे और क्यों घृणा करता है?

उत्तर: गोबर राय साहब जैसे शोषको अत्याचारियों की शोषण करने की प्रवृत्ति से भली भांति परिचित है, इसलिए वह उनसे घृणा करता है।

प्र.७ गोबर शहर में घायल क्यों होता है?

उत्तर: गोबर मिल हड़ताल में लाठी खाने के कारण बुरी तरह घायल होता है।

प्र.८ उपन्यास 'गोदान' में मालती का स्वरूप बाद के दिनों में किस रूप में दिखाई देता है?

उत्तर: मिस मालती बाद के दिनों में देवी रूप में दिखाई देती है। उनका जीवन जरूरतमंदों गरीबों की दिनों की सहायतार्थ समर्पित हो चुका है।

प्र.९ मिस मालती किस के व्यक्तित्व से प्रभावित होती है?

उत्तर: वह प्रोफ़ेसर मेहता के व्यक्तित्व से प्रभावित होती है।

प्र.१० गोदान की कथा में ग्रामीण परिवेश और शहरी परिवेश की कथा को जोड़ने वाला सेतू कौन है?

उत्तर: रायसाहब अमरपाल सिंह और गोबर शहर और गांव की कथा को जोड़ने वाले सेतु के रूप में उभर कर आते हैं।

२.६ बोध प्रश्न

प्र.१ 'गोदान' का मुख्य पात्र कौन है? उसके चरित्र पर प्रकाश डालिए।

प्र.२ 'गोदान' की मुख्य स्त्री पात्र कौन है। उसके चरित्र को अपने शब्दों में लिखिए।

प्र.३ प्रोफ़ेसर मेहता के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

प्र.४ 'गोदान' उपन्यास की मिस मालती का चरित्र चित्रण कीजिए।

प्र.५ होरी और धनिया के चरित्र पर प्रकाश डालिए।

प्र.६ होरी और गोबर के चरित्र में क्या अंतर है? उदाहरण सहित लिखिए।

प्र.७ धनिया की सदाशयता व उदारता को रेखांकित कीजिए।

प्र.८ राय साहब का चरित्र-चित्रण कीजिए।

प्र.९ गोबर के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।

प्र.१० गोदान उपन्यास की पात्र-योजना पर प्रकाश डालिए।

munotes.in

२.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१. प्रेमचंद और उनका युग - रामविलास शर्मा

२. साहित्य का उद्देश्य – प्रेमचंद्र

३. प्रेमचंद्र - डॉ. सत्येंद्र (सं.)

४. प्रेमचंद का संघर्ष - श्री नारायण पांडेय

५. कलम का मजदूर - मदन गोपाल

६. कलम का सिपाही - अमृतराय

७. कलम का मजदूर : प्रेमचंद्र - राजेश्वर गुरू

८. कलाकार प्रेमचंद - रामरतन भटनागर

९. कुछ विचार - प्रेमचंद

१०. गोदान : एक पुनर्विचार - परमानंद श्रीवास्तव

११. गोदान, नया परिप्रेक्ष्य - गोपाल राय

१२. साहित्य का भाषा चिंतन – सं. वीणा श्रीवास्तव

१३. प्रेमचंद – सं. सत्येंद्र ('प्रेमचंद में संकलित डॉ. त्रिभुवन सिंह का निबंध आदर्शोन्मुख यथार्थवाद')

१४. प्रेमाश्रम – प्रेमचंद

१५. प्रतिज्ञा - मुंशी प्रेमचंद

*****

munotes.in

३

प्रेमचंद कृत गोदान : कथोपकथन / संवाद

इकाई की रूपरेखा

३.० इकाई का उद्देश्य

३.१ प्रस्तावना

३.२ गोदान: कथोपकथन / संवाद

३.३ सारांश

३.४ वैकल्पिक प्रश्न

३.५ लघूत्तरीय प्रश्न

३.६ बोध प्रश्न

३.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

३.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य है उपन्यास में निहित कथोपकथन अर्थात् संवाद के विषय में विस्तृत रूप से बताना । उपन्यास में कथोपकथन के माध्यम से ही पात्र अपने भावों, विचारों, संवेदनाओं और अपने मन की बातों को एक दूसरे के समक्ष प्रकट करते हैं। विचारों का आदान-प्रदान करते हैं जिससे कथानक को गति प्राप्त होता है, नाटकीयता आती है और वह रचना रोचक हो जाती है। इस इकाई में इन तत्वों की विस्तृत चर्चा की गई है।

३.१ प्रस्तावना

कथोपकथन वह माध्यम है जिससे किसी भी रचना में नाटकीयता का दृश्य तैयार होता है, उपन्यास को कथावस्तु को गति मिलती है, भिन्न-भिन्न चरित्रों कें मन की भावों को वाणी मिलती है जिससे उनका चरित्र उद्घाटित होता है । बिना संवाद के पात्रों के भावों-विचारों और संवेदनाओं की अभिव्यक्ति कदापि संभव नहीं है। इसलिए इस इकाई के अन्तर्गत यह बताने की कोशिश है कि उपन्यास के लिए संवाद या कथोपकथन का क्या महत्त्व है और गोदान में संवाद या कथोपकथन को किस प्रकार समायोजित किया गया है।

हम इस तथ्य से वाकिफ हैं कि उपन्यास की कथा ग्रामीण और शहरी परिवेश दोनों धरातल पर समानान्तर गति से चलती है। अत: दोनों परिवशों के पात्रों का संवाद भिन्न-भिन्न शैली में होगा । विषयानुकूल, प्रसंगानुकूल, पात्रानुकूल, स्थानानुकूल भाषाशैली के माध्यम से उपन्यास का कथोपकथन गोदान को शिखर तक ले गया है।

munotes.in

३.२ गोदान : कथोपकथन / संवाद

'गोदान' उपन्यास प्रेमचंद कृत एक वृध्द उपन्यास है। इसका वर्ण्य विषय अत्यन्त विस्तृत है। इसकी व्यापकता को ध्यान में रखते हुए इसे कृषक जीवन का महाकाव्य कहा गया है। डॉ. गोपाल राय की मान्यता है कि "गोदान ग्राम जीवन और कृषि संस्कृति को उसकी संपूर्णता में प्रस्तुत करने वाला अद्भुत उपन्यास है अत: इसे ग्राम जीवन और कृषि संस्कृति का महाकाव्य कहा जा सकता है।

जब किसी भी रचना को महाकाव्य की संज्ञा से विभूषित किया जाता है तो जाहिर-सी बात है कि वह रचना प्रत्येक दृष्टि से श्रेष्ठ होगी। कथावस्तु, पात्र-योजना, देशकाल वातावरण, समस्या एवं उद्देश्य, कथोपकथन एंव शिल्प और भाषा शैली सभी दृष्टियों से रचना की उत्कृष्टता ही उसे सर्वश्रेष्ठ बनाती है।

'गोदान' उपन्यास का कथोपकथन इसे शिखरत्व प्रदान करता है। "गोदान में अनेक किसान पात्रों को उभारकर रखने के बदले प्रेमचंद का ध्यान केवल होरी पर केंद्रित रहा है। उसके चरित्र में उन तमाम किसानों की विशेषताएँ मौजूद हैं जो जमींदारों और महाजनों की धीमे-धीमे किन्तु बिना रूके चलनेवाली चक्की में पिसने के लिए अभिशप्त हैं।" (गोदान उपन्यास के फ्लैप से अवतरित)

उपन्यास में किसानों का शोषण अत्यंन्त चालाकी भरे अंदाज में होता है जिसमें सामंतवाद एवं पूँजीवाद आपसी समझौते से मिलजुल कर कृषकों का प्राणान्तक शोषण करते है और भोले-भाले होरी जैसे किसान सामंतों और पूँजीपतियों की इस मनोवृत्ति को समझ ही नहीं पाते है। उपन्यास में इसका चित्रण बखूबी हुआ है।

उपन्यास का प्रारम्भ उपन्यास के मुख्य कथानायक होरी और कथानायिका धनिया की गृहस्थ जीवन की मीठी नोंक-झोंक से होता है जिसमें होरी जमींदार रायसाहब से मिलने जाने की बातें अपनी पत्नी से करता है। पत्नी को होरी द्वारा रायसाहब की जी-हुरूरी बिल्कुल रास नहीं आती। इसी बात को लेकर दोनों पति-पत्नी में मीठी नोंक-झोंक होती है और धनिया, होरी की लाठी, मिरजई, जुते, पगडी और तमाखू का बटुआ क्रमश: पटकते हुए देती है। तब होरी आँखें तरेरते हुए कहता है –'क्या ससुराल जाना है, जो पाँचों पोसाक लायी है? ससुराल में भी तो कोई जवान साली-सलहज नहीं बैठी है, जिसे जाकर दिखाऊँ।

धनिया लजाते हुए जवाब देती है – ऐसे ही तो बडे सजीले जवान हो कि साली – सलहजें तुम्हें देखकर रीझ जाएँगी।

होरी कहता है – तो क्या तू समझती है, मैं बूढ़ा हो गया हूँ? अभी तो चालीस भी नहीं हुए। मर्द साठे पर पाठे होते हैं। धनिया कहती है – जाकर सीसे में मुँह देखो। तुम जैसे मर्द साठे पर पाठे नहीं होते। दूध-घी अंजन लगाने तक को तो मिलता नहीं, पाठे होंगें। तुम्हारी दशा देख-देखकर तो मैं और भी सूख जाती हूँ कि भगवान् यह बुढ़ापा कैसे कटेगा? किसके द्वार पर भीख माँगेंगे?

होरी कहता है – साठ तक पहुँचने की नौबत न आने पाएगी धनिया। इसके पहले ही चल देंगे।

धनिया कहती है – अच्छा रहने दो, मत असुभ मुँह से निकालो। तुमसे कोई अच्छी बात भी कहे तो लगते हो कोसने।"

होरी और धनिया को ये मीठी नोंक-झोंक, गिले-शिकवे उनके गृहस्थ जीवन के आत्मीय स्नेह से लेकर उनके संघर्षों को भी बखूबी दर्शाते हैं। जैसा कि आमजीवन में होता है कि छोटी-छोटी बातों में अनेक बड़ी-बड़ी बातें कहसुना दी जाती हैं, क्रिया-प्रतिक्रिया जाहिर कर दी जाती है। इसी तरह के अनेक दृष्टान्त होरी और धनिया के बीच लेखक ने दिखाया है।

होरी की गाय को जब उसका भाई हीरा जहर खिला कर मार डालता है तब पूरा घर-गाँव व्यग्र हो उठता है कि रात के अँधेरे में इतना कायरतापूर्ण कदम भला कौन उठा सकता है, इस तरह तो गाँव में किसी के पालतू जानवर सुरक्षित नहीं रह सकते हैं। इस गाय से घर वाले, दोनों बेटियाँ सोना और रूपा भी कितनी घुल मिल गई थी। गाय को जहर देकर मारने के पीछे किसका हाथ हो सकता है? इस संदर्भ में होरी अपनी पत्नी धनिया से कहता है कि उसकां पूरा शक उसके भाई हीरा पर ही है क्योंकि रात में उसने उसे गाय की नाद के पास खड़े हुए देखा था और उसके बाद से वह गायब है। होरी धनिया से यह बात किसी को नहीं बताने की जिद्द करता है लेकिन धनिया उसे छुपाना नहीं चाहती बल्कि मुजरिम को सजा दिलवाना चाहती है जबकि होरी पूरी तरह से अपने भाई हीरा के बचाव में उतर जाता है।

धनिया और होरी दोनों अपनी-अपनी जिद्द पर अड़ जाते हैं। होरी, धनिया को गाँव-घर वालों के समक्ष खूब पीटता है, अपशब्दों की बौछार करता है। उसके तीनों बच्चे बीच-बचाव करते हैं। पं. दातादीन भी इस मार-पीट को रोकने की कोशिश करते हैं। गाँववाले इकट्ठे होकर तमाशा देखते हैं। हीरा धनिया से कहता है "फिर वही बात मुँह से निकाली। तूने देखा था हीरा को माहुर खिलाते।"

'तू कसम खा जा कि तू ने

हीरा को गाय की नाँद के पास खडे नहीं देखा?'

'हाँ, मैंने नहीं देखा, कसम खाता हूँ।'

'बेटे के माथे पर हाथ रखके कसम खा।'

होरी ने गोबर के माथे पर काँपता हुआ हाथ रखकर काँपते हुए स्वर में कहा – 'मैं बेटे की कसम खाता हूँ कि मैंने हीरा को नाद के पास नहीं देखा।'

धनिया ने जमीन पर थूककर कहा – 'थूड़ी है तेरी झुठाई पर।' तूने खुद मुझसे कहा कि हीरा चोरों की तरह नाँद के पास खड़ा था। और अब भाई के पक्ष में झूठ बोलता है। थूड़ी है। अगर मेरे बेटे का बाल भी बाँका हुआ तो घर में आग लगा दूँगी। सारी गृहस्थी में आग लगा दूँगी। भगवान, आदमी मुँह से बात कहकर इतनी बेसरमी से मुकुर जाता है।'

होरी पाँव पटककर बोला - 'धनिया, गुस्सा मत दिला, नहीं बुरा होगा।'

'मार तो रहा है, और मार ले। जा, तू अपने बाप का बेटा होगा तो आज मुझे मारकर तब पानी पिएगा। पापी ने मारते-मारते मेरा भुरकस निकाल लिया, फिर भी इसका जी नहीं भरा।

मुझे मारकर समझता है, मैं बड़ा वीर हूँ। भाइयों के सामने भीगी बिल्ली बन जाता है, पापी कहीं का, हत्यारा !'

होरी और धनिया के बीच का हिंसात्मक प्रतिरोध यह दर्शाता है कि पुरुषप्रधान समाज में परिवार के विरुध्द जाकर सत्य उजागर करने और न्याय पाने की उम्मीद करने का क्या परिणाम होता है। पति होरी द्वारा पत्नी की सरेआम पिटाई सिर्फ इसलिए होती हैं क्योंकि वह गाय के हत्यारे को सामने लाना चाहती है और चूँकि वह हत्यारा हीरा, होरी का सगा भाई है इसलिए वह उसे बचाना चाहता है। प्रेमचंद ने इस पूरे प्रसंग हो इतनी जीवतंता, सजीवता और व्यावहारिकता से हमारे समक्ष रखा है कि यह पूरा दृश्य कहीं से भी काल्पनिक नहीं लगाता है। जैसा मनुष्य के साधारणत: दाम्पत्य जीवन में होता है कि पतियों का झुकाव प्राय: अपने भाई-बहनों-माता-पिता के साथ होता है, वैसा ही यहाँ भी हुआ है। हालाँकि धनिया ने हीरा को पाल-पोसकर बडा किया है। वह पहले-पहले तो इस बात पर विश्वास ही नहीं करती कि इस गाय को हीरा ने मारा है। परन्तु होरी द्वारा उसे विश्वास दिलाये जाने के बाद वह अपराधी को सजा दिलवाना चाहती है। वह दिल की बुरी कदापि नहीं। इस पूरे दृश्य का दृश्यांकन प्रेमचंद ने अत्यन्त स्वाभाविक ढंग सें किया है। उपन्यास में लेखक ने यह दर्शाया है कि आजीवन जर्जर आर्थिक दशा और विकटतम परिस्थितियों की शिकार धनिया भूख-प्यास, रोगी-बिमारी और अर्थाभाव के कारण बिना इलाज के अपने तीन-तीन बच्चों को अपनी आँखों के सामने मरते देखकर, तमाम तरह के सामाजिक, पारिवारिक, मानसिक, शोषण सहते-सहते स्वभाव से बिल्कुल रूखी और मुँहफट होतीं चली गई है। शोषण की चरम पराकाष्ठा ने उसे ऐसा बनने पर विवश कर दिया है। पूरे उपन्यास में उसके संवादों की सजीवता-जीवतंता, और स्वाभाविकता देखते ही बनती है। उपन्यास के अंत में जब होरी मरणासन्न अवस्था में है और हीरा के साथ-साथ धर्म के ठेकेदार धनिया को होरी से गोदान कराने को कहते है उस वक्त उसकी ये पंक्तियाँ उनके जीवन की संपूर्ण त्रासदी को बयान कर देती है- "महाराज, घर में न गाय है, न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है।" उसे दिन भर मेहनत करके सुतली बेचने के बाद बीस आने पैसे मिले थे, जिन्हें वह अपने पति के गोदान कराने हेतु या यूँ कह लें अंतिम संस्कार करवाने हेतु समर्पित करती है और यहीं उपन्यास गोदान का मार्मिक दुखान्त होता है।

उनके उपन्यास में दो पीढ़ी के बीच की अंतराल को, सोच-विचार और समझ में आए परिवर्तनों को भी प्रेमचन्द ने बहुत प्रभावोत्पादक अंदाज में उठाया है। हृदय से सीधे किस्म के दब्बू होरी को रायसाहब की बातें प्रभावित करती हैं। वह उनकी नुमान्दगी करते हुए, रायसाहब की समस्याओं का जिक्र जब अपने प्रगतिशील सोच-विचार वाले बेटे गोबर से करता है तो वह बिफर कर प्रतिवाद करता है – "यह सब कहने की बातें है। हम लोग दाने-दाने को मुहताज हैं, देह पर साबित कपड़े नहीं हैं, चोटी का पसीना एड़ी तक आता है, तब भी गुजर नहीं होता। उन्हें क्या, मजे से गद्दी-मसनद लगाए बैठे हैं, सैकड़ों नौकर चाकर हैं, हजारों आदमियों पर हुकूमत है। रुपए न जमा होते हों, पर सुख तो सभी तरह का भोगते हैं। धन लेकर आदमी और क्या करता है?"

'तुम्हारी समझ में हम और वह बराबर है?'

'भगवान ने तो सबको बराबर ही बनाया हैं।'

'यह बात नहीं है बेटा, छोटे-बड़े भगवान के घर से बनकर आते हैं। संपत्ति बडी तपस्या सें मिलती है। उन्होंने पूर्वजन्म में जैसे कर्म किए हैं, उनका आनन्द भोग रहे हैं। हमने कुछ नहीं संचा तो भोगें क्या?'

'यह सब मन को समझाने वाली बातें हैं। भगवान सबको बराबर बनाते हैं। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता हैं।'

'यह तुम्हारा भरम है। मालिका आज भी चार घंटे रोज भगवान का भजन करते हैं।'

'किसके बल पर यह भजन भाव और दान-धर्म होता है?'

'अपने बल पर।'

'नहीं किसानों के बल पर और मजदूरों के बल पर। यह पाप का धन पचे कैसे? इसीलिए दान-धर्म करना पडता है, भगवान का भजन भी इसीलिए होता है। भूखे-नंगे रहकर भगवान का भजन करें तो हम भी देखें। हमें कोई दोनों जून खाने को दे, तो हम आठों पहर भगवान का जाप ही करते रहें। एक दिन खेत में ऊँख गोड़ना पड़े तो सारी भक्ति भूल जाय।''

इस प्रकार होरी और गोबर, पिता और पुत्र की यह तार्किकता पूर्ण बातें यह दर्शाती हैं कि उनके जीवन का यथार्थ क्या है। आदर्श को सिर्फ आदर्श मान लेने से वह आदर्श सिद्ध नहीं हो सकता, बल्कि उसे सत्यापित करना पड़ता है कि वह आदर्श किस तरह से है। प्रेमचंद नें गोबर के माध्यम से इस तथ्य पर प्रकाश डाला है कि जीवन में भूख और दो जून की रोटी से बढ़कर कुछ नहीं, न मालिक, न ईश्वर की भक्ति, न ही इनसे संबंधित अन्य वाह्याडंबर विसंगतियाँ और विडंबनाएँ। साथ ही यह तथ्य भी उतना ही प्रमाणित होता है कि संसार में किसानों, मजदूरों, दीन-दुखियों के शोषण से बढ़कर दूसरा कोई दुष्कर्म, दुराचार, दुर्व्यवहार नहीं हो सकता है । पिता-पुत्र के बीच का यह संवाद सामंतवादी प्रथा और साम्यवादी विचारधारा की आपसी टकराहट है। यहाँ प्रेमचंद गोबर के माध्यम से वर्ग वैषम्य, वर्ग-संघर्ष, वर्ग चेतना के प्रति, शोषण की विभिन्न पद्धतियों के प्रति अपने पाठकों में जन जागृति लाना चाहते हैं।

प्रेमचंद कृषक समाज की दुखती रग से भली-भाँती परिचित हैं। वे जानते हैं कि शोषण के पहाड़ के नीचे दबे किसानों की क्या मन: स्थिति है, अब तो वह खुद को इंसान मानने से भी इंकार करने लगे हैं। अन तमाम मुद्दों पर, अपने अतीत, वर्तमान, भविष्य की बातचीत करते-करते भोला एक स्थान पर होरी से कहता है – "कौन कहता है कि हम तुम आदमी हैं। हममें आदमियत कहाँ? आदमी वह है, जिनके पास धन है, अख्तियार है, इल्म है। हम लोग तो बैल हैं और जुतने के लिए पैदा हुए हैं। उस पर एक-दूसरे को देख नहीं सकता। एका का नाम नहीं। एक किसान दूसरे के खेत पर न चढ़े तो कोई जाफा कैसे करे, प्रेम तो संसार से उठ गया।

भोला की यह पीड़ा समग्र किसानों की पीड़ा है जो खुद को उदार मानने वाले जमींदार रायसाहब, उनके कारकूनों, सूदखोर साहूकारों के शोषण की अविस्मरणीय गाथा को कहती

है । भोला के संवाद में एक तरह की बेचारगी, लाचारगी, हृदय को बेधने वाली पीड़ा द्रष्टव्य है।

गोदान में कथोपकथन या संवाद रूपी नही इतनी अविरलता से निरंतर प्रवाहित होती रहती है कि पाठक वर्ग को इस बात की अनुभूति ही नहीं होती कि वे कोई उपन्यास पढ़ रहे हैं बल्कि उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि वे पूरे दृश्य का आँखों देखा हाल देख रहे हैं या इस तरह की घटनाएँ उनके आस-पास ही कहीं घटित हो रही हैं । संवादों की तरलता, सरलता, सरसता और प्रवाहमयता उपन्यास को सर्वोत्कृष्ट स्तर पर ले जाती है ।

गोदान में नगरीय परिवेश से जुडे अनेक ऐसे संवाद हैं जो यह दर्शाते हैं कि गाँव की कथा, गाँव के किसान, किसान से मजदूर बने श्रमिकों का तार शहर से किस प्रकार जुड़ा है, ग्रामीण परिवेश और शहरी परिवेश का तारतम्य बैठाकर दोनों परिवेशों के बीच के पार्थक्य और समानताओं को पाठकों के समक्ष रखा गया है ।

उपन्यास में रायसाहब जब स्वंय को किसानों का शुभेच्छु कहते हुए अपने आपको सत्वहीन, दुर्बल, पुरुषार्थहीन और समय और परिस्थितियों का मोहताज मानते हैं, अपनी जमींदारी को मजबूरी की जमींदारी कहते हैं और इस प्रथा के समाप्त हो जाने की कामना करते हैं तो प्रो. मेहता जी ताली बजाते हुए कहते हैं – "हियर हियर । आपकी जबान में जितनी बुद्धि है, काश उसकी आधी भी मस्तिष्क में होती । खेद यहीं है कि सब कुछ समझते हुए भी आप अपने विचारों को व्यवहार में नहीं लाते ।"

प्रो. मेहता राय साहब से पुन: कहते हैं – 'भाई, मैं प्रश्नों का कायल नहीं । मैं चाहता हूँ, हमारा जीवन हमारे सिद्धान्तों के अनुकूल हो । आप कृषकों के शुभेच्छु हैं, उन्हें तरह-तरह की रियायत देना चाहते हैं, जमींदारों के अधिकार छीन लेना चाहते हैं, बल्कि उन्हें आप समाज का श्राप कहते हैं फिर भी आप जमींदार हैं, वैसे ही जमींदार जैसे हजारों और जमींदार हैं । अगर आपकी धारणा है कि कृषकों के साथ रियायत होनी चाहिए, तो पहले खुद से शुरू करें – काश्तकारों को बगैर नजराने लिए पट्टे लिख दें, बेगार बंद कर दें, इजाफा लगान को तिलांजलि दे दें, बराबर जमीन छोड़ दें, मुझे उन लोगों से जरा भी हमदर्दी नहीं है, जो बातें तो करते हैं कम्युनिस्टों की – सी मगर जीवन है रईसों का सा, उतना ही विलासमय, उतना ही स्वार्थ से भरा हुआ ।'

प्रो. मेहता के ये संवाद दर्शाते हैं कि एक बुद्धिजीवी के रुप में वे किस प्रकार जमींदार रायसाहब के मित्र होते हुए भी उन्हें खरी-खरी सुनाते हैं और व्यवस्था के इस तथ्य का पर्दाफाश करते हैं कि सिर्फ आदर्शवादी बातें करनें, कम्यूनिस्टो जैसी बातें करने से किसी भी समस्या का हल नहीं निकाला जा सकता है । कथनी और करनी में समानता-एकरूपता होनी चाहिए । प्रोफेसर मेहता अपनी बातें बिल्कुल दर्शन के एक अध्यापक के अंदाज में करते हैं ।

प्रेमचंद मानव मनोविज्ञान में सिद्धस्त हैं । वे पात्रों की योग्यता, परिवेश, वर्ग, समाज आदि बातों पर अपना ध्यान रखते हुए पूरे उपन्यास में संवादशीलता को बनाए हुए हैं । वे बाल-मनोविज्ञान के गहरे मर्मज्ञ हैं । बाल चपल बातों पर उनकी गहरी पकड़ हैं । इसकी एक

बानगी उस वक्त देखने को मिलती है जब होरी के घर गाय आ गई है और वह अपनी छोटी बेटी रुपा को दुलारते हुए अपने दोनों भाइयों सोभा और हीरा को बुला लाने को कहता है –

"जरा जाकर देख, हीरा काका आ गए कि नहीं। सोभा काका को भी देखती आना। कहना, दादा ने तुम्हें बुलाया है। न आये, हाथ पकडकर खींच लाना।

रूपा ठुनककर बोली – छोटी काकी मुझे डाँटती हैं।

काकी के पास क्या करने जाएगी। फिर सोभा बहू तो तुझे, प्यार करती है?

'सोभा काका मुझे चिढाते हैं _ _ _ मैं न कहूँगी।'

'क्या कहते हैं, बता?'

'चिढाते हैं।'

'क्या कहकर चिढ़ाते हैं ?'

'कहते हैं, तेरे लिए मूस पकड़ रखा है। ले जा, भूनकर खाले।'

'तू कहती नहीं, पहले तुम खा लो, तो मैं खाऊँगी।'

'अम्मा मना करती हैं। कहती हैं, उन लोगों के घर न जाया करो।'

'तू अम्माँ की बेटी है कि दादा की?

रूपा ने उसके गले में हाथ डालकर कहा – 'अम्मा की' और हँसने लगी।

'तो फिर मेरी गोद से उतर जा। आज मैं तुझे अपनी थाली में न खिलाऊँगा।' - - - - - -

'अच्छा तुम्हारी।'

'तो फिर मेरा कहना मानेगी कि अम्मा का?'

'तुम्हारा'

इस तरह होरी और रूपा की बातचीत के माध्यम से एक साधारण परिवार में होने वाली बातें स्पष्टत: नजर आती हैं जिसमें माता-पिता छल से बच्चों को अपने पक्ष में करना चाहते हैं और बालसुलभ भोले-भाले बच्चे जहाँ अपना फायदा देखते हैं उन्हीं के पक्ष में चले जाते हैं। लेखक ने गंभीर से गंभीर बौद्धिक बातों से लेकर बच्चों-सी सरल वार्तालाप को इतने मनोहारी रूप में हमारे समक्ष रखा है कि पाठक उन्हें बार-बार पढना चाहता है।

इस प्रकार 'गोदान' उपन्यास में विभिन्न पात्रों के संवादों से संपन्न ऐसे अनेक दृष्टांत हैं, जो कथोपकथन की दृष्टि से इस कृति को समृद्ध बनाते हैं। गोदान के आदि से लेकर अन्त तक पात्रों की भरमार है। इन पात्रों के बीच संवादशीलता इतनी रोचक है कि पाठक को कहीं ऊबने नहीं देती। कथोपकथन बिल्कुल नदी की अविरल धारा के समान सतत प्रवाहमान है। नदी की मुख्य धारा में जिस प्रकार छोटी-छोटी सहायक नदियाँ आकर मिलती जाती हैं

munotes.in

और नदी की मुख्य धारा को और अधिक चौड़ी, गहरी और प्रवाहित करती हैं, ठीक उसी प्रकार होरी और धनिया की कथा और उनके बीच होने वाले संवादो के साथ-साथ गौण कथानकों के पात्रों की संवादशीलता, उनकी आपसी स्वाभाविक बातचीत गोदान को और अधिक प्रभावोत्पादक, समृद्ध और रोचक बनाते हैं। उपन्यास में निहित कथोपकथन या संवादों का अध्ययन करने के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि संपूर्ण कथोपकथन या संवाद स्थानानुकूल, विषयानुकूल, पात्रानुकूल, समयानुकूल, भावानुकूल, प्रसंगानुकूल है।

लेखक ने संवाद लेखन करते समय नन्हें बच्चों से लेकर बुजुर्गों के मनोभावों और विचारों का, उनके मनोविज्ञान का विशेष ध्यान रखा है। उपन्यास में पत्नी-पति के बीच की बातचीत, पिता - पुत्र, पिता - पुत्री, सास - बहू, भाई - भाई, भाई - बहन, प्रेमी - प्रेमिका, जमीदार - किसान, सूदखोर, महाजन - किसान, जमींदार – प्रोफेसर – पूँजीपति - संपादक, उद्योगपति मालिक - नौकर, आदर्शवादी - यथार्थवादी, पंचायत – जाति – धर्म - समाज के ठेकेदार और गरीब शोषित किसान, मजदूर वर्ग, अत्याधुनिक युवती - परम्परागत युवती, जमीदार के कारकून, लोग - पटवारी आदि के बीच होने वाले अनेक - अनेक संवादों से यह उपन्यास संपृक्त है, समृद्ध है जिसकी वजह से कहीं बोझिलता और ऊबन का अहसास नहीं होता है। लेखक से ग्रामीण परिवेश के पात्रों के संवादों और नगरीय क्षेत्रों के पात्रों के संवादों को लिखते समय उनकी शैक्षणिक योग्यता, आंचलिकता, औपचारिक - अनौपचारिक तरीके से की गई वाकपटुता, हाजिरजवाबी, समरसता, जी-हुजूरी, प्रतिरोधात्मकता, बौद्धिक स्तर पर की गई तार्किकता आदि का विशेष ध्यान रखा है। निष्कर्षत: कथोपकथन या संवाद की दृष्टि से गोदान अत्यन्त सफल समृद्ध और सार्थक उपन्यास है।

३.३ सारांश

गोदान उपन्यास का कथोपकथन या संवाद इसे शिखरत्व प्रदान करता है। उपन्यास में दो परिवेशों की कथाएँ क्रमश: ग्रामीण परिवेश और शहरी परिवेश की कथा समानान्तर धरातल पर प्रवाहित होती है। ग्रामीण परिवेश की कथा किसानों के साथ होने वाले शोषण का अहम् दस्तावेज प्रस्तुत करती है जिसके केन्द्र में है होरी और धनिया का दुर्दान्त संघर्षमय जीवन। नगरीय परिवेश से जुडी कहानी में अनेक गौण पात्र हैं जो निहायत स्वार्थ सिद्धि में लिप्त होते हुए बड़े-बड़े सिद्धान्तो, उसूलों व आदर्शो की बात करते हैं। हालाँकि ग्राम समाज हो या शहरी समाज, सर्वत्र किसानों, मजदूरों, दीन-दुखियों और हर तरह से लाचार लोगों के साथ शोषण ही होता आया है। इन सभी परिस्थितियों, परिवेशों, समस्याओं, उद्देश्यों को प्रेमचंद ने संवादों के माध्यम से इतनी सहजता, सरलता, सरसता, सजीवता, जीवन्तता, प्रभावोत्पादकता के साथ हमारे समक्ष रखा है कि गोदान एक विस्तृत फलक का उपन्यास होने के बावजूद, पात्रों की गुंफन होने के बावजूद कहीं से भी शिथिल, ऊबाऊ और नीरस नहीं लगता। उपन्यास में अंकित संवादों में अद्भुत तारतम्यता, प्रवाहमयता, विषयानुकूलता, स्थानानुकूलता, समयानुकूल, पात्रानुकूलता एवं प्रसंगानुकूलता विद्यमान हैं। उपन्यास में जितने पात्र हैं सब के सब भिन्न-भिन्न हैं, अपने अलग-अलग वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। सबकी अपनी-अपनी मानसिकता है, सोच-विचार है, चिन्तन है। वे अपने वर्ग विशेष से संयुक्त हैं। ये पात्र हर उम्र के, हर अवस्था से संबंधित हैं। प्रेमचंद इन सभी के मनोविज्ञान की गहरी समझ रखते हैं और इतनी सहजता, स्वाभाविकता से उनके मन:स्थिति को, उनके विचारों को संवादों के माध्यम से पाठकों के बीच रखते हैं कि पाठक अभिभूत हो

जाता है। निष्कर्षत: कथोपकथन या संवाद तत्व की दृष्टि से गोदान एक सर्वोत्कृष्ट उपन्यास है।

३.४ वैकल्पिक प्रश्न

प्र.१ उपन्यास में किसके माध्यम से रचना में नाटकीयता का दृश्य तैयार होता है?

(क) कथा वस्तु, (ख) वस्तु योजना,

(ग) उद्देश्य, (घ) कथोपकथन

उ. (घ) कथोपकथन

प्र.२ कथोपकथन का मुख्य गुण क्या नहीं है?

(क) स्वाभाविकता, (ख) क्लिष्टता,

(ग) पात्रानुकूलता, (घ) प्रसंगानुकूलता

उ. (ख) क्लिष्टता

प्र.३ गोदान में अनेक किसानों की समस्याओं को उभारने के बजाय प्रेमचंद का ध्यान किस पात्र पर केन्द्रित है?

(क) महाजन, (ख) दातादीन,

(ग) मातादीन, (घ) होरी

उ. (घ) होरी

प्र.४ जमींदारों और महाजनों की धीमे-धीमे, बिना रूके चलने वाली चक्की में पिसने के लिए कौन अभिशप्त है?

(क) किसान, (ख) दाता दीन,

(ग) प्रो. मेहता, (घ) स्वयं महाजन

उ. (क) किसान

प्र.५ यह संवाद किसका है – 'यह सब मन के समझाने वाली बातें हैं। भगवान सबको बराबर बनाते हैं। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।'

(क) होरी, (ख) गोबर,

(ग) हीरा, (घ) सोभा

उ. (ख) गोबर

munotes.in

प्र.६ किसान और मजदूर आजीवन किस पहाड़ के नीचे दबे नजर आते हैं?

(क) शोषण, (ख) अनैतिकता,

(ग) कुसंस्कार, (घ) अपसंस्कृती

उ. (क) शोषण

प्र. ७ यह कथन किसका है – 'महाराज, घर में न गाय है, न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गोदान हैं।'

(क) झूनिया, (ख) सिलिया,

(ग) धनिया, (घ) सहुआइन

उ. (ग) धनिया

प्र. ८ 'तुम जानते हो, तुमसे ज्यादा निकट संसार में मेरा कोई दूसरा नहीं है। मैंने बहुत दिन हुए, अपने को तुम्हारे चरणों में समर्पित कर दिया। तुम मेरे पथ-प्रदर्शक हो, मेरे देवता हो, मेरे गुरु हो।' – यह कथन गोदान के किस पात्र का है?

(क) सिलिया, (ख) झुनिया,

(ग) गोविन्दी, (घ) मालती

उ. (घ) मालती

प्र.९ यह कथन किसका है – 'यह तुम रोज-रोज मालिकों की खुशामद करने क्यों जाते हो? बाकी न चुके तो प्यादा आकर गालियाँ सुनाता है, बेगार देनी ही पड़ती है, नजर नजराना सब तो हम से भराया जाता है। फिर किसी की क्यों सलामी करो।'

(क) गोबर, (ख) होरी,

(ग) हीरा, (घ) सोभा

उ. (क) गोबर

प्र.१० कथोपकथन से उपन्यास में क्या उत्पन्न होता है ?

(क) सजीवता-जीवंतता (ख) क्लिष्टता,

(ग) ऊब, (घ) निराशा

उ. (क) सजीवता-जीवंतता

munotes.in

३.५ लघुत्तरीय प्रश्न

प्र.१ कथोपकथन को हम अन्य किस नाम से जानते हैं?

उ. संवाद, वार्तालाप और बातचीत कथोपकथन के अन्य अर्थ हैं।

प्र.२ गोदान में किन किन परिवेश की कथा चित्रित है?

उ. गोदान में ग्रामीण परिवेश और शहरी परिवेश की दो कथाएँ समानान्तर रुप से प्रवाहित होती हैं।

प्र.३ गोदान के आरम्भ में किनके बीच संवाद होता है?

उ. होरी और धनिया जो कि उपन्यास के मुख्य कथानायक और नायिका हैं, उनके बीच संवाद होता है।

प्र.४ शहरी परिवेश की कथा का मुख्य नायक कौन है ?

उ. प्रोफेसर मेहता हैं।

प्र.५ शहरी परिवेश की मूख्य कथानायिका कौन है ?

उ. डॉक्टर मालती हैं।

प्र.६ गोदान के कथोपकथन की विशेषता क्या है ?

उ. प्रसंगानुकूलता, पात्रानुकूलता, विषयानुकूलता और स्वाभाविकता आदि हैं।

प्र.७ उपन्यास गोदान में धनिया के संवादों से उसके स्वभाव के विषय में क्या पता चलता है?

उ. वह जुझारु, मुँहजोर लगती है, वह भावुक संवदेनशील, दयालु और निडर-निर्भीक है। वह समाज की या किसी की परवाह नहीं करती। सच्ची बातें, न्याय-अधिकार की बातें तर्क-वितर्क बिल्कुल निधड़क और आक्रोश की मुद्रा में कहने के कारण सभी उसे झगड़ालू भी समझते हैं।

प्र.८ कथोपकथन के माध्यम से गोदान में क्या खुलकर हमारे सामने आता है?

उ. सभी पात्रों का चरित्र उनकी विचारधारा उभर कर सामने आता है।

प्र.९ गोदान में कथोपकथन की क्या भूमिका है?

उ. गोदान में संवादहीनता की स्थिति में यह उपन्यास सर्वोत्कृष्ट रचना की श्रेणी में शामिल नहीं हो पाता, इतना रोचक इतना प्रासंगिक नहीं बन पाता। कथोपकथन इसे शिखरत्व प्रदान करता है।

munotes.in

प्र.१० गोदान में कथोपकथन के माध्यम से मालती के विषय में क्या जानकारी मिलती है?

उ. डॉक्टर मालती के कई रूपों के विषय में जानकारी मिलती है। आरम्भ में उनके तामसी रूप, अत्याधुनिक रुप से लेकर उत्तरोत्तर नि:स्वार्थ सेवा-धर्म के कारण देवी रुप के विषय में जानकारी मिलती है।

३.६ बोध प्रश्न

१. गोदान के कथोपकथन पर प्रकाश डालिए।

२. गोदान में निहित संवादों की विवेचना कीजिए।

३. कथोपकथन की दृष्टि से गोदान उपन्यास के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।

४. गोदान का कथोपकथन तत्व उत्कृष्ट कोटि का कैसे है? समझाकर लिखिए।

५. गोदान के ग्रामीण और शहरी परिवेश के कथोपकथन पर प्रकाश डालिए।

३.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१. प्रेमचंद और उनका युग – राम विलास शर्मा

२. साहित्य का उद्देश्य – प्रेमचंद

३. प्रेमचंद – डॉ. सत्येन्द्र (सं.)

४. प्रेमचंद का संघर्ष – श्री नारायण पांडेय

५. कलम का मजदूर – मदन गोपाल

६. कलम का सिपाही – अमृतराय

७. कलम का मजदूर : प्रेमचंद – राजेश्वर गुरू

८. कलाकार प्रेमचंद – रामरतन भटनागर

९. कुछ विचार – प्रेमचंद

१०. गोदान : एक पुनर्विचार – परमानंद श्रीवास्तव

११. गोदान : नया परिप्रेक्ष्य – गोपाल राय

१२. साहित्य का भाषा चिन्तन – सं. वीणा श्रीवास्तव

१३. प्रेमचंद – सं. सत्येन्द्र ('प्रेमचंद' में संकलित डॉ. त्रिभुवन सिंह का निबंध 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद')

१४. प्रेमाश्रम – प्रेमचंद

१५. प्रतिज्ञा – मुंशी प्रेमचंद

*****

munotes.in

४

प्रेमचंद कृत गोदान : शिल्प और भाषा शैली

इकाई की रूपरेखा

४.० इकाई का उद्देश्य

४.१ प्रस्तावना

४.२ गोदान : शिल्प और भाषा-शैली

४.३ सारांश

४.४ वैकल्पिक प्रश्न

४.५ लघूत्तरीय प्रश्न

४.६ बोध प्रश्न

४.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

४.० इकाई का उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य गोदान के शिल्प और भाषा शैली पर प्रकाश डालना है। किसी भी साहित्य की संरचना करने की एक शैली होती है जिसके लिए उपयुक्त भाषा की आवश्यकता होती है। बिना प्रसंगानुकूल, पात्रानुकूल भाषा के कोई भी रचना अपने लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकती है। इस इकाई में इसी बात की चर्चा की गई है।

४.१ प्रस्तावना

गोदान शिल्प की दृष्टि से एक सशक्त बेजोड़ उपन्यास है। इसका कथानक अत्यन्त विस्तृत है, इसलिए प्रसंग के अनुसार उनका शिल्प भी परिवर्तित होता रहता है। पात्रों के मनोभावों के अनुरूप भाषा-शैली बदलती रहती है मसलन कहीं प्रेमचंद पात्रों का विवरण देते समय वे रेखाचित्र शैली का प्रयोग करते हैं तो कहीं विषयवस्तु का विश्लेषण करते वक्त विवरणात्मक शैली का प्रयोग करते हैं। कहीं भावनात्मक शैली का प्रयोग करते हैं तो अनेक स्थानों पर अलंकारिक शैली का प्रयोग अत्यंत संजीदगी से करते हैं। इस इकाई में इन पर और विस्तृत विवेचना की गई है।

४.२ गोदान : शिल्प और भाषा-शैली

किसी भी साहित्य के सम्यक अध्ययन हेतु उसके शिल्प और भाषा-शैली को जानना - समझना अति आवश्यक है। जिस तरह से कोई भी साहित्यकार अपने साहित्य को सृजित करता है, जिस दृष्टि, भाव और तकनीक से अपने साहित्य की बुनावट करता है और हमारे समक्ष उसे प्रस्तुत करता है उसे ही रचना का शिल्प विधान कहते हैं। प्रेमचंद एक ऐसे उपन्यासकार है जिनके उपन्यासों के शिल्प का मुख्य उद्देश पाठक वर्ग को अपनी कथा को स्पष्ट रूप से समझाना, अपने पात्रों से सीधा साक्षात्कार करवाना है।

munotes.in

प्रेमचंद के सर्वश्रेष्ठ उपन्यास 'गोदान' के शिल्प का मुख्य उद्देश्य पाठक वर्ग को ग्रामीण कथा और शहरी कथा से तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, पारिवारिक परिस्थितियों से साक्षात्कार करवाना है। उपन्यास में दो कथाएँ समानान्तर रूप से प्रवाहित होती हैं। एक कथा ग्रामीण जीवन के पात्रों की कथा है और दूसरी नगरीय जीवन को व्यक्त करती है। दोनों को जोड़ने वाले सेतू हैं जमींदार रायसाहब, अमरपाल सिंह और होरी का पुत्र गोबर। रायसाहब जमींदार होने के कारण जहां एक तरफ गाँव के किसानों से, ग्रामीण लोगों से जुड़े हैं तो वहीं दूसरी तरफ रईस–धनाढ्य होने के कारण शहर के बुद्धिजीवियों, उद्योगपतियों और शासन प्रशासन से जुड़े लोगों के साथ भी उनका उठना-बैठना है। वे ग्रामीण किसानों का शोषण करते हुए अपने नगरीय मित्रों के बीच किसानों के बहुत बड़े शुभेच्छु, हमदर्द बनते हैं। गोबर युवा ग्रामीण किसान है, मुख्य कथानायक होरी का पुत्र है। गांव में खेती करते-करते गांव के भयावह शोषण से तंग आकर काम की तलाश में मेहनत-मजूरी करने शहर की ओर पलायन करता है। वहाँ भी शोषण होने के कारण पुँजीपतियों से टकराता है। अंत में उपन्यास में शहरी जीवन कि मुख्य नायिका डॉ. मालती के यहां काम करता है। वहीं रहता है। इस प्रकार, रायसाहब और गोबर ऐसे पात्र हैं जो उपन्यास के दोनों परिवेशों की कथा को आपस में जोड़ते हैं।

लेखक ने गोदान में मुख्य कथा जो कि कथानायक होरी के कृषक जीवन की संघर्ष गाथा है, के साथ-साथ कई गौण कथाओं का समावेश किया है। ये कथाएं, घटनाएं होरी की मुख्य कथा के साथ ऐसे मिल जाती हैं जैसे कि किसी भी बड़ी नदी में छोटी-छोटी सहायक नदियां आकर इस प्रकार मिल जाती है कि उसके बाद उनके जल में अंतर स्थापित नहीं हो पाता। ठीक इसी प्रकार होरी-धनिया के प्राणान्तक संघर्ष के साथ-साथ अन्य पात्रों की कहानियां गोदान की कथावस्तु को सशक्त बनाती हैं।

हालाँकि गोदान के शिल्प को लेकर विभिन्न विद्वानों, आलोचकों, समीक्षकों के भिन्न विचार हैं। हिंदी साहित्य के मर्मज्ञ नंददुलारे बाजपेयी, रामविलास शर्मा एवं गुलाब राय जैसे आलोचक गोदान के कथानक के बिखराव को उपन्यास का शिल्पगत दोष मानते हैं। इस संबंध में शांति प्रिय द्विवेदी का मानना है - "नगर की कथा से जुड़े कई अंश यदि उपन्यास से निकाल दिए जाएँ तो उपन्यास का आकार भी संतुलित हो जाएगा और कथानक में कसावट भी आ जाएगी।" उदाहरण स्वरूप - यदि ओंकारनाथ को शराब पिलाने का मुद्दा, शिकार व पिकनिक पार्टी, कबड्डी प्रतियोगिता, मिर्जा से जुड़े प्रसंग, खन्ना-गोविन्दि का वैवाहिक जीवन, खन्ना की उच्छृंखलता, स्त्रियों पर दिए जाने वाले भाषण यदि नहीं होते तो भी उपन्यास 'गोदान' का जो महत्व है, वही रहता। ये सभी प्रसंग अनावश्यक लगते हैं। इसके साथ ही मालती जी और प्रो. मेहता का प्रसंग भी गोदान की कहानी का हिस्सा नहीं लगता। यदि प्रेमचंद सिर्फ 'किसानों के शोषण' की कहानी तक भी यदि विषय को सीमित रखते तथा शहरी प्रसंगों से जुड़े मुद्दों को लिखकर अभिव्यक्त करने नहीं करते, स्वयं को संयमित कर लेते, इनका त्याग कर लेते, तो गोदान की कथा में अधिक कसावट आ सकती थी। इसी संबंध में आलोचक नंददुलारे बाजपेयी लिखते हैं - 'गोदान के नागरिक और ग्रामीण पात्र एक बड़े मकान के दो खंडों में रहने वाले दो परिवारों के समान है, जिनका एक दूसरे के जीवन से बहुत कम संपर्क है। वे कभी-कभी आते-जाते मिल लेते हैं, और कभी-कभी किसी बात पर झगड़ा भी कर लेते हैं, परन्तु न तो उनके मिलने में न झगड़े में ही कोई ऐसा संबंध स्थापित होता है जिसे स्थायी कहा जा सके।"

कतिपय विद्वानों का मानना बिलकुल भिन्न है। कुछ विद्वान आलोचक कहते हैं कि प्रेमचंद की रचना गोदान की बुनावट, उसकी संरचना इसलिए ऐसी है क्योंकि वे भारतीय जीवन-दर्शन, भारतीय जीवन मूल्य समेत समग्र भारतीय समाज को गोदान में अभिव्यक्त करना चाहते थे। वे तत्कालीन समय में प्रचलित औपन्यासिक स्थापत्य शैलियों के माध्यम से रंगभूमी, कर्मभूमि, प्रेमाश्रम आदि उपन्यासों की संरचना कर चुके थे। आलोचक नलिन विलोचन शर्मा ने अपनी पुस्तक 'गोदान: नया परिपेक्ष्य' में लिखा है - "उनकी (प्रेमचंद) यह उपलब्धि गोदान का स्थापत्य है जिसमें एक साथ ही एक दूसरे से विच्छिन्न ग्राम-भारत और नगर-भारत और बलात ग्रथित भी हो जाते हैं और विकलांग भी नहीं होते।" नलिन विलोचन शर्मा ने गोदान के शिल्प को एक नयी दृष्टि और नयी दिशा दी है। उनका मानना है कि प्रेमचंद साम्राज्यवादी-सामंतवादी व्यवस्था में किसानो-मजदूरों के शोषण का सर्वांगीण रूप हमारे समक्ष रखा है और इसके लिए ग्रामीण जीवन के साथ शहरी जीवन-जगत को चित्रित करना आवश्यक है। इसे इसी रूप समझना चाहिए। नलिन विलोचन शर्मा के विचारों से अनेक विद्वान् सहमत हैं।

वास्तव में 'गोदान' उपन्यास भारतीय जीवन को समग्रता में प्रस्तुत करने का एक सार्थक, सफल और उद्देश्यपरक उपन्यास है। उपन्यास में प्रेमचंद ने दर्शाया है कि गाँव के सामंती व्यवस्था के शोषण से त्रस्त होकर किसान, दूसरों की मजदूरी करने पर मजबूर हो जाते हैं। हिरा-धनिया उनकी दोनों बेटियाँ गाँव में मजदूरी करती है, तो वहीं गोबर का गाँव से मोह भंग होता है और वह शहर में मजदूरी करने के लिए पलायन करता है। यदि शहर जाने के बाद वह पुँजीवादी व्यवस्था-औद्योगिक व्यवस्था को नहीं जानेगा-समझेगा, अपने नगरीय कर्मभूमि के सत्य से वाकिफ नहीं होगा तो उपन्यास की कथा अवश्य प्रभावित हो सकती थी। इसलिए प्रेमचंद ने ग्रामीण समाज के साथ-साथ शहरी समाज के अनेक मुद्दों को उपन्यास में उठाया है, निम्न मध्य वर्ग, मध्य वर्ग और पुँजीपतियों की चारित्रिक दुर्बलता को, कृषकों-मजदूरों के शोषण में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से लिप्त लोगों की हिस्सेदारी को, शोषक और शोषित दोनों वर्गों के जीवनमूल्यों, नैतिक मूल्यों, चारित्रिक कमियों और विशेषताओं का दर्शाया है।

प्रेमचंद ने 'गोदान' उपन्यास की संरचना के लिए परंपरागत शैली, कथा शैली, रेखाचित्र शैली, दृश्य शैली, फ्लैशबैक शैली, भावात्मक, विचारात्मक शैली, किस्सागोई शैली, स्वप्न शैली, पात्रों के अन्तर्मन में प्रवेश करने हेतु या अन्य विस्तारीकरण के लिए विवरणात्मक शैली, वर्णात्मक शैली, उपदेशात्मक शैली, आत्म-विश्लेषणात्मक शैली और विवेचनात्मक शैली आदि तकनीक व प्रविधि का उपयोग इतनी सूक्ष्मता से किया है कि कई औपन्यासिक शिल्प की प्रविधियाँ या तकनीक एक साथ प्रवाहित होती हैं, साथ चलती है। सभी शैलियाँ मिश्रित रूप से हमारे समक्ष ऐसे आती हैं कि हमें पता ही नहीं चलता कि ये शैलियाँ परिवर्तित हो चुकी हैं। लेखक प्रेमचंद प्रसंगानुसार इन शैलियों में परिवर्तन इस प्रकार से इतनी सहजता से करते हैं कि पाठकों को पता ही नहीं चलता।

प्रेमचंद एक प्रसिद्ध किस्सागो हैं और परंपरागत कथा शैली के माध्यम से बारम्बार अपने पाठकों से बतियाते हैं। गोदान उपन्यास में भी वे बार-बार प्रत्यक्ष रूप अपने पाठकों को संबोधित करते हैं, अपनी धारणा, विचार और भावाभिव्यक्ति से पाठकों तक अपनी बात पहुँचाते हैं। वे एक कथाकार की तरह नेपथ्य में न रहकर अपने पात्रों के माध्यम से अपनी

बात, अपने विचार या टीका-टिप्पणी रखते हैं। वे इस बात का ख्याल रखते हैं कि अपनी बात रखते समय उनकी मुख्य कथा प्रभावित न हो।

इस प्रकार कह सकते हैं कि गोदान का शिल्प अनेक प्रविधियों से संरचित और संगठित है। शिल्प की समन्वयात्मकता अद्भुत है। उपन्यास का शिल्प इसके उद्देश्य को संपूर्णता प्रदान करने में, अपने लक्ष्य तक पहुँचने सौ फिसदी अपनी सक्रिय भूमिका निभाता है।

गोदान उपन्यास की भाषा शैली अपने आप में अनूठी, अद्वितीय है। गोदान एक वृद्धाकार उपन्यास है जिसमें पात्रों की संख्या ७० (सत्तर) के आस-पास है। इन पात्रों में कुछ ग्रामीण परिवेश के हैं तो कुछ पात्रों का संबंध शहर से है। गाँव और शहर में रहने वालों की जीवन शैली, भाषा शैली भिन्न-भिन्न होती है। प्रेमचंद ने दोनों परिवेश में रहने वाले पात्रों की भाषा-शैली को इतनी सहजता, सरलता, सरसता और स्वाभाविकता से हमारे समक्ष रखा है कि प्रत्येक वर्ग को ये पात्र अपने सरीखे ही प्रतीत होते हैं। प्रेमचंद अपनी भाषा को सक्षम और प्रवाहपूर्ण बनाने के लिए अनेक अप्रस्तुत दृश्यों, दृष्टान्तों, बिम्बों, प्रतीकों आदि को आधार बनाकर प्रसंगानुकूल व्यक्त करते हैं। इसके साथ ही पात्रों को ध्यान में रखते हुए वे गंवई भाषा, उर्दू, अंग्रेजी के शब्दों का यथोचित प्रयोग करते है।

गोदान में लगभग ७० पात्रों में प्रेमचंद ने प्राय: प्रत्येक पात्र की बाहरी रुपरेखा, कदकाठी और उसके आंतरिक गुणों का बखान बहुत संजीदगी से, बड़े मनोवेग से किया है। जैसे कि -

१) रायसाहब रंगे सियार हैं।

२) धनिया बहार से इस्पात जैसी कठोर पर भीतर से मोम जैसी मुलायम है।

३) मालती बाहर से तितली पर भीतर से मधुमक्खी है।

४) नाटे, मोटे, खल्वाट, काले, लम्बी, नाक और बड़ी-बड़ी मूंछों वाले आदमी थे, बिल्कुल विदूषक जैसे और थे भी बड़े हँसोड़ (गाँव के इंगुरी सिंह के बारे में)

५) मालती के विषय में प्रेमचंद का कथन - "गात कोमल, पर चपलता कूट-कूटकर भरी हुई। झिझक या संकोच का कहीं नाम नहीं, मेक-अप में प्रवीण, बला की हाजिर-जवाब, पुरुष-मनोविज्ञान की अच्छी जानकर, आमोद-प्रमोद को जीवन का तत्व समझनेवाली, लुभाने और रिझाने की कला में निपुण। जहाँ आत्मा का स्थान है, वहाँ प्रदर्शन ; जहाँ हृदय का स्थान हैं, वहाँ हाव-भाव, मनोदगारों पर कठोर निग्रह, जिसमें इच्छा या अभिलाषा का लोप-सा हो गया।" यँहा प्रेमचंद पाठकों से प्रत्यक्ष रूप से मिस मालती का सर्वांगीण परिचय स्वत: करवाते है। इसी तरह वे अनेक पात्रों का साक्षात्कार करवाते हैं। प्रत्येक पात्र का बाहय और आतंरिक रूप विश्लेषित करते है।

गोदान में सभी पात्रों की भाषा उनके चरित्र के बिल्कुल अनुकूल है, उनकी मानसिकता के अनुकूल है। जैसे होरी और धनिया, हिरा और पुनिया, गोबर और झुनिया, दाम्पत्य जीवन में होने वाले खट्टे-मीठे नौंक-झोंक करते रहते हैं, जीवन संघर्ष से जूझते हुए, मुलभुत आवश्यकताओं के लिए निरंतर मेहनत करते हुए अनेक बार बुरी तरह लड़ पड़ते हैं। पति, पत्नी की जमकर पिटाई करते हैं तो पत्नियाँ भी अपने व्यंग्यवाण, कटाक्ष, जीवन सत्य को

क्रोधावेश में सुनाती जाती हैं। क्रोध के आवेश में उनका संयम टूट जाता है और गाली - गलौच भी जमकर होती है। प्रेमचंद ने इन तमाम मुद्दों को इतनी सहजता और स्वाभाविकता से पाठकों के समक्ष रखा है कि पाठकों को यह बिल्कुल आँखों देखा हाल जैसा प्रतीत होता है। उदहारण स्वरूप जब गोबर अपनी पत्नी झुनिया को शहर ले जाने की बात कहता है तो धनिया को लगता है कि बच्चा अभी छोटा है उसे परेशानी हो सकती है लेकिन यही बात इतनी टूल पकड़ लेती है कि गोबर अपने माँ-बाप के परवरिश पर प्रश्न चिन्ह लगाता है और धनिया यानि कि उसकी माँ जमकर उसका प्रतिरोध करती है। वह अपने बेटे के नीयत को बदल जाने में अपनी बहु को दोषी मानती है। इस पुरे संग्राम में ताने-मेहने, गली-गलौच, धुक्का-फजीहत, डंक जैसी कोई बात नहीं बची। यह प्रसंग तब से लेकर आजतक, शायद भविष्य तक घर-घर की कहानी है। ऐसे अनेक प्रसंग अनेक संवाद ऐसे हैं जिनसे पाठक स्वयं को जोड़कर देखता है, आत्मानुभूतियाँ करता है।

गोदान की भाषागत विशेषताओं में इसमें प्रयुक्त मुहावरे और लोकोक्तियाँ चार-चाँद लगा देते देते हैं। प्रेमचंद की रचनाएँ स्वयं में मुहावरे-लोकोक्तियों और सूक्तियों का खजाना हैं। कुछ लोकोक्ति, मुहावरे की बानगी - साठे में पाठा होना, पाँव तले गर्दन दबी होना, मुँह में कालिख लगाना, मुँह में ताला पड़ा होना, ईंट का जवाब पत्थर से देना, नाक पर मक्खी न बैठने देना, बिन घरनी घर भूत का डेरा, मन भाय मुड़ी हिलाय, काठ का कलेजा होना, बिल्ली के भागो छींका टूटा, नमक हराम होना, मूँड़ी काटना, मुँह लगाना, हाथ-पैर तोड़कर बैठना, नमक मिर्च लगाना, उल्लू बनाना, उंगलिओं पर नचाना इत्यादि।

उपन्यास में सूक्तियों की कुछ बानगी:

१) कर्ज वह मेहमान है एक बार आकर फिर जाने का नाम नहीं लेता।

२) जो कुछ अपने से नही बन पड़ा उसी के दुख का नाम तो मोह है।

३) रोटियाँ ढाल बनकर अधर्म से हमारी रक्षा करती हैं।

गोदान के संवांदो में संक्षिप्तता भी द्रष्टव्य है जैसे कि गोबर और झुनिया जब पहले मिलते हैं। तो बतियाते हैं -

'तुम मेरे हो चुके, कैसे जानूँ ?'

'तुम जान भी चाहो, तो दे दूँ।'

'जान देने का अरथ भी समजते हो ?'

'तुम समझा दो न।'

'जान देने का अरथ है, साथ रहकर निबाह करना। एक बार हाथ पकड़कर उमिर-भर निबाह करते रहना ; .....'

इस प्रकार गोदान की भाषा संक्षिप्तता, पात्रानुकूलता, मर्मस्पर्शिता, भावात्मकता और नाटकीयता के गुणों से युक्त है। अनेक स्थानों पर लम्बे-लम्बे संवाद भी आए हैं परन्तु वे गंभीर और विषयानुकूल हैं। उपन्यास की भाषा शैली में दार्शनिकता का भाव, अद्भुत

तार्किक क्षमता, त्रासदी की यथार्थ प्रस्तुति, बौद्धिक चर्चा - परिचर्चा आदि के कारण भाषा और अधिक समृद्ध और संपन्न हुई है। यह दर्शाता है प्रेमचंद भाषा पर अपनी गहरी पकड़ रखते हैं। इनकी भाषा गूढ़, गहन, गंभीर, प्रौढ़, परिमार्जित, प्रभावोत्पादक और अत्यन्त सक्षम व समर्थ है।

प्रेमचंद के गाँव में रहनेवाले पात्र इन गंवई और तद्भव शब्दों का प्रयोग करते हैं - असुभ, बरखा, अरथ, निबाह, उमिर, जैजात, सुभ, साइत, जैजात, परमेसर, जतन, सोभा, परेम, सांसत, हिस्ट-पुस्ट, पिंसिन, भिनसार, गोड़ना, घामड़, अढ़ौना, चंगेरी, टिकौना, उटॅगी, पगहिया, असीम, टिकाय, मरजाद, सर्वस, राच्छसिन, मूंडी, मरदूमी, इलम, लालचिन, परसाद, सीसा इत्यादि।

इसी प्रकार प्रेमचंद की इस कृति में तत्सम शब्दों की भी भरमार है, मसलन - शुभेच्छु, यौवन, विधुर, उन्माद, पराकाष्ठा, धेय्य, स्वादिष्ट, कर्त्तव्य, परित्याग, विकृति, निर्द्वन्द्व, निश्शंक, आसक्ति, मनस्वी, प्राणी, वृत्ति, गर्भवती, अंत:करण, दुर्वासना, षोडशी, निवृत्त, कुँवर, आत्मीय, भाग्योदय इत्यादि।

इसी प्रकार पात्रा नुसार गोदान में अंग्रेजी शब्दों की भी बहुलता है यथा - डायरेक्टर, फिलॉसफर, हार्न, एलेक्शन, कम्यूनिस्ट, युनिवर्सिटी, इश्योरेन्स, बैंक, मेडल, शेयर, ट्रेजेडी, पॉलिसी, फेवर, विजिट, कौंसिल, मिनिस्टर, लार्ड, कमीशन, अल्टी मेटम, मैनीफेस्टो, म्यूनिसपैलिटी, मिस्टर, हिज, एक्सेलेंसी, Busines is business, Three cheers for Rai Sahib, Hip Hip Hurrah! लेडी, फादर इत्यादि।

उपन्यास गोदान में उर्दू शब्दों का प्रयोग बहुतायत से किया गया है जैसे कि - जवाब, हसीन, बेमुरब्वती, खुशामद, रिआयत, रियायत, खिलाफ, इल्म, तारीफ, मुआमला, सिफारिश, दफ्तर, बे-तरह, हाजिरी, पुरजा, शौक, शार्गिद, बेकद्री, अफ़सोस, जिक्र, साहब, शरीक, परवाह, बेफिक्री, बेइज्जती, रकम, बदनाम, हैसियत, अख्तियार, अरदब, खुदा, दराज़, खुशमिजाज, बन्दोबस्त, कारिन्दा, वसूल, जवाँमरदी, हुक्काम, फरियाद, नमाज, ताल्लुकेदार, तहकीकात, मुरौबत, मुलाजिम, जुर्माना, हक़, परवाह, मुलाहजे, नाहक जैसे अनगिनत शब्दों की भरमार है।

इस प्रकार निष्कर्षत: कहा जा सकता है गोदान शिल्पगत, भाषा-शैली गत दृष्टि से एक सशक्त, समृद्ध और समर्थ उपन्यास है। लेखक के विचारों-भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करने में भाषा-शैली और शिल्प की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, जो कि गोदान के उद्देश्य को पूर्णत: सफल बनाती है। शिल्प की विविध प्रविधियाँ, शैली की वैविध्यता, भाषा की वाग्वैदिग्धता गोदान को सर्वोत्कृष्ट उपन्यासों में सन्निहित करने में पूरी तरह से सफल है।

४.३ सारांश

'गोदान' उपन्यास शिल्पगत, भाषा-शैली गत दृष्टी से एक अत्यन्त समृदध, समर्थ और रोचक उपन्यास है जो लेखक प्रेमचंद के उद्देश्य को पूर्णत: सफलता प्रदान करती है।

उपन्यास 'गोदान' में लेखक ने एकाधिक प्रविधियों का, विभिन्न शैलीयों का इतना सुन्दर समायोजन किया है कि पाठकों को यह अहसास ही नहीं होता कि प्रसंगानुकूल लेखक ने

कब प्रविधियों व शैलियों में बदलाव कर दिया है। चाहे शहरी समाज हो या फिर ग्रामीण समाज, सामंत व्यवस्था हो या फिर पूंजीवादी व्यवस्था प्रेमचंद विभिन्न कथानकों के माध्यम से तत्कालीन जीवन सत्य को उद्घाटित करते हैं, जमींदार प्रथा के उन्मूलन पर जोर डालते हैं और अपनी लोकतांत्रिक दृष्टि को पाठकों के समक्ष रखते हैं। हालाँकि गोदान के शिल्प पर विद्वानों के मत भी भिन्न-भिन्न है लेकिन इसके काट्य तर्क भी हमारे समक्ष पूरी तार्किकता के साथ उपलब्ध हैं। जिनका विवेचन इस इकाई में विस्तृत रूप से किया गया है।

उपन्यास 'गोदान' में भारतीय कृषक की संघर्ष गाथा को यथार्थ परक शैली में प्रस्तुत करता है। उपन्यास में मुख्यत: दो परिवेश की कथाएँ समानान्तर चलती हैं, इसके अतिरिक्त अन्य कहानियाँ भी होरी-धनिया की मुख्य कथा के साथ-साथ चलती हैं। जिस प्रकार गंगा की छोटी-छोटी सहायक नदियाँ गंगा को और समृद्ध करती हैं और गंगा नदी भी अपनी छोटी छोटी सहायक नदियों को समृद्ध बना देती हैं ठीक उसी प्रकार होरी-धनिया की संघर्ष गाथा उपन्यास की सभी कमजोर कड़ियों पर हावी पड़ती हैं, भारी पड़ती हैं।

गोदान में प्रेमचंद ने रेखाचित्र शैली किस्सागो शैली, विवरणात्मक शैली, आत्मविश्लेषण शैली, विवेचनात्मक शैली, फ्लैशबैक शैली, दृश्यात्मक शैली, स्वप्न शैली, उपदेशात्मक शैली आदि का प्रयोग अत्यंत सहजता से प्रसंगानुसार किया है।

भाषा-शैली सहज, सरल, सरस, प्रभावोत्पादक है । भाषा प्रसंगानुकूल, पात्रानुकूल, परिवेशानुकूल, समयानुकूल है। कथानक के कथोपकथन या संवादों में सजीवता, संक्षिप्तता, प्रवाहमयता जैसे गुण भी विद्यमान है।

गोदान की भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों, अंग्रेजी शब्दों, उर्दू के शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों और सूक्तियों की बहुलता भाषा को और अधिक समृद्ध बनाती हैं।

अंततोगत्वा, यह कहा जा सकता है कि गोदान शिल्प और भाषा शैलीगत दृष्टि से एक सशक्त उपन्यास है।

४.४ वैकल्पिक प्रश्न

प्र.०१ उपन्यास गोदान का कथानक कैसा है ?

क) वृहद ख) लघु

ग) संक्षिप्त घ) काल्पनिक

उ. क) वृहद

प्र.०२ जिस तकनीक, दृष्टि और भावानुभूतियों से साहित्य की संरचना की जाती है उसे क्या कहते हैं?

क) कथावस्तु ख) शिल्प

ग) भाषा घ) समस्या

munotes.in

उ. ख) शिल्प

प्र.०३ गोदान में पात्रों की संख्या लगभग कितनी है ?

क) २५ ख) २८

ग) ४५ घ) ७०

उ. घ) ७०

प्र.०४ गोबर किसका पुत्र है ?

क) हीरा ख) सोभा

ग) धनिया घ) सिलिया

उ. ग) धनिया

प्र.०५ कतिपय विद्वान आलोचकों की दृष्टि में गोदान में क्या शिल्पगत दोष है ?

क) बिखराव ख) अरोचकता

ग) भाषा घ) उद्देश्य हीनता

उ. क) बिखराव

प्र.०६ कतिपय विद्वान आलोचकों के अनुसार गोदान में कौन-सा प्रसंग रहना चाहिए।

क) मिर्जा से जुड़े प्रसंग ख)खन्ना का व्यक्तिगत जीवन

ग) होरी-धनिया से संबंधित कथा घ) मेहता के स्त्रियों पर भाषण

उ. ग) होरी-धनिया से संबंधित कथा

प्र. ०७ कुछ आलोचकों के अनुसार गोदान का कौन-सा प्रसंग अनावश्यक है ?

क) होरी-धनिया का प्रसंग ख) गोबर-झुनिया प्रसंग

ग) खन्ना और मिर्जा खुर्शेद का प्रसंग घ) होरी-भोला प्रसंग

उ. ग) खन्ना और मिर्जा खुर्शेद का प्रसंग

प्र. ०८ गोदान में 'रंगे -सियार ' किसे कहा गया है ?

क) होरी ख) मेहता

ग) धनिया घ) रायसाहब

उ. घ) रायसाहब

munotes.in

प्र. ०९ गोदान में 'बहार से इस्पात जैसी कठोर पर भीतर से मोम जैसी मुलायम' किसे कहा गया है?

क) धनिया ख) झुनिया

ग) पुनिया घ) सिलिया

उ. क) धनिया

प्र. १० गोदान में बहार से तितली पर भीतर से मधुमक्खी किसे कहा गया है?

क) मालती ख) गोविन्दी

ग) झुनिया घ) सिलिया

उ. क) मालती

४.५ लघुत्तरीय प्रश्न

प्र.०१ शिल्प की दृष्टि से गोदान किस तरह का उपन्यास है ?

उ. शिल्प की दृष्टि से गोदान एक सशक्त और बेजोड़ उपन्यास है।

प्र.०२ प्रेमचंद गोदान में अपनी भाषा को कैसे सक्षम बनाते है?

उ. प्रेमचंद भाषा को सक्षम बनाने के लिए अप्रस्तुत दृश्यात्मकता, दृष्टान्तों, प्रतीकों, बिम्बों को आधार बनाते है।

प्र.०३ गोदान की भाषा-शैली कैसी है?

उ. गोदान की भाषा शैली पात्रानुकूल, प्रसंगानुकूल, सरल, सहज, प्रभावोत्पादक और पात्रों के मन:स्थिति के अनुकूल है।

प्र.०४ गोदान में पात्रों का चित्रण प्रेमचंद ने कैसे किया है ?

उ. प्रेमचंद ने गोदान में प्रत्येक पात्र की बाह्य रुपरेखा और आंतरिक गुणों-दुर्गुणों का चित्रण बहुत मनोवेग से किया है।

प्र.०५ प्रेमचंद ने गोदान में कर्ज की उपमा किससे दी हैं?

उ. प्रेमचंद के अनुसार कर्ज वह मेहमान है जो एकबार आकर फिर जाने का नाम नहीं लेता।

प्र.०६ होरी जैसे पात्र आजीवन किससे ग्रसित थे ?

उ. होरी जैसे पात्र जमींदारों और सूदखोर साहूकारों महाजनों के शोषण, कर्जे, उनके अन्याय, अत्याचार से ग्रसित थे।

munotes.in

प्र.०७ गोदान में किसकी गाथा का चित्रण हुआ है?

उ. किसानों के शोषण की गाथा का चित्रण हुआ है।

प्र.०८ गोदान में किन शैलियों का प्रयोग हुआ है ?

उ. दृश्यात्मक, किस्सागो, रेखाचित्र, विवरणात्मक, आत्मचिंतन, विचारात्मक, भावनात्मक शैली आदि का प्रयोग हुआ है।

प्र.०९ प्रेमचंद के किस उपन्यास को गोदान की पूर्व पीठिका कहा जाता है?

उ. प्रेमाश्रम को गोदान की पूर्व पीठिका कहा जाता है।

प्र.१० गोदान के केन्द्र में कौन-सा गाँव है?

उ. बेलारी और सेमरी जो कि अवध क्षेत्र में है, विशेषत: बेलारी है।

प्र.११ किस हिंदी कथाकार ने कथा साहित्य को मनोरंजन जगत के स्तर से ऊपर उठाकर जीवन से जोड़ने का काम किया है?

उ. यह श्रेय पूरी तरह से प्रेमचंद को है।

४.६ बोध प्रश्न

प्र.०१ 'गोदान' उपन्यास के शिल्प विधान पर प्रकाश डालिए।

प्र.०२ गोदान की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

प्र.०३ गोदान के शिल्प और भाषा-शैली को रेखांकित कीजिए।

प्र.०४ गोदान के शिल्प पर विभिन्न विद्वानों के विचारों को स्पष्ट कीजिए।

प्र.०५ सोदाहरण स्पष्ट कीजिए कि शिल्प और भाषा शैली की दृष्टि से गोदान एक सशक्त और सर्वोत्कृष्ट उपन्यास है।

४.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तके

१. प्रेमचंद और उनका युग - रामविलास शर्मा

२. साहित्य का उद्देश्य - प्रेमचंद

३. प्रेमचंद - डॉ. सत्येन्द्र (सं.)

४. प्रेमचंद का संघर्ष - श्री नारायण पांडेय

५. कलम था मजदूर - मदन गोपाल

६. कलम का सिपाही - अमृतराय

munotes.in

७. कलम का मजदूर : प्रेमचंद - राजेश्वर गुरु

८. कलाकार प्रेमचंद - रामरतन भटनागर

९. कुछ विचार - प्रेमचंद

१०. गोदान : एक पुनर्विचार - परमानंद श्रीवास्तव

११. गोदान : नया परिपेक्ष्य - गोपाल राय

१२. साहित्य का भाषा चिन्तन - सं. वीणा श्रीवास्तव

१३. प्रेमचंद - सं. सत्येन्द्र ('प्रेमचंद 'में संकलित डॉ. त्रिभुवन सिंह का निबंध 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद)

१४. प्रेमाश्रम - प्रेमचंद

१५. प्रतिज्ञा - मुंशी प्रेमचंद

*****

munotes.in

५

प्रेमचंद कृत गोदान : देशकाल - वातावरण

इकाई की रूपरेखा

५.० इकाई का उद्देश्य

५.१ प्रस्तावना

५.२ गोदान : देशकाल - वातावरण

५.३ सारांश

५.४ वैकल्पिक प्रश्न

५.५ लघूत्तरीय प्रश्न

५.६ बोध प्रश्न

५.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

५.० इकाई का उद्देश्य

इस कहानी का उद्देश्य है गोदान में चित्रित देशकाल-वातावरण-परिवेश का चित्रण करना। उपन्यास में चित्रित समस्याएँ, घटनाएँ किसी-न-किसी परिवेश में, देशकाल में घटित होती हैं, जैसे कि ग्रामीण परिवेश, शहरी परिवेश, कस्बाई परिवेश आदि। 'गोदान' उपन्यास की कथा भी ग्रामीण परिवेश और शहरी परिवेश के इर्द-गिर्द घूमती है। इस इकाई में उपन्यास के इन्हीं परिवेशों और देशकाल का चित्रण हुआ है।

५.१ प्रस्तावना

प्रेमचंद के लेखन का सरोकार अधिकांशत: ग्रामीण जीवन विशेषकर कृषक वर्ग से था, कृषक वर्ग के साथ होने वाले अन्याय, अत्याचार, शोषण को उन्होंने अपने उपन्यास 'गोदान' में प्रमुखता से उठाया है जिसे कृषक जीवन का महाकाव्य कहा जा सकता है। गोदान की कथा के केन्द्र में है गाँव का परिवेश और गाँव के जीवन की त्रासदी को और अधिक प्रौढ़ता प्रदान करती है उपन्यास में वर्णित शहर की कथा क्योंकि प्रेमचन्द का स्वयं यह मानना है कि किसानों के शोषण का पूरा चित्र तब तक नहीं उभरता जब तक उसमें नगर की कथा न हो।

देशकाल-परिस्थितियाँ चाहे शहरी हों या फिर ग्रामीण सर्वत्र आम-आदमी की दशा त्रासदपूर्ण ही है। शोषक और शोषितों के बीच का पार्थक्य जब तक नहीं मिटेगा, तब तक इन परिवेशों में किसी तरह का कोई सुधार संभव नहीं हैं। इस इकाई में इसी तथ्य का विवेचन अत्यन्त विस्तार से किया गया है।

mumotes.in

५.२ गोदान : देशकाल - वातावरण

प्रेमचंद कृत 'गोदान' में दो कथाएँ साथ-साथ चलती है। इनमें से एक कथा किसानों के जीवन से संबंधित है तो दूसरी कथा नगरीय जीवन की कथा है। उपन्यास में किसानों की कथा का केन्द्र है अवध क्षेत्र का बेलारी गाँव, जिसमें कथा का मुख्य नायक होरी जो कि पाँच बीघे जमीन का मालिक है, अपनी पत्नी धनिया, पुत्र गोबर और दो पुत्रियाँ सोना व रूपा के साथ रहता है। होरी स्वभाव से विक्रम और दब्बू किस्म का होने के साथ-साथ कर्मठ, ईमानदार, धर्म भीरू और संस्कारों से युक्त है। परिणामत: जमींदार, पटवारी, सूदखोर महाजन, पुलिस, बिरादरी, धर्म तथा समाज के ठेकेदार सब मिलकर उसका शोषण करते हैं। होरी जिन्दगी भर शोषण के भिन्न-भिन्न तौर-तरीकों से त्रस्त रहता है। उसे संतोष सिर्फ इसी बात का है कि गाँव में सिर्फ उसी की दशा ऐसी नहीं है बल्कि गाँव के प्राय: सभी किसानों की स्थिति एक जैसी ही है। सब एक ही नाव पर सवार हैं। सबके मन में इन शोषकों प्रति खौफ है, नफरत है, घृणा है, परन्तु चाह कर भी इन्हें रोका नहीं जा सकता, क्योंकि शोषक वर्ग के ये सभी लोग एक जूट हैं और संगठित रूप से गरीबों-दीनों-किसानों का शोषण करते हैं।

देश में अंग्रेजों का शासन है उनका भारतवासियों पर दमनचक्र तीव्र गति से जारी है। उनके विरुद्ध आवाज उठाने वालों की खैर नहीं। इधर गाँवों में जमींदारी प्रथा का कहर जारी है। देश के प्रायः सभी जमींदारी का यही उद्देश्य है कि किस प्रकार अपना खजाना भरने, अपनी उच्छृखंलताओं, ऐशो-आराम, भोग-विलास और वासनाओं की पूर्ति हेतू किसानों का, दीन-दुखियों का शोषण करें। किसानों से जमींदारी को लगान वसूल करने का जायज अधिकार है। किसानों की पैदावार अच्छी हुई है तब तो ठीक है, लेकिन जिनकी फसल अच्छी नहीं हुई या फिर सारे किसानों की फसल बरबाद हो गई, तब वे लगान कैसे देंगे? ऐसी परिस्थिती में भी किसानों पर जमींदारों का इतना आतंक और भय है कि उन्हें सूदखोर महाजन से मनमाने ब्याजदर पर कर्ज लेकर जमींदारों को चुकाना पड़ता है। उनके ऊपर इतना ब्याजदर बढ़ता जाता है कि वे जिन्दगी भर कर्जमुक्त नहीं हो पाते हैं। किसानों से लगान वसूल करने के अतिरिक्त जमींदार उनसे नाजायज रूप से नजराना लेते हैं, जुर्माना वसूल करते हैं, इजाफा लगान लेते हैं, किसानों से बेगार कराते हैं, काश्तकारों को बगैर नजराना लिए पट्टे नहीं लिखते, समय पर किसानों को खेती नहीं करने देते, उनके और उनके परिवार की बहू - बेटियों के साथ अपशब्द बोलते हैं, गाली - गलौच, मार - पीट जैसे बर्ताव करके यह दर्शाते हैं कि इन लोगों की जिंदगी जानवरों से भी बदतर है। इस तरह 'गोदान' उपन्यास में ग्रामीण परिवेश के अन्तर्गत गाँव के किसानों की शोषण की कथा लगभग दो सौ पृष्ठों में समाहित है।

'गोदान' में देशकाल की परिस्थितियों पर प्रकाश डालती है रायसाहब अमरपाल सिंह की बातें जब वे कहते हैं कि वे एक ऐसे पिता के पुत्र हैं जिनके पिता नि:स्वार्थ भाव से असामियों पर दया दृष्टि रखते हुए कभी-कभी आधा तो कभी-कभी पूरा कर्ज माफ कर देते थे। घर के गहने तक बेचकर असामियों की कन्याओं के विवाह में मदद करते थे। प्रजा का पालन नि:स्वार्थ भाव से करना उनके लिए सनातन धर्म था। कुछ जमींदार, कुछ राजा तत्कालीन समाज में ऐसे थे भी, जो मानव धर्म से बड़ा कुछ नहीं मानते थे। रायसाहब हालाँकि विचारों से स्वयं को उदारवादी मानते हैं, खुद को किसानों का हितैषी मानते हैं। वे चाहते है कि

जमींदारी प्रथा सदा के लिए समाप्त हो जाए परन्तु उनकी कथनी और करनी में कोई एकरूपता नहीं। उनमें जमीन-आसमान का अंतर है। वे एक स्थान पर स्वयं कहते हैं – "में इसे स्वीकार करता हूँ कि किसी को भी दूसरे के श्रम पर मोटे होने का अधिकार नहीं है। उपजीवी होना घोर लज्जा की बात है। कर्म करना प्राणिमात्र का धर्म है। समाज में ऐसी व्यवस्था, जिसमें कुछ लोग मौज करें और अधिक लोग पिसें और खपें, कभी सुखद नहीं हो सकती। पूँजी और शिक्षा, जिसे मैं पूँजी ही का एक रूप समझता हूँ, इनका किला जितनी जल्दी टूट जाए, उतना ही अच्छा है। जिन्हें पेट की रोटी मयस्सर नहीं, उनके अफसर और नियोजक दस-दस, पाँच-पाँच हजार फटकारें, यह हास्यास्पद है और लज्जास्पद भी। इस व्यवस्था ने हम जमींदारों में कितनी विलासिता, कितना दुराचार, कितनी पराधीनता और कितनी निर्लज्जता भर दी है, यह मैं खूब जानता हूँ, लेकिन मैं इन कारणों से इस व्यवस्था का विरोध नहीं करता।" रायसाहब यह भी स्वीकार करते हैं कि वे असामियों को लूटने के लिए विवश हैं क्योंकि अंग्रेज अफसरों को कीमती-कीमती डालियाँ पहूँचानी पड़ती हैं। रायसाहब से प्रो. मेहता बार-बार कहते हैं कि साम्यवाद के जिन आदर्शों को रायसाहब ओढ़ कर एक आदर्श जमींदार बनने की चेष्टाएँ करते हैं वे बंद करें। यदि साम्यवादी है तो उसे व्यवहार में लेकर आएँ और यदि नहीं हैं तो फालतू की बकवास बंद करें, ऐसा करना कायरता है, धूर्तता है। वे उनसे कहते हैं – "आपकी जबान में जितनी बुद्धि है, काश उसकी आधी भी मस्तिष्क में होती। खेद यही है कि सब कुछ समझते हुए भी आप अपने विचारों को व्यवहार में नहीं लाते।" प्रोफेसर मेहता की ये उक्तियाँ तत्कालीन परिवेश का, जमींदारों के दोहरे चरित्र का पर्दाफाश करती हैं।

उपन्यास 'गोदान' में फागुन के महीने और होली के त्योहार का बहुत सुन्दर चित्रण है। एक बानगी – "फागुन अपनी झोली में नवजीवन की विभूती लेकर आ पहुँचा था। आम के पेड़ दोनों हाथों से बौर के सुंगध बाँट रहे थे, और कोयल आम की डालियों में छिपी हुई संगीत का गुप्त दान कर रही थी। गाँवो में ऊँख की बोआई लग रही थी।" फागुन का यह दृश्य युग-युगान्तर से जन-मानस में एक नयी स्फूर्ति, एक नई ताजगी, एक नई रवानगी भर देता है जिसमें हँसी-ठिठोली-मस्ती-मजाक रंग-अबीर-गुलाल का त्योहार होली सबके उन्माद और अधिक बढ़ा देता है। होरी के घर होली का माहौल व योजना कुछ इस प्रकार है – "खूब भंग घुटे, दुधिया भी, नमकीन भी, और रंगों के साथ कालिख भी बने और मुखियों के मुँख पर कालिख ही पोती जाय। होली में कोई बोल ही क्या सकता है। फिर स्वाँग निकले और पंचों की भद्द उड़ाई जाय। रूपए पैसे की कोई चिन्ता नहीं।" होली का यह रंग घर-घर जमा रहता है। प्रेमचंद ने होली के त्योहार को अपनी रचनाओं में विशेषत: गोदान में अत्यन्त तल्लीनता से, विस्तार से उठाया है। अध्याय इक्कीस के आरम्भ में ही वे लिखते हैं – "दहातों में साल के छ: महीने किसी न किसी उत्सव में ढोल-मजीरा बजता रहता है। होली के एक महीना पहले से एक महीना बाद तक फाग उड़ती है, आषाढ़ लगते ही आल्हा शुरू हो जाता है और सावन भादों में कजलियाँ होती है। कजलियों के बाद रामायण गान होने लगता है। सेमरी भी अपवाद नहीं है। महाजन की धमकियाँ और कारिन्दे की बोलियाँ इस समारोह में बाधा नहीं डाल सकतीं। घर में अनाज नहीं है, देह पर कपड़े नहीं हैं, गाँठ में पैसे नहीं हैं, कोई परवाह नहीं। जीवन की आनंदवृत्ति तो दबाई नहीं जा सकती, हँसे बिना तो जिया नहीं जा सकता।" प्रेमचंद की ये उक्तियाँ भारत के प्राय: सभी गाँवो की सांस्कृतिक परिदृश्यों को हमारे समक्ष रखती हैं जिनमें किसानों के जीवन की मूलभूत समस्याओं दो वक्त की हैं,

सारा जद्दोजहद प्राथमिक जरूरतो को भी पूर्ति नहीं कर पाता परन्तु तीज-त्योहार, धर्म-कर्म, पूजा-पाठ, होली-दिवाली के बहाने ही गाँव की सामान्य जनता अपने मनोरंजन का साधन बना ही लेती हैं। अपने मित्र मंडली के साथ बैठकी, फाग-चैता-आल्हा का अलाप उनके भीषण से भीषण कष्ट से भी कुछ देर के लिए सही पर निजात दे देता है। इस प्रकार शोषित वर्ग विसंगतियों से भरे परिवेश में भी अपनी खुशियों के कुछ पल चुरा लेते हैं।

गोदान में ग्रामीण परिवेश के साथ-साथ शहरी या नगरीय परिवेश की कथा भी लगभग एक सौ आठ पृष्ठों में लिखी गई है। प्रेमचंद की मान्यता थी कि गाँव के किसानों के शोषण का पूरा चित्र तब तक नहीं उभर सकता जब तक उसमें नगर की कथा न हो। कारण यह है किसानों के उपजाए अन्न पर ऐशो आराम करने वाले लोगों के तार शहर से ही जुड़े हैं, जहाँ बड़े-बड़े रईस रईसी जिन्दगी जीते हुए गरीबी-भुखमारी-किसानों की लाचारी-बेबसी पर घंटो चर्चाएँ, बहसबाजी करते हैं परन्तु धरातल स्तर पर कुछ नजर नहीं आता है।

'गोदान' उपन्यास में नगरीय परिवेश में रहने वाले पात्रों में प्रोफेसर मेहता, डॉक्टर मालती, उद्योगपति खन्ना, मिर्जा खुर्शेद, वकील श्याम बिहारी तंखा, मिस्टर खन्ना की पत्नी गोविंदी खन्ना, मालती की बहन सरोज, सम्पादक पंडित ओंकारनाथ आदि का नाम उल्लेखनीय है। रायसाहब अमरपाल सिंह ग्रामीण और शहरी परिवेश की दोनों कथाओं को जोड़ने वाले सेतु हैं क्योंकि जहाँ एक तरफ जमींदार होने के कारण उनका संबंध ग्रामीण जनों से है तो दूसरी ओर शहर के उक्त लोग उनके मित्र हैं जिनके साथ शहर में उनका उठना बैठना है। रायसाहब सेमरी गाँव में रहते हैं, उपन्यास का मुख्य नायक होरी बेलारी में रहता है। दोनों गाँवो में केवल पाँच मील का अंतर है। रायसाहब जमींदार हैं अत: आस-पास के गाँवों के किसान होरी की तरह उनकी जी-हुजूरी करने जाते हैं क्योंकि उनका अपने जमींदार से सीधा सरोकार है। रायसाहब का प्राय: शहर आना जाना लगा रहता है। किसी विशेष अवसर पर या किसी उत्सव विशेष के आयोजन में उनके सभी नगर निवासी मित्र रायसाहब के निमंत्रण पर सेमरी आते हैं, कई बार इन अवसरों पर हीरा जैसे ग्रामीणों का आना-जाना भी परिवेश और नगरीय परिवेश को जोड़ने वाले सेतु का कार्य करते हैं।

उपन्यास सम्राट प्रेमचंद गोदान की ग्रामीण कथा के साथ-साथ शहरी कथा के सन्दर्भ में यह बताना चाहते हैं कि देशकाल चाहे ग्रामीण हो या नगरीय, सर्वत्र दीन-हीनों, किसानों, मजदूरों, गरीबों का शोषण होता है। सिर्फ शोषण करने का स्वरूप बदल जाता है, लेकिन शोषण नहीं रूकता। किसानों-मजदूरों की स्थिति बद से बदतर होती जा रही हैं, उनके अधिकारों का हनन अपने चरम पर है अमानवीयता की पराकाष्ठा पार हो चुकी है। पूँजीपति मिस्टर खन्ना की हैवानियत की कोई सीमा नहीं। वे अपने चीनी मिल में काम करने वाले मजदूरों की मजदूरी घटा देते हैं, अनेक तरीके से उनका शोषण करते हैं, मजदूरों को हिंसात्मक रूख अपनाने पर विवश करते हैं, उनपर लाठी बरसवाते हैं। मजदूर बुरी तरह गंभीर रूप से घायल होते हैं। यही स्थिति तत्कालीन समय में लगभग पूरे देश में थी। औद्योगिक अशांति का माहौल लगभग सर्वत्र था। मिलों के मालिकों के प्रति मजदूरों में असन्तोष ही असंतोष था। बाजारवाद अपना पाँव पसारता जा रहा था। देश के लगभग सभी हिस्से में औद्योगिक अशान्ति, बाजारवाद और भौतिकवाद का दौर था, जिससे गरीब मजदूर की जिन्दगी त्रासदी पूर्ण थी। प्रेमचंद अपनी इस रचना में दर्शाते हैं कि पूँजीवादी

मानसिकता वाले व्यक्ति शोषक, उत्पीड़क, चरित्रहीन एवं अमानवीय होते थे। धन के बल पर वे स्त्रियों के चरित्र का हनन करने से नहीं कतराते थे।

गोदान में गोबर गाँव के शोषण का विरोध करता है। वह शोषण के उस दमन चक्र से मुक्ति पाने के शहर में मजदूरी करने के लिए पलायन करता है। वहाँ भी शोषण का सिलसिला बंद नहीं होता, उसका वह विरोध करता है लाठी चार्ज में गंभीर रूप से घायल होता है।

जैसे गाँव के अन्य युवा शहरों में आकर कुछेक नगरीकरण की बुराइयों के शिकार हो जाते है वैसे गोबर भी नशे में आकर पत्नी के साथ दुर्व्यवहार करता है। परिस्थितिवश वह सुधर भी जाता है। इसी तरह का परिवेश शहर का भी उपन्यास में चित्रित है जिसमें शहर में मजदूर के आवास-निवास, उनकी आबोहवा, पास-पड़ोस से खट्टे-मीठे संबंध, उत्सव-त्योहार, उनके सुखम्-दुखम् आदि को उपन्यास में अत्यन्त सूक्ष्मता से दर्शाया गया है।

गोदान उपन्यास का पात्र गोबर भी गाँव की कथा को शहर से जोड़ता है। गाँव के लड़के गोबर को 'हीरो' समझते हैं। वे चाहते हैं कि उसके साथ शहर जाएँ, धन कमाएँ और ऐश करें। यह बहुत अजीब से विडंबना है कि वे पलायन की कड़वी सच्चाई से वाकिफ नहीं होते हैं। सच्चाई यह हैं कि गाँव के किसानों के समान शहर के मजदूर भी शोषण के शिकार हैं किंतु वे एक दूसरे की तकलीफ से परिचित नहीं हैं और न ही उनमें किसी प्रकार का संपर्क-सहयोग है। किसान हों या फिर मजदूर उनमें आपसी सहयोग, संपर्क, संगठन, एक जूटता का सर्वथा अभाव है जबकि इसके विपरीत शोषक वर्ग के दोनों पात्र गाँव के जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह और शहर के पूँजीवादी मिस्टर खन्ना साहब दोनों एक दूसरे के मित्र और सहयोगी हैं। दोनों मिलकर शोषण करते हैं। यही नहीं, गाँव के किसानों में बिल्कुल एकता नहीं है जबकि गाँव के सभी सूदखोर महाजनों में एकता है। प्रेमचंद यह बताना चाहते हैं कि जब तक किसान और मजदूर एक साथ मंच पर आकर एकजूट होकर संघर्ष नहीं करेंगे तब तक इसी प्रकार शोषण का शिकार बनते रहेंगे। एकता में बल है। अलग-अलग और अकेले लड़ने से उनकी लड़ाई कदापि सफल नहीं हो सकती। यहाँ प्रेमचंद मार्क्सवादी चेतना से प्रभावित और प्रगतिशील जीवन दृष्टि के समर्थन में खड़े दिखाई देते हैं।

गोदान में विधवाओं के प्रति समाज के नकारात्मक भाव को दर्शाया गया है जिसमें वैधव्य काटती स्त्रियों का जीवन काँटों से भरा है। उसे किसी से प्रेम करने, अपने जीवन सफर को पुनः शुरू करने का कोई हक्क नहीं। इस मुद्दे के साथ ही अनमेल विवाह, दाम्पत्य जीवन की कड़वाहट, घर गृहस्थी से जुड़ी अनेक समस्याएँ पलायनवाद जैसे अनेक ऐसे मुददे हैं, जो तत्कालीन समाज की विभिन्न परिस्थितियों को दर्शाते हैं।

उक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गोदान उपन्यास में गाँव और शहर दोनों की कथाएँ समानान्तर चलती है जो कि उपन्यास को और रोचक बनाती है। उपन्यास में दर्शाया गया है कि तत्कालीन देशकाल के संबंध में बुद्धिजीवियों में बातें बड़ी गंभीरतापूर्ण होती हैं। परन्तु वह धरातल पर कुछ नजर नहीं आता क्योंकि शोषक और शोषित के बीच जो इतनी बड़ी खाई है उसे किसी तरह से नहीं पाटा जा सकता, क्योंकि मजदूरों-किसानों में एक जुटता का अभाव है। पहली बात मजदूर-किसान सिर्फ अपने हाथों से काम कर रहे हैं जब कि शोषक वर्ग बुद्धि, प्रतिभा, ज्ञान, शिक्षा और तमाम स्ट्रेटेजी बनाकर काम करते हैं।

ऐसे में किसानों और श्रमिकों की जीत कैसे संभव है। किसानों और मजदूरों को भी हर स्तर पर अनुभवी होना होगा। उपन्यास में ग्रामीण और शहरी परिवेश दोनों की कथाएं आपस में जुड़ी हैं और अपना-अपना व्यापक महत्व रखती हैं। देशकाल परिवेश की परिस्थितियों का गहनतम विश्लेषण गोदान में मिलता है।

५.३ सारांश

प्रेमचंद द्वारा रचित उपन्यास 'गोदान' में दो कहानियाँ एक साथ समानान्तर गति से प्रवाहित होती हैं। पहली कथा गाँव की है और दूसरी कथा शहर की। पहली कथा में ग्रामीण परिवेश में किसानों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार, शोषण, अन्याय, अत्याचार को दिखाया गया है। ग्रामीण समाज में व्याप्त तमाम विसंगतियों, विकृतियों, विडंबनाओं को लेखक ने बहुत संजीदगी से उकेरा है। होरी, धनिया, गोबर और उसकी दो बेटियाँ, झुनिया सिलिया जैसे न जाने कितने ऐसे किसान हैं जिन्होंने आजीवन प्रताड़ना-शोषण के दंश को झेला है। उनके पाँच बीघे की जमीन, घर सब कुछ इस शोषण में स्वाहा हो चुका है फिर भी शोषकों का मन नहीं भरा है।

गाँव के ग्रामीण परिवेश में चारों ओर गरीबी, भुखमरी, शोषण, अन्याय, विधवा की त्रासदपूर्ण जिंदगी, अनमेल विवाह, भयंकर दीनता के कारण उत्पन्न अनेक मानसिक, शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक यातनाएँ, पंचायत का खौफ, समाज और धर्म के ठेकेदारों का दंश, जमींदार और उनके कारिन्दों का खौफ, जैसी अनेक ऐसी समस्याएँ हैं तो तत्कालीन समाज में व्याप्त थीं।

शहरी परिवेश की स्थिति भी ऐसी थी बस शोषण करने का तौर तरीका बदल गया था। शहरी परिवेश में उद्योगपतियों, पूँजीपतियों का बोलबाला था। इनसे मजदूर वर्ग पूरी तरह से असंतुष्ट था। सर्वत्र औद्योगिक क्रान्ति और औद्योगिक अशान्ति का माहौल था। देश के लगभग सभी हिस्से में बाजारवाद, भौतिकतावाद और औद्योगिक अशान्ति का वातावरण था। पूँजीवादी मानसिकता वाले व्यक्ति शोषक, उत्पीड़क, चरित्रहीन एवं अमानवीय होते थे। शोषण का दमनचक्र मजदूरों की जिन्दगी को जनावरों से भी बदतर बना रहा था। उपन्यास में गोबर एक ऐसी कड़ी है जो कि गाँव के एक किसान से शहर का एक मजदूर बना है। गाँव के लड़के भले ही उससे प्रेरणा लेते हो परन्तु उन्हें शहरी जीवन की कड़वी सच्चाई का आभास तक नहीं है। किसानों-श्रमिकों में एकजुटता का सर्वथा अभाव हैं जब कि सारे शोषक वर्ग स्वार्थी होते हुए भी शोषण करने के मुद्दे पर एक जूट हो जाते हैं। सारे साहूकार एकजूट हो जाते हैं।

इस प्रकार सारांश के रूप में कहा जा सकता है कि उपन्यास 'गोदान' का देशकाल वातावरण तत्कालीन समाज को मानों आँखो देखा हाल प्रकट करता है। प्रेमचंद ने ग्रामीण समाज और शहरी जीवन का समन्वय इस प्रकार किया है कि उस दौर में घटित होने वाली सारी घटनाएँ, सभी तरह के परिवर्तन, नित परिवर्तित होते परिवेश, स्त्रियों की स्वच्छंदता, स्त्रियों के प्रति सामाजिक सोच, किसान से मजदूर बनने पर विवश होते किसानों की लाचारी को बहुत संजीदगी और सूक्ष्मता से दर्शाया गया है। इस दृष्टि से प्रेमचंद को पूरी सफलता मिली है।

५.४ वैकल्पिक प्रश्न

प्र.१ गोदान में कितनी परिवेशों की कथाएँ साथ-साथ चलती हैं?

(क) एक (ख) दो

(ग) तीन (घ) चार

उ. (ख) दो

प्र.२ गोदान में किसानों की कथा के केन्द्र में कौन सा गाँव है?

(क) बेलारी (ख) ददरा

(ग) नगवा (घ) हल्दी

उ. (ख) बेलारी

प्र.३ होरी के पास पहले कुल कितने बीघे जमीन थी?

(क) दो बीघा (ख) चार बीघा

(ग) पाँच बीघा (घ) छह: बीघा

उ. (ग) पाँच बीघा

प्र.४ बेलारी और सेमरी गाँव किस क्षेत्र में स्थित था?

(क) अवध (ख) ब्रज

(ग) कन्नौज (घ) सीतापुर

उ. (क) अवध

प्र.५ किस उपन्यास को कृषक जीवन का महाकाव्य कहा गया है?

(क) सेवासदन (ख) प्रेमाश्रय

(ग) गोदान (घ) गबन

उ. (ग) गोदान

प्र.६ जमींदारों को किसानों से क्या लेने का जायज अधिकार था?

(क) नजराना लेने का (ख) बेगार कराने का

(ग) लगान लेने का (घ) जुर्माना वसूल करने का

उ. (ग) लगान लेने का

munotes.in

प्र.७ गोदान में गाँव के किसानों की कथा लगभग कितने पृष्ठों में समाहित है?

(क) लगभग एक सौ (ख) लगभग दो सौ

(ग) लगभग तीन सौ (घ) लगभग तीन सौ पच्चास

उ. (ख) लगभग दो सौ

प्र.८ गोदान में नगरीय जीवन की कथा कितने पृष्ठों में समाहित है?

(क) एक सौ आठ (ख) दो सौ

(ग) दो सौ आठ (घ) तीन सौ

उ. (क) एक सौ आठ

प्र.९ गोदान में स्वयं को किसानों शुभेच्छु कौन कहता है?

(क) राय साहब (ख) मेहता जी

(ग) मालती (घ) खन्ना साहब

उ. (क) राय साहब

प्र.१० यह कथन किसका है – 'आपकी जबान में जितनी बुद्धि है, काश उसकी आधी भी मस्तिष्क में होती। खेद यही है कि सबकुछ समझते हुए भी आप अपने विचारों को व्यवहार में नहीं लाते।'

(क) रायसाहब (ख) प्रोफेसर मेहता

(ग) मालती जी (घ) खन्ना साहब

उ. (क) रायसाहब

५.५ लघूत्तरीय प्रश्न

प्र.१ रायसाहब किस गाँव में रहते थे?

उ. सेमरी गाँव में रहते थे।

प्र.२ होरी किस गाँव का निवासी था?

उ. बेलारी गाँव का निवासी था।

प्र.३ गोदान में किस महीने के किस त्योहार का विस्तृत चित्रण हुआ है?

उ. फागुन के महिने में हाली के त्योहार का विस्तृत चित्रण हुआ है।

प्र.४ गोबर गाँव के शोषण से तंग आकर क्या करता है?

उ. शहर (लखनऊ) की ओर पलायन करता है।

munotes.in

प्र.५ गोदान उपन्यास में गाँव की कथा से शहर की कथा को कौन जोड़ता है?

उ. रायसाहब अमरपाल सिंह और गोबर दोनों जोड़ते हैं।

प्र.६ गोदान में चित्रित नगरीय परिवेश किनसे बहुत अधिक प्रभावित हो रहा था?

उ. औद्योगिक अंशान्ति, बाजारवाद और भौतिकतावाद से प्रभावित हो रहा था।

प्र.७ गोदान में चीनी मिल के मैनेजिंग डायरेक्टर मिस्टर खन्ना ने मजदूरों के साथ क्या किया था?

उ. मिस्टर खन्ना ने मजदूरों का बहुत शोषण किया था, उनकी तनख्वाह घटा दी थी।

प्र.८ नगर में मिलों के मालिकों के प्रति मजदूरों की क्या मन:स्थिति थी?

उ. मिलों के मालिकों के प्रति किसानों में व्यापक असंतोष था।

प्र.९ साल के छह: महीने किसी न किसी उत्सव में ढोल-मजीरा कहाँ बजता रहता है?

उ. गाँव-देहात में बजता रहता है।

प्र.१० 'गोदान' उपन्यास के अनुसार गाँव हो या शहर दोनों स्थानों पर दीनों-गरीबों के साथ क्या होता है?

उ. गाँव हो या शहर सर्वत्र दीन-दुखियों के साथ शोषण, अन्याय, अत्याचार ही होता है।

५.६ बोध प्रश्न

१) 'गोदान' उपन्यास में चित्रित देशकाल वातावरण की परिस्थितियों का चित्रण कीजिए।

२) 'गोदान' उपन्यास के परिवेश का चित्रण कीजिए।

३) 'गोदान' उपन्यास में चित्रित परिस्थितियों का वर्णन कीजिए।

४) 'गोदान' उपन्यास में गाँव और शहर दोनों के परिवेशों का सुन्दर समन्वय हुआ है।' सोदाहरण लिखिए।

५) 'गोदान' उपन्यास के देशकाल पर प्रकाश डालिए।

५.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) प्रेमचंद और उनका युग – रामविलास शर्मा

२) साहित्य का उद्देश्य – प्रेमचंद

३) प्रेमचंद – डॉ. सत्येन्द्र (सं.)

४) प्रेमचंद का संघर्ष – श्री नारायण पांडेय

munotes.in

५) कलम का मजदूर – मदन गोपाल

६) कलम का सिपाई – अमृतराय

७) कलम का मजदूर : प्रेमचंद – राजेश्वर गुरू

८) कलाकार प्रेमचंद – रामरतन भटनागर

९) कुछ विचार – प्रेमचंद

१०) गोदान : एक पुनर्विचार – परमानंद श्रीवास्तव

११) गोदान : नया परिप्रेक्ष्य – गोपाल राय

१२) साहित्य का भाषा चिन्तन – सं. वीणा श्रीवास्तव

१३) प्रेमचंद – सं. सत्येन्द्र ('प्रेमचंद' में संकलित डॉ. त्रिभुवन सिंह का निबंध 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद)

१४) प्रेमाश्रम – प्रेमचंद

१५) प्रतिज्ञा – मुंशी प्रेमचंद

*****

munotes.in

६

प्रेमचंद कृत गोदान : समस्याएँ एवं उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

६.० इकाई का उद्देश्य

६.१ प्रस्तावना

६.२ गोदान की समस्याएँ एवं उद्देश्य

६.३ सारांश

६.४ वैकल्पिक प्रश्न

६.५ लघूत्तरीय प्रश्न

६.६ बोध प्रश्न

६.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

६.० इकाई का उद्देश्य

'प्रेमचंद कृत गोदान: समस्याएँ एवं उद्देश्य' इकाई का मुख्य लक्ष्य यह है कि इस इकाई के अन्तर्गत गोदान में चित्रांकित समस्याओं पर गंभीरता से विचार किया जाय, साथ ही उपन्यास के मूल उद्देश्य की भी विस्तृत रूप से गहन चर्चा की जा सके।

६.१ प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह जिस समाज में रहता है, जिस परिवेश से जुड़ा होता है उससे संबंधित बाह्य और आंतरिक समस्याओं से भी घिरा रहता है। संसार में शायद विरले ही कोई ऐसा व्यक्ति विशेष हो जिसके जीवन में किसी तरह की कोई समस्या न हो। जब तक जीवन है तब तक तमाम तरह की समस्याएँ हैं, अनेक-अनेक चुनौतियाँ है, संघर्ष हैं। इन समस्याओं में जकड़ने वाला, जूझने वाला व्यक्ति हर वर्ग, हर जाति, हर सम्प्रदाय हर समुदाय का है, जो निरंतर इस चक्रव्यूह से निकलने की कोशिश में जुटा रहता है। इन चुनौतियों को पार करने, इन समस्याओं से निकलने के बाद वह सुखानुभूति करता है, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि वह अपने जीवन में व्याप्त तमाम कष्टों से निजात पा ही ले।

जिन्दगी में इन्हीं खट्टे-मीठे अनुभवों के आधार पर जीवन की सफलता-असफलता पर विचार किया जाता है, जीवन के उद्देश्य की पूर्ति-आपूर्ति पर विचार किया जाता है। प्रस्तुत उपन्यास 'गोदान' के सन्दर्भ में भी इसे देखा जा सकता है। उपन्यास के प्रत्येक वर्ग के पात्र अपनी - अपनी समस्याओं से जूझते नजर आते हैं खास तौर पर किसान, भ्रमिक वर्ग के पात्र, अतिशय दीनता और दरिद्रता से संघर्ष करते जूझते पात्र, जिन्दगी में अपनी छोटी-छोटी इच्छाओं-आकांक्षाओं को पूरा करने हेतु जिन्दगी भर निरंतर संघर्ष करते, मेहनत-मजूरी करते पात्र और इन छोटी-छोटी इच्छाओं को अपने मन में ही लिए मर जाते पात्र। कुछ ऐसे पात्र भी जिन्होंने परमार्थ के लिए दीन-दुखियों की सेवा के लिए अपनी संपूर्ण

mnotes.in

जिन्दगी समर्पित कर दी, तो ऐसे भी पात्र जिन्होंने अपनी स्वार्थपरता की सारी पराकाष्ठाएँ, सारी हदें पार कर दीं, इन तमाम पात्रों के जीवन से जुड़ी समस्याओं को उपन्यास गोदान में उभारना ही प्रेमचंद का उद्देश्य है। ग्रामीण-शहरी परिवेश से जुड़ी इस तरह की अनेकानेक समस्याओं को इस उपन्यास में अत्यन्त जीवन्तता से उठाया गया है। इसी में उपन्यास की सार्थकता है। यही उपन्यास का उद्देश्य है।

६.२ गोदान की समस्याएँ एवं उद्देश्य

गोदान सन् १९३६ में प्रकाशित प्रेमचंद का कृषक समस्या पर आधारित उपन्यास है। किसानों का शोषण कितने मुहानों पर, किन-किन रूपों में किस प्रकार से होता है, इसका चित्रण 'गोदान' में होरी की कथा के माध्यम से होता है। चाहे वे जमींदार, पटवारी, कारकून, महाजन हों या फिर पुलिस, समाज एवं धर्म के ठेकेदार हों - ये सब के सब किसानों का शोषण करते हैं, उन्हें असहाय, निरुपाय बना कर छोड़ देते हैं।

गोदान उपन्यास में कथाएँ समानान्तर चलती हैं | ग्रामीण और शहरी और कथाओं के सेतु हैं जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह। प्रेमचन्द ने ग्रामीण और शहरी दोनों जीवन की समस्याओं के साथ - साथ जमींदारों की फिजूलखर्ची-ऐयाशी से उत्पन्न समस्याएँ, पुलिस के अत्याचार, संयुक्त परिवार के विघटन, जाति प्रथा से उत्पन्न समस्याएँ, स्त्री-विषयक समस्याएँ, अनमेल ब्याह, अन्तर्जातीय विवाह, जीवन मूल्यों से संबंधित समस्याओं को मुखरित किया गया है।

प्रेमचंद एक ऐसे भारतीय उपन्यास कार हैं जिन्होंने समाज और जीवन की आलोचना हेतु साहित्य सृजन किया। उन्होंने तत्कालीन जीवन-जगत से जुड़ी अनेक समस्याओं को अपने उपन्यास में चित्रित किया है। प्रेमचन्द्र वास्तव में एक ऐसे समाज की संरचना करते हैं, परिकल्पना करते हैं जिसमें किसी तरह का कोई भेदभाव-अन्तर न हो, कोई किसी का शोषण न करे, समाज समानता का पथगामी हो, जातिगत-वर्गगत-लिंगगत जैसे तमाम तरह के भेदभाव समाप्त हो जाएँ। गोदान, वे इन्हीं प्रसंगों को उकेरने के उद्देश्य से लिखते हैं जिसे उनकी सबसे प्रौढ़ रचना कहा गया है।

'गोदान' उपन्यास का मुख्य उद्देश्य किसानों के जीवन की समस्याओं, उनके शोषण से संबंधित समस्याओं और उनकी अतिशय दीनता-हीनता से सबको परिचित कराना है। उपन्यास केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं है अपितु वह जीवन की सच्चाइयों को उजागर कर हमें सोचने-विचारने के लिए विवश करता है। अपने उपन्यासों के उद्देश्य के संदर्भ में प्रेमचन्द लिखते हैं "हम साहित्य को मनोरंजन और विलासिता की वस्तु नहीं समझते। हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा जिसमें चित्रण की स्वाधीनता का भाव हो, सौन्दर्य का तार हो, सृजन की आत्मा हो, जीवन की सच्चाई का प्रकाश हो, जो हममें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करे, सुलावे नहीं।" गोदान की समस्याओं एवं उद्देश्यों को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत देखा जा सकता है।

muhotes.in

१) किसानों के जीवन में व्याप्त विसंगतियों एवं विडम्बनाओं का यथार्थ चित्रण:

हमारे देश का किसान रात-दीन जी-तोड़ परिश्रम करके अन्न उपजाता है, सबको अन्न देता है लेकिन खुद दाने-दाने को तरसता है, कर्ज के बोझ तले दबा रहता है, फिर भी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहता है, इससे बड़ी विडंबना भला और क्या हो सकती है। गोदान का होरी, समस्त कृषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। उसके जीवन की त्रासदी समग्र कृषकों की त्रासदी है। देश की जमींदारी प्रथा के समय किसानों की स्थिती बद् से बद्तर थी। गाँव के जमींदार एक तरह से आदमखोर जानवर से कम नहीं थे। गाँव के जमींदार, पटवारी, कारकून, सूदखोर महाजन समेत पुलिस, व्यापारी, बिचौलिये, धर्म और समाज के ठेकेदार सभी लोग किसानों की मानसिक- शारीरिक-आर्थिक शोषण की सारी पराकाष्ठाएँ पार कर चुके थे। प्रेमचंद ने गोदान में शोषण के इन सभी हथकंडों को हमारे सामने खोल कर रख दिया है। उपन्यास का मुख्य नायक होरी सीधा सादा-दब्बू किस्म का किसान है जिसे प्राणान्तक इतना दबाया जाता है कि वह अपने जीवन में एक छोटी-सी गाय पालने की इच्छा तक पूरी नहीं कर पाता। गाय उसके लिए प्रतिष्ठासूचक है, सजीव संपत्ति है, इसलिए उसे अपने दरवाजे पर रखने की लालच में पड़ोसी भोला से एक गाय उधार में ले आता है यह सोचकर कि भविष्य में वह मेहनत मजूरी करके भोला को गाय की कीमत चुका देगा, भोला का दूसरा ब्याह भी करवा देगा परन्तु उसका ये स्वप्न पूरा नहीं होता। हीरा, होरी का भाई ईर्ष्यावश गाय को जहर देकर मार डालता है, घर में पुलिस आती है, पुलिस को रिश्वत देना पड़ता है, अपने और हीरा के परिवार के पालन पोषण के लिए कर्ज पर कर्ज, सूद पर सूद का सिलसिला कभी रुकता नहीं, गोबर-झुनिया के ब्याह मे घर पूरे परिवार को समाज के कोपभाजन का शिकार बनना पड़ा, होरी की सारी जमीन, घर सबकुछ शोषकों के हाथों बंधक हो गया और होरी एक किसान से मजदूर बनने के किए विवश हो गया। वृद्धावस्था में अधिक परिश्रमशीलता के कारण मरणासन्न स्थिति में होरी को घर लाया गया, जहाँ धर्म के ठेकेदारों ने होरी को परलोक सुधारने के उद्देश्य से उसकी पत्नी द्वारा उसे गोदान करवाने को कहा। जिस गाय को रखने की अभिलाषा वह इस जीवन में पूरी नहीं कर पाया और जिसके कारण उसकी जिन्दगी तमाम झंझावातों से गुजरी, अब उसी गाय का दान करवा कर उसका परलोक सुधारने का प्रसंग उभरता है, यह उसके जीवन की सबसे बड़ी विडंबना नहीं, तो और क्या है?

होरी का पुत्र गोबर जमींदारों, सूदखोर महाजनों की फितरत को, उनके कुकर्मों को अपने प्रति होने वाले अन्यायों अत्याचारों को भली भाँति समझता है, बार-बार उनका प्रतिरोध करता है, अपने पिता होरी को भी समझाता है परन्तु वह चाह कर भी इस व्यवस्था को बदल नहीं सकता क्योंकी किसानों में संगठन का सर्वथा अभाव है। वे रुढ़िवादी और संस्कारयुक्त है, अंधविश्वासी और धर्मभीरु हैं, इसलिए वे अपना शोषण करने वालों के विरोध में भी कुछ नहीं बोलते | इस संदर्भ में होरी से भोला कहता है – "कौन कहता हैं कि हम तुम आदमी है। हममें आदमियत कहाँ। आदमी वह है जिसके पास धन है, अख्तियार है, इल्म है। हमलोग तो बैल हैं और जुतने के लिए पैदा हुए हैं। उस पर एक दूसरे को देख नहीं सकते। एक का नाम नहीं। एक किसान दूसरे के खेत पर न चढ़े तो कोई जाफा कैसे करे, प्रेम तो संसार से उठ गया।"

गाँव के जमींदार रायसाहब अमरपाल सिंह किसानों के शुभेच्छु बनते हैं, जमींदारी प्रथा समाप्त करने पर बड़ी-बड़ी बातें करते हैं परन्तु अपना स्वार्थ कभी नहीं छोड़ते, लगान लेने के साथ साथ नजराना लेना, जुर्माना वसूलना, इजाफा लगान लेना, बेगारी करवाना कभी नहीं भूलते हैं। रायसाहब की कथनी और करनी का पोल खोलते हुए प्रोफेसर मेहता उनसे कहते हैं - "यदि आप कृषकों के शुभेच्छु हैं और आप की धारणा है कि कृषकों के साथ रियायत होनी चाहिए तो पहले आप खुद शुरू करें, काश्तकारों को बगैर नजराने लिए पट्टे लिखें, बेगार बंद करें, इजाफा लगान की तिलांजलि दे दें, बराबर जमीन छोड़ दें।'

प्रो. मेहता की ये बातें दर्शाती हैं कि रायसाहब की सच्चाई क्या है, वास्तव में किसानों की जिन्दगी कितनी विसंगतियों से भरी हुई है।

२) शोषण के अनेक स्वरूपों का चित्रण:

किसानों का शोषण जमींदार के साथ-साथ उसके कर्मचारी, कारकून, कारिन्दा, सरकार के पटवारी, पुलिस वाले सभी मिलकर करते हैं। गाँव के सूदखोर महाजन का शोषण चक्र इतना दमनकारी है कि वे किसानों की लाचारी-मजबूरी का लाभ उठाकर ऊँचे से ऊँचे दर पर ब्याज वसूल करते हैं। साहूकार के ब्याज की दर एक आना रुपया से लेकर दो आना रुपया तक है जो कि पचहत्तर प्रतिशत वार्षिक से लेकर एक सौ पचास प्रतिशत तक पहुँचती है लेकिन किसानों के पास कर्ज लेने के अलावा और कोई चारा नहीं है। किसानों को खेत जोतने, खाद डालने, बीज बोने के लिए, बैल के लिए, लगान चुकाने के लिए, बच्चों की शादी-ब्याह के लिए या अन्य किसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए कर्ज लेना ही पड़ता है। उपन्यास के होरी के साथ भी यही होता है जिसकी भरपाई वह आजीवन नहीं कर पाता, अपने बच्चों के लिए विरासत में वही कर्ज देकर मर जाता है। होरी की ये बातें उसके दर्द को दर्शाती हैं जब वह कहता है - 'कितना चाहता हूँ कि किसी से एक पैसा कर्ज न लूँ लेकिन, हर तरह का कष्ट उठाने पर भी गला नहीं छूटता।' होरी यह अनुभव करता है कि इसी प्रकार यदि कर्जे पर ब्याज पर ब्याज चढ़ता रहा तो एक दिन उसका घर-द्वार सब नीलाम हो जाएगा और बच्चे आश्रयहीन होकर मजबूरन भीक माँगेंगे। उसे संतोष बस इस बात का है कि यह विपत्ती, यह खौफनाक स्थिती सिर्फ उसी की नहीं है अपितु उसकी तरह प्राय: सभी किसान कर्ज और सूद की त्रासदी से ग्रसित हैं, सभी की जिन्दगी बद् से बद्तर हो रही है। होरी अनुभव करता है कि जो सबके साथ हो रहा है वही उसके साथ हो रहा है। कानून के रक्षक पुलिसवाले, थानेदार भी उन्हीं को कमजोर समझकर सताते हैं, वसूली करते हैं, कानून का धौंस जमाकर रिश्वत लेते हैं। समाज और धर्म के ठेकेदार गर्भवती विधवा को अपने घर में शरण देने, मानव धर्म निभाने के बावजूद होरी और उसके परिवार पर इतना सख्त जुर्माना लगाता है कि उन सबकी जिन्दगी बिखर जाती है। इस प्रकार सर्वहारा वर्ग जो कि हर तरह से कमजोर है, उनपर हर ताकतवर व्यक्ति अपना जोर अपनाकर उनका शोषण करता रहता है, उपन्यास में इस समस्या की अत्यन्त सजगता और सजीवता से अभिव्यक्त करना लेखक का मुख्य उद्देश है।

३) पूँजीवादी व्यवस्था को समूल मिटाने का संकल्प:

'गोदान' उपन्यास में प्रेमचंद पूंजीवादी व्यवस्था को अत्यन्त सूक्ष्मता से दर्शाते हैं। शहर में मिल का मालिक खन्ना 'गोदान' में पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। खन्ना अपने

ऐश्वर्य के दर्प में इतना अहंकारी बन जाता है कि मजदूरी कर उचित माँग को भी ठुकरा देता है, उनके साथ अत्यन्त क्रूर व्यवहार करता है। परिणाम स्वरूप सभी मजदूर खन्ना की मिल में आग लगा देते हैं। आखिरकार वे मिल में मेहनत-मजूरी करके भी कितने दिन खाली पेट रहेंगे। उनकी सबसे बड़ी जरूरत हैं रोटी, जिसकी खातिर उनका गाँव घर-परिवार सबकुछ छूट जाता है इसके बावजूद भी वे अपने परिवार को दो वक्त की रोटी नहीं खिला सकते हैं। ऐसे में उन्हें संगठित होकर अपने अधिकारों के लिए विद्रोह के रास्ते पर उतरना ही पड़ता है हिंसात्मक रूख अपनाना ही पड़ता है। जीवन के इस पड़ाव पर पहुँचते पहुँचते शायद प्रेमचंद को भी यह आभास हो गया था कि गाँधीवादी अहिंसात्मक रास्ते पर चलकर शोषण के इस चलन को या परम्परा को समाप्त नहीं किया जा सकता है। इसको समूल मिटाने के लिए विद्रोही तेवर, हिंसात्मक तेवर अपनाने ही होंगे। बिना अपने अधिकारों की लड़ाई लड़े दो वक्त की रोटी मिलनी मुश्किल है। गोबर एक ऐसा पात्र है जो प्रगतिशील विचारोंवाला है और शोषक की नियत से अच्छी तरह वाकिफ है। गाँव में वह जमींदारी प्रथा समाप्त करना चाहता है तो वही वह शहर की पूँजीवादी व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेंकना चाहता है उसके लिए लाठी खाकर गम्भीर रूप से घायल भी हो जाता है परन्तु इस संघर्ष को नहीं त्यागता।

इस प्रकार उपन्यास का उद्देश्य है कि समाज को पूँजीवादी व्यवस्था को समूल नष्ट करने हेतु सजग-सतर्क रहने, संघर्ष करने के लिए प्रेरित करना है।

४) संगठित समाज की परिकल्पना:

प्रेमचंद का मानना है कि समाज में हर तरह के शोषण का विरोध करने के लिए उस पूरे वर्ग को एकजूट होकर, संगठित होकर संघर्ष करना होगा तभी समाज की स्थिति में परिवर्तन होगा, चाहे वह गाँव हो या फिर शहर। प्रत्येक व्यक्ति को, प्रत्येक समाज को अपना संघर्ष स्वयं करना होगा। कुछ लोग अपने तुच्छ स्वार्थों की पूर्ति हेतु समाज की एकता को भंग करते हैं इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगनी चाहिए।

कोई भी संगठित वर्ग, संगठित समाज बड़े से बड़े संघर्ष पर विजय प्राप्त कर सकता है, अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।

प्रेमचंद एक ऐसे राष्ट्र की परिकल्पना करते हैं जो एकता के सूत्र में, समानता के सूत्र में, अखण्डता के सूत्र में बँधे हुए हों, जहाँ रामराज्य की स्थापना हो, कहीं किसी तरह की असमानता, अन्याय, अत्याचार, शोषण, आतंक, अंधविश्वास न हो। कथनी - करनी में समानता हो। देश का संगठित वर्ग अपने भविष्य के साथ-साथ भारत देश की तस्वीर बदल सकते हैं | उपन्यास 'गोदान' का गो़बर, भोला और प्रोफेसर मेहता इस तथ्य से भली-भाँति अवगत हैं।

५) सामाजिक क्रान्ति में स्त्रियों की भूमिका:

गोदान की धनिया एक ऐसी स्त्री पात्र है जिसमें अदम्य दृढ़ता, साहस, कर्मठता है। वह स्पष्टवादी, निडर और अडिग औरत है। वह एक साथ सामाजिक अन्याय, अत्याचार से, रुढ़ियों से, शोषण से जूझती है। वह बाहर से जितनी कठोर नजर आती है अन्दर से उतनी ही कोमल करुणाशील है। वह उपन्यास में अनेक स्थानों पर किसानों की दशा के बारे में,

अपने प्रति होने वाले शोषण के विषय में विद्रोह कर चुकी है, विरोध कर चुकी है। प्रेमचंद का मानना है कि समाज में परिवर्तन लाने के लिए स्त्रियों की भूमिका का निर्वाह सही ढंग से करना होगा। स्त्रियों की सहायता लिए सामाजिक क्रान्ति कदापि संभव नहीं हैं। उपन्यास में प्रेमचंद प्रोफसर मेहता जी के माध्यम से कहवाते है - "नारी का कार्यक्षेत्र बहुत विस्तृत है वह यदि पुरुषों का अंधानुकरण करेगी तो उससे समाज का कोई कल्याण नहीं होगा। नारी की विद्या और अधिकार हिंसा और विध्वंस में नहीं अपितु सृष्टि और पालन में है।" मेहता जी का यह भी मानना है कि स्त्रियों को खुद को मिटाने से कुछ काम नहीं होने वाला है, कोई परिवर्तन नहीं होने वाला है, स्त्रियों को समाजकल्याण के लिए अपने अधिकारों की रक्षा करनी पड़ेगी।

६) सेवा का आदर्श:

प्रेमचंद में गोदान के पात्रों के माध्यम से सेवा के महत्त्व को प्रतिपादित किया है। मेहताजी मानवता, परोपकार, त्याग, सेवा में दृढ़ विश्वास रखते हैं। उनकी प्रेरणा से प्रभावित होकर डॉ. मालती अपने जीवन की दिशा ही बदल देती है। त्याग, सेवा, परमार्थ, परोपकार, दीन-हीनों का कल्याण ही उसके जीवन का परम उद्देश्य बन जाता है। ग्रामवासियों, गरीबों को बिना फीस लिए इलाज करती हैं, दवा देती है, अपने आत्मसुख को त्यागकर जन कल्याण को ही अपने जीवन का उद्देश्य बना लेती हैं।

समग्रतः इन तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गोदान में प्रेमचंद की दृष्टि अत्यन्त व्यापक और प्रौढ़ है जिसमें इन्होंने किसानों के जीवन की त्रासदी को जितनी तल्लीनता से व्यापक रूप में अभिव्यक्त किया है, उनके जीवन के प्रत्येक कोनलों को अत्यन्त बारीकी से, सूक्ष्मता से अभिव्यक्ति प्रदान की है उतनी ही सुक्ष्मता से इन्होंने समाज की अन्य समस्याओं को भी उकेरा है।

ग्रामीण समाज की समस्याएँ भिन्न हैं, शहरी समाज की समस्याएँ अलग हैं औरे भिन्न - भिन्न रूपों में हमारे ग्रामीण और शहरी परिवेश को दीमक के रूप में खा रही है। इन तमाम मुद्दों की ओर, समस्याओं की ओर समाज का ध्यान आकृष्ट करना, पाठकों को सजग, जागरुक बनाना लेखक का मुख्य उद्देश्य है।

६.३ सारांश

सारांशतः प्रेमचंद एक ऐसे उपन्यासकार हैं जो अपने उपन्यासों के माध्यम से किसानों-श्रमिकों के जीवन की एक-एक समस्याओं की परत-दर-परत को उधारते हैं, उनके साथ सदियों से हो रहे अनवरत शोषण की त्रासदी को यथार्थपरक शैली में इस प्रकार हमारे समक्ष रखते हैं कि उनके एक-एक चरित्र की तस्वीर, शोषण का पूरा दृश्य हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। पाठक उन तत्कालीन समस्याओं के साथ आज के युग की समस्याओं को जोड़कर देखने लगता है।

प्रेमचंद समाज के भेद-भाव के अभिशाप को हमेशा-हमेशा के लिए मिटाकर समानता के धरातल पर एक स्वस्थ समाज का निर्माण करना चाहते थे, जहाँ जातिगत, वर्गगत, धर्मगत भेदभाव न हो, कोई किसी का शोषण न कर सके, समाज के अंतिम व्यक्ति के साथ भी

किसी तरह का कोई अन्याय, अत्याचार, दुर्व्यवहार न हो। लेकिन ऐसा आज तक कभी संभव नहीं हो सका और न ही कभी संभव हो सकता है। तभी तो उपन्यास में प्रगतिशील चेतना का प्रतीक गोबर कहता है – "भगवान तो सबको बराबर बनाते हैं। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है। शहर के प्रोफेसर मेहता जी भी यही मानते हैं कि मनुष्य की बुद्धि हमेशा से राज करती आयी है और करेगी भी। छोटे-बड़े का भेद हमेशा से है और रहेगा भी क्योंकि यह भेद सिर्फ धन के कारण नहीं है, बल्कि बुद्धि, रूप, चरित्र, शक्ति, प्रतिभा आदि अनेक ऐसे कारण हैं जिसकी वजह से समाज से इस असमानता को नहीं मिटाया जा सकता है।"

असमनता, वर्ग भेद के कारण व्यक्ति मानसिक, शारीरिक, आर्थिक शोषण का शिकार होता है। साधारण जनमानस अपनी रूढ़िगत परम्पराओं, संस्कारों सामाजिक मर्यादा, बंधनो में बँधे होने के कारण, अपनी दब्बू प्रवृत्ति के कारण भी प्रतिरोध नहीं करता, जिसके कारण शोषक वर्ग उनका और अधिक शोषण करते हैं। इस उपन्यास में दर्शाया गया है कि किसानों का शोषण कौन करता है, कितने रूपों में उनका शोषण हो रहा है और उस शोषण के लिए समाज के कौन-कौन से लोग जिम्मेदार है, उस शोषका का शोषित वर्ग पर क्या प्रभाव पड़ता है इन तमाम जीवन-सत्य को उद्घाटित करता है गोदान। प्रेमचन्द के अनुसार उपन्यास का उद्देश्य केवल पाठकों का मनोरंजन करना या आनंदित करना नहीं है। प्रेमचंद की कसौटी पर वही साहित्य खरा उतरेगा, जिसमें जीवन-सत्य उद्घाटित हुआ हो, सृजन की आत्मा हो, स्वाधीनता का भाव एवं सौन्दर्य का सार हो, जिनमें गति, संघर्ष और बेचैनी पैदा करने की क्षमता हो। इसी में साहित्य का, उपन्यास का उद्देश्य निहित है।

गोदान उपन्यास में किसानों के जीवन में व्याहा अनगिनत विसंगतियों, विडंबनाओं विद्रूपताओं और विकृतियों को लेखक ने दर्शाया है, शोषण करने के विभिन्न स्वरूपों पर प्रकाश डाला है। पीड़ित वर्ग की भयावह जर्जर आर्थिक दशा का आँखों देखा हाल प्रस्तुत किया है। यही नहीं जमींदारी प्रथा के साथ-साथ पूँजीवादी व्यवस्था को समाप्त करने पर बल दिया है। इसके लिए वर्ग समूह को संगठित होकर व्यवस्था के विरोध में आवाज उठाने, विद्रोह करने और अपने लिए न्याय और अधिकारों की लड़ाई लड़ने पर बल दिया गया है। संगठित होकर संघर्ष करके ही अपने अधिकारों की प्राप्ति संभव है जिसमें स्त्रियों की भूमिका होना, सामाजिक क्रान्ति में स्त्रियों की भूमिका होना अति आवश्यक है। इस तरह प्रेमचंद के इन विचारों को देखकर यह अनुभव होता है कि गोदान तक आते-आते वे यह समज चुके थे कि अब गाँधी जी के अहिंसात्मक आंदोलनों से समाज में कुछ कुछ बड़ा विशेष परिवर्तन होने वाला नहीं है। किसानों, मजदूरों के साथ जैसा शोषण हो रहा है उसे रोकने के लिए यदि हिंसात्मक रवैया अपनाना पड़े तो कोई फर्क नहीं पड़ता है।

प्रेमचंद इस उपन्यास में सर्वहारा वर्ग की समस्याओं को जितनी संजीदगी से दर्शाते हैं वे उतनी ही संवेदना के साथ उनके जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए समाज-कल्याण जनहित में परमार्थ करने पर भी बल देते हैं। वे मानते है कि दौलत से व्यक्ति के मन में अहंकार की भावना उत्पन्न होती है और हृदय से त्याग, सेवा, करुणा, दया जैसी सद्वृत्तियाँ समाप्त हो जाती है। अत: आवश्यक है कि धन दौलत के बजाय मानवीय सद्गुणों को अपनाया जाए, तभी समाज में परिवर्तन संभव होगा।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि गोदान एक समस्या प्रधान उपन्यास है। इस समस्याओं से परत-दर-परत उघारना, समस्या की जड़ तक, तह तक पहुँचना और उनके समाधान का विस्तृत विवेचन-विश्लेषण करना, समाज में आदर्श की स्थापना करना ही उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है।

६.४ वैकल्पिक प्रश्न

प्र.१) प्रेमचंद समाज से क्या समूल नष्ट करना चाहते थे?

(क) असमानता (ख) एकता

(ग) अखण्डता (घ) स्वतंत्रता

उ. (क) असमानता

प्र.२) गोदान में किनकी समस्याओं को प्रमुखता से दर्शाया गया है?

(क) बच्चों की (ख) बूढ़ों की

(ग) शिक्षकों की (घ) किसानों की

उ. (घ) किसानों की

प्र.३) प्रेमचंद के अनुसार साहित्य का उद्देश्य इनमें से क्या नहीं है?

(क) मनोरंजन और विलासिता (ख) जनकल्याण

(ग) परमार्थ (घ) समाजहित

उ. (क) मनोरंजन और विलासिता

प्र.४) गोदान उपन्यास में यह कथन किसका है - 'कितना चाहता हूँ कि किसी से एक पैसा कर्ज न लूँ लेकिन, हर तरह का कष्ट उठाने पर भी गला नहीं छूटता।'

(क) राजसाहब (ख) गोवर

(ग) होरी (घ) हीरा

उ. (ग) होरी

प्र.५) होरी गाय को किससे उधार माँग कर ले आता है?

(क) शोभा (ख) हीरा

(ग) भोला (घ) मातादीन

उ. (ग) भोला

munotes.in

प्र.६) शहर में मिल का मालिक कौन है?

(क) खन्ना (ख) रायसाहब

(ग) मेहता जी (घ) मेहरा जी

उ. (क) खन्ना

प्र.७) गोदान में कौन अपनी सेवा से समाज कल्याण करता है?

(क) होरी (ख) सिलिया

(ग) मालती जी (घ) गोविन्दी खन्ना

उ. (ग) मालती जी

प्र.८) प्रेमचंद के अनुसार पूँजी का अहंकार ठीक नहीं है क्योंकि यह हमेशा क्या होती है?

(क) शाश्वत (ख) चिरस्थायी

(ग) चिरकालिक (घ) क्षणभंगुर

उ. (घ) क्षणभंगुर

प्र.९) "यदि आप कृषकों के शुभेच्छु हैं और आपकी धारणा है कि कृषकों के साथ रियायत होनी चाहिए तो पहले आप खुद शुरू करें, काश्तकारों को वगैर नजराने लिए पट्टे लिखें, बेगार बंद कर दे, इजाफा लगान की तिलांजलि दे दें, बराबर जमीन छोड़ दें।" यह कथन कौन किससे कहता है?

(क) प्रोफेसर मेहता रायसाहब से (ख) प्रो. मेहता खन्ना से

(ग) गोबर रायसाहब से (घ) होरी रायसाहब से

उ. (क) प्रोफेसर मेहता रायसाहब से

प्र.१०) झुनिया का अपराध क्या है?

(क) चोरी करना (ख) गहने छुपाना

(ग) अनपढ़ होना (घ) विधवा होकर दूसरी जाति के लड़के से प्रेम करना

उ. (घ) विधवा होकर दूसरी जाति के लड़के से प्रेम करना

६.५ लघूत्तरीय प्रश्न

प्र.१) गोदान का मुख्य उद्देश्य क्या है?

उ. कृषक जीवन की समस्याओं, उनके साथ हो रहे शोषण का चित्रण करना मुख्य उद्देश्य है।

प्र.२) होरी को झुनिया को आश्रय देने के कारण समाज के कठोर दंड के रूप में जुर्माना क्यों देना पड़ता है?

उ. कारण यह है कि झुनिया दूसरी जाति की एक विधवा लड़की है और वह गोबर से प्रेम करती है, उसके बच्चे की माँ बनने वाली है। उसे आश्रय देने के कारण होरी को कठोर दंड का सामना करना पड़ा।

प्र.३) मि. खन्ना अपने किस मिल में कार्यरत मजदूरों का शोषण करते हैं?

उ. मि. खन्ना चीनी मिल के मैनेजिंग डायरेक्टर हैं, मजदूरों का खून चूसते हैं।

प्र.४) यह कथन किसका है – "भगवान तो सबको बराबर बनाते हैं। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।"

उ. यह कथन गाँव के प्रगतिशील युवक होरी के बेटे गोबर का है।

प्र.५) गोदान में कौन बार-बार स्वयं को किसानों का शुभेच्छु मानता है?

उ. रायसाहब अमरपाल सिंह मानते हैं।

प्र.६) प्रेमचंद के अनुसार रायसाहब अमरपाल सिंह का चरित्र कैसा है?

उ. रँगे सियारों की तरह रायसाहब का चरित्र है।

प्र.७) प्रो. मेहता के अनुसार किसकी कथनी और करनी में कोई में एकरूपता नहीं है?

उ. रायसाहब अमरपाल सिंह की कथनी-करनी में एकरूपता नहीं है।

प्र.८) प्रेमचंद के अनुसार शोषण का विरोध किस प्रकार किया जा सकता है?

उ. शोषण का विरोध संगठित होकर किया जा सकता है।

प्र.९) प्रेमचंद रंगा सियार किसे कहते हैं?

उ. राय साहब अमर पाल सिंह को कहते हैं।

प्र.१०) उपन्यास 'गोदान' में कौन बाहर से इस्पात जैसी कठोर पर भीतर से मोम जैसी मुलायम हैं?

उ. धनिया का व्यक्तित्व ऐसा ही है।

प्र.११) हिन्दी साहित्य में किस उपन्यास को भारतीय ग्रामीण जीवन का दर्पण कहा जा सकता है?

उ. गोदान को कहा जा सकता है।

munotes.in

६.६ बोध प्रश्न

प्र.१) 'गोदान' उपन्यास में निहित समस्याओं पर प्रकाश डालिए।

प्र.२) 'गोदान' उपन्यास का उद्देश्य लिखिए।

प्र.३) 'गोदान' उपन्यास के माध्यम से लेखक प्रेमचंद क्या कहना चाहते हैं? सोदाहरण लिखिए।

प्र.४) गोदान की समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए स्पष्ट कीजिए कि लेखक को अपने उद्देश्य में पूरी सफलता प्राप्त हुई है?

प्र.५) 'गोदान' शीर्षक की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।

६.७ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१. प्रेमचंद और उनका युग - रामविलास शर्मा

२. साहित्य का उद्देश्य - प्रेमचंद

३. प्रेमचंद - डॉ. सत्येन्द्र (सं.)

४. प्रेमचंद का संघर्ष - श्री नारायण पांडेय

५. कलम था मजदूर - मदन गोपाल

६. कलम का सिपाही - अमृतराय

७. कलम का मजदूर : प्रेमचंद - राजेश्वर गुरु

८. कलाकार प्रेमचंद - रामरतन भटनागर

९. कुछ विचार - प्रेमचंद

१०. गोदान : एक पुनर्विचार - परमानंद श्रीवास्तव

११. गोदान : नया परिप्रेक्ष्य - गोपाल राय

१२. साहित्य का भाषा चिन्तन - सं. वीणा श्रीवास्तव

१३. प्रेमचंद - सं. सत्येन्द्र ('प्रेमचंद'में संकलित डॉ. त्रिभुवन सिंह का निबंध 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद')

१४. प्रेमाश्रम - प्रेमचंद

१५. प्रतिज्ञा - मुंशी प्रेमचंद

*****

munotes.in

७

कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी
निबन्ध : नाखून क्यों बढ़ते हैं !

इकाई की रूपरेखा

७.० इकाई का उद्देश्य

७.१ प्रस्तावना

७.२ निबन्ध : नाखून क्यों बढ़ते हैं !

७.२.१ नाखून क्यों बढ़ते हैं ! निबन्ध की अन्तर्वस्तु

७.२.२ नाखून क्यों बढ़ते हैं ! निबन्ध का प्रतिपाद्य

७.३ सारांश

७.४ उदाहरण – व्याख्या

७.५ वैकल्पिक प्रश्न

७.६ लघुत्तरीय प्रश्न

७.७ बोध प्रश्न

७.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

७.० इकाई का उद्देश्य

- पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' में संग्रहीत निबन्धों में से पहले दस निबंधों का अध्ययन सम्मिलित है। ये निबंध हैं - 'नाखून क्यों बढ़ते हैं', 'आम फिर बौरा गए', 'शिरीष के फूल', 'भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य', 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद', 'ठाकुरजी की बटोर', 'संस्कृतियों का संगम', 'समालोचक की डाक', 'महिलाओं की लिखी कहानियाँ' और 'केतुदर्शन'।
- इन निबंधों का अध्ययन करने के बाद आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के संपूर्ण व्यक्तित्व का मूल्यांकन भी किया जायेगा।
- इस इकाई के अंतर्गत 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध का अध्ययन सम्मिलित है।
- संपूर्ण इकाई का अध्ययन करने के बाद छात्र आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की निबंध-लेखन संबंधी विशेषताओं को समझने और समझाने में सक्षम होंगे।

७.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिंदी के समर्थ निबंधकार हैं। वे हिंदी के ऐसे गिने-चुने निबंधकारों में से एक हैं, जिनमें विषय-वैविध्यता के साथ-साथ अभिव्यक्ति की अद्भुत शक्ति भी थी। उनके निबंध उनकी वैयक्तिक विशेषताओं से गहरे तक संपृक्त हैं। उनके निबंधों में

munotes.in

इतिहास-चेतना और विशिष्ट संस्कृति दर्शन देखने को मिलता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का व्यक्तित्व, उदारचेता साहित्यकार का व्यक्तित्व है और इसमें सामंजस्य की अद्भुत भावना देखने को मिलती है। उनकी इसी भावना के कारण उनके विचार अन्य निबंधकारों से विशिष्ट हो जाते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कुछ विशेषताएं उनके निबंधों के आधार पर चिन्हित की जा सकती हैं जैसे, उनकी इतिहास के प्रति विशेष रूचि उनके निबंधों में देखने को मिलती है, धर्म और संस्कृति के संबंध में उनके मौलिक विचार उनके निबंधों में दिखाई देते हैं, पौराणिक एवं संस्कृत-साहित्य के प्रति एक सम्मान का भाव देखने को मिलता है। मानवतावाद के प्रति उनके विचार अपने समय की सबसे खास व्याख्या के रूप में देखे जा सकते हैं। उनके लिए साहित्य की रचना केवल वाग्वैदग्ध्य नहीं है बल्कि उसका एक विशिष्ट उद्देश्य है और वह उद्देश्य है - लोक कल्याण। ऐसा साहित्य ही श्रेयस्कर है जो सामाजिक मनुष्य के मंगल विधान को सुनिश्चित करता है। 'अशोक के फूल', 'विचार और वितर्क', 'कल्पलता', 'कुटज', 'आलोकपर्व' एवं 'विचार प्रवाह' आदि उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह हैं, जिनमें उनके संपूर्ण मानसिक जगत की तर्कसंगत अभिव्यक्ति देखने और समझने को मिलती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कई उपन्यासों की भी रचना की जैसे, 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारुचंद्रलेख', 'पुनर्नवा', 'अनामदास का पोथा'। शोध और आलोचना संबंधी उनके कई ग्रंथ प्रकाशित हुए जिनमें, 'सूर साहित्य', 'हिंदी साहित्य की भूमिका', 'कबीर', 'हिंदी साहित्य का आदिकाल', 'हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास', 'मध्यकालीन बोध का स्वरूप', 'सहज साधना', 'मध्यकालीन धर्म साधना', 'नाथ संप्रदाय', 'सिख गुरुओं का पुण्य स्मरण', 'मेघदूत एक पुरानी कहानी', 'कालिदास की लालित्य योजना', 'मृत्युंजय रवीन्द्र', 'लालित्य तत्व', 'साहित्य का मर्म', 'साहित्य का साथी', 'प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद' आदि उल्लेखनीय हैं। उनके द्वारा सृजित इस तालिका में जो विषय सम्मिलित हैं, उनसे हम उनकी रूचि का अंदाजा सहज ही लगा सकते हैं। एक सर्जक व्यक्ति कितनी ही विधाओं में रचना करे परंतु उसका अपना एक व्यक्तित्व उन सभी में अनुस्यूत रहता है। इन ग्रंथों से इतिहास और परंपरा के प्रति उनके एक खास लगाव का अंदाजा हम सहज ही लगा सकते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य को वैचारिक रूप से नई दिशाओं से संपन्न बनाया। उन्होंने हिंदी साहित्य के इतिहास की कई भूलों को संशोधित किया। तत्कालीन वैचारिक अवधारणाओं को भारतीय इतिहास और परंपरा के अनुरूप विश्लेषित किया। जिन विषयों को वे अपने शोधग्रंथों में उठा सकते थे या जिन विषयों पर विस्तृत और व्यापक गंभीर चिंतन की आवश्यकता थी, वहां तो हमें अलग ग्रंथ ही मिलते हैं, पर असंख्य छोटे-छोटे वैचारिक सूत्र सिद्ध करने के लिए उन्होंने निबंधों का सहारा लिया। इसीलिए उनके निबंध हमें उनकी पूरी विचार-सरणि का सहज अभिव्यक्ति-करण प्रतीत होते हैं।

७.२ निबन्ध : नाखून क्यों बढ़ते हैं !

७.२.१ नाखून क्यों बढ़ते हैं ! निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध लेखन की एक विशिष्ट शैली है। वे जिस भी विषय पर निबंध लिखते हैं, उस विषय को अपने वैविध्यपूर्ण व्यक्तित्व के अनुरूप शोध की गंभीरता, विद्वता की आभा और हास्य की उमंग से सजाते हैं। विषय कितना भी जटिल क्यों

न हो पर वे अपनी अभिव्यक्ति शैली से उसे सरल और सरस रूप में प्रस्तुत करते हैं। 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध उनकी इन्हीं विशेषताओं का उदाहरण है। यह निबंध एक तरह से पूरे मानवीय इतिहास में मानवीयता का मूल्यांकन करता दिखाई देता है।

'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध में आचार्य द्विवेदी ने नाखूनों को मनुष्य की पाशविक प्रवृत्ति का प्रतीक बनाकर पूरे इतिहास में इस प्रवृत्ति के मूल्यांकन का प्रयास किया है। बेहद हल्के फुल्के तरीके से वे एक छोटी बालिका के प्रश्न से अपनी बात आरंभ करते हैं कि 'आदमी के नाखून क्यों बढ़ते हैं ?' बालिका के इस जिज्ञासापूर्ण प्रश्न का समाधान वह अन्य तरीके से भी कर सकते थे पर दरअसल यह एक अवसर था। इस बहाने पूरी मनुष्यता के मूल्यांकन हेतु बालिका के इस प्रश्न के साथ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कल्पना सचेत हो जाती है और इस कल्पना के सहारे वे लाखों वर्षों के परिवेश में गमन करने लगते हैं। नाखून जैसे तुच्छ विषय पर वे अपनी कल्पना शक्ति से लोक-कल्याण के विषय की एक इमारत खड़ी कर देते हैं। आचार्य अपनी बात को आरंभ करते हुए कहते हैं कि "कुछ लाख ही वर्षों की बात है, जब मनुष्य जंगली था; वनमानुष जैसा। उसे नाखून की जरूरत थी। उसकी जीवन रक्षा के लिए नाखून बहुत जरूरी थे। असल में वही उसके अस्त्र थे। दांत भी थे, पर नाखून के बाद ही उनका स्थान था।" इस तरह वे यह स्पष्ट कर देते हैं कि अपने विकास के आरंभिक दौर में मनुष्य आत्मरक्षा के लिए नाखूनों का प्रयोग करता था। इस तरह उस समय मनुष्य के लिए नाखून अत्यंत महत्व का विषय थे। इसीलिए वह हास्यपरक उत्सुकता से कहते हैं, "मैं हैरान होकर सोचता हूँ कि मनुष्य आज अपने बच्चों को नाखून कटने के लिए डांटता है। किसी दिन -कुछ थोड़े लाख वर्ष पूर्व - वह अपने बच्चों को नाखून नष्ट करने पर डांटता होगा।"

नाखून आत्मरक्षा का विषय थे, इसी संदर्भ से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने शोध अनुरूप स्वभाव के कारण मानव इतिहास में आत्मरक्षा के अन्य उपकरणों की जानकारी व्यंजनापूर्ण अर्थों में देने में संलग्न हो जाते हैं। जैसे-जैसे सभ्यता का विकास हुआ, मनुष्य के आत्मरक्षा के उपकरण भी बदलते गए। जैसे-जैसे मनुष्य में चेतना का विकास हुआ, मनुष्य नाखूनों के अतिरिक्त कुछ बाहरी साधनों का प्रयोग भी अपनी आत्मरक्षा के लिए करने लगा। जैसे उनके अनुसार रामचंद्रजी की वानरी सेना के पास पत्थर के ढेले और पेड़ की डालें आदि हथियार के रूप में उपलब्ध थे। अपनी विकसित होती चेतना के क्रम में मनुष्य ने हड्डियों के भी हथियार बनाए। महर्षि दधीचि की कथा से हम सभी परिचित हैं, जिनकी हड्डियों से बनाए गए वज्र का प्रयोग इंद्र के द्वारा किया गया था। इसके बाद धात्विक हथियारों की बारी आती है और लोहे के शस्त्र और अस्त्र निर्मित किए गए। उस समय इनका महत्व कितना अधिक था, इसका अंदाजा हम आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के इस विवरण से लगा सकते हैं कि "देवताओं के राजा तक को मनुष्य के राजा से इसलिए सहायता लेनी पड़ती थी कि मनुष्यों के राजा के पास लोहे के अस्त्र थे।" नाखूनों के बहाने वे अपने अभीष्ट की खोज में लगे हुए हैं और इसी क्रम में वे आर्यों और असुरों के संघर्ष में अस्त्रों और शस्त्रों के महत्व को विश्लेषित करते हुए यह निष्कर्ष निकालते हैं कि क्योंकि आर्यों के पास लोहे के अस्त्र-शस्त्र एवं घोड़े दोनों थे, इसीलिए वे नाग, सुपर्ण, यक्ष, गंधर्व, असुर, राक्षस आदि सभी से जीतते गए। उनके साम्राज्य पर विजय पाते गए।

आगे के विकास क्रम में मनुष्य ने पलीते वाली बंदूकों, कारतूस और तोपों, बम, बमवर्षक वायुयानों आदि का विकास किया और साथ ही एटम बम भी, जिसकी विध्वंसक विभीषिका द्वितीय विश्वयुद्ध में देखी गई थी, जब ६ अगस्त १९४५ को जापान के शहर हिरोशिमा और ९ अगस्त १९४५ को नागासाकी में परमाणु बमों से हमला किया गया। वह विभीषिका मानवता कभी भूल नहीं सकती। इस अग्रिम विकास को आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी किस नजरिए से देखते हैं, उन्हीं के शब्दों में "इतिहास आगे बढ़ा। पलीते वाली बंदूकों ने, कारतूसों ने, तोपों ने, बमों ने, बमवर्षक वायुयानों ने इतिहास को किस कीचड़-भरे घाट तक घसीटा है, यह सबको मालूम है। नख-धर मनुष्य अब एटम-बम पर भरोसा करके आगे की ओर चल पड़ा है। पर उसके नाखून अब भी बढ़ रहे हैं। अब भी प्रकृति मनुष्य को उसके भीतर वाले अस्त्र से वंचित नहीं कर रही है, अब भी वह याद दिला देती है कि तुम्हारे नाखून को भुलाया नहीं जा सकता। तुम वही लाख वर्ष पहले के नख-दंतावलंबी जीव हो - पशु के साथ एक ही सतह पर विचरने वाले और चरने वाले।"

यही वह बिंदु है जहां आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी निबंध के मंतव्य को स्पष्ट रूप से चिन्हित करते हैं। दरअसल उनके मन में यह स्पष्ट है कि जिसे हम विकास समझते हैं, वास्तव में वह हमारी बर्बरता का क्रमबद्ध विकास है। आत्मरक्षा के अन्य उपादानों का विकास हो जाने से नाखून इस संदर्भ में अपनी महत्ता को खो चुके हैं। और मनुष्य के लिए उसका उपयोग भी बदल गया है। अब वे सौंदर्य को बढ़ाने वाले कारक के रूप में जाने जाते हैं। परंतु नाखूनों जैसी मनुष्य के भीतर की जो पाशविक वृति है, उसका क्या ? इसीलिए वे कहते हैं कि, "लेकिन यह भी कैसे कहूँ, नाखून काटने से क्या होता है ? मनुष्य की बर्बरता घटी कहाँ है, वह तो बढ़ती जा रही है। मनुष्य के इतिहास में हिरोशिमा का हत्याकांड बार-बार थोड़े ही हुआ है। यह तो उसका नवीनतम रूप है। मैं मनुष्य के नाखून की ओर देखता हूँ, तो कभी कभी निराश हो जाता हूँ। ये उसकी भयंकर पाशविक वृत्ति के जीवंत प्रतीक है। मनुष्य की पशुता को जितनी बार भी काट दो, वह मरना नहीं जानती।" इन्हीं सब के चलते उनके मन में स्पष्ट रूप से कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं कि मनुष्य आखिर किस ओर बढ़ रहा है ? पशुता की ओर या मनुष्यता की ओर ? अस्त्र बढ़ाने की ओर या अस्त्र काटने की ओर ? उनके अनुसार नाखून हमारी पशुता के अवशेष हैं और दूसरी ओर यह बढ़ते हुए अस्त्र-शस्त्र हमारी पशुता की निशानी हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लिए मानवता की प्रतिष्ठा एक साहित्यिक मूल्य है। उनके लिए मानवीयता एक ऐसा तत्व है जो हमारे विकास का स्वाभाविक मानदंड है। मनुष्य अपनी ऐतिहासिक बुराइयों को धीरे-धीरे छोड़कर ही सही मायने में मनुष्य बन सकता है। जिस प्रकार जाति - वर्ण का दुराग्रह, लिंगभेद और रंगभेद का दुराग्रह आदि जैसी प्रवृत्तियों को छोड़कर हमने आधुनिकता की ओर कदम बढ़ाए हैं, तो क्या अस्त्रों-शस्त्रों की इस होड़ को समाप्त करके हम मनुष्यता की एक नई परिभाषा लिखने में सक्षम नहीं हो सकते ? आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लिए मानवता एक मूल्य की तरह है और साहित्य का एक उद्देश्य जनसमूह के बीच इस प्रवृत्ति का व्यापक प्रसार भी है। यह निबंध न केवल हमें आईना दिखाने का काम करता है, बल्कि झूठे विकास का जो इंद्रजाल है, उसे भी वास्तविक रूप में हमारे सामने खोल कर रख देता है। आचार्य की दृष्टि में वास्तविक विकास सही अर्थों में मानवता की प्रवृत्ति का प्रसार है। इसीलिए वे परंपरा से इसका प्रमाण देते हुए कहते हैं, "गौतम ने ठीक ही कहा था कि मनुष्य की मनुष्यता यही है कि वह सबके

दुख-सुख को सहानुभूति के साथ देखता है। यह आत्म निर्मित बंधन ही मनुष्य को मनुष्य बनाता है। अहिंसा, सत्य और अक्रोधमूलक धर्म का मूल उत्स यही है ।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया निबंध संग्रह 'कल्पलता' सन् १९५१ में प्रकाशित हुआ था । अर्थात इस निबंध संग्रह में संकलित सभी निबंध सन १९५१ के पहले लिखे गए थे। इस विषय पर निबंध लिखने का विचार उन्हें क्यों आया, यह उस समय के परिवेश को देखते हुए सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है । वह दौर द्वितीय विश्वयुद्ध का दौर था, जहाँ हिंसक अस्त्रों और शस्त्रों का न केवल निर्माण हो रहा था बल्कि उनका संचयन भी बड़ी तेजी से किया जा रहा था। ज्यादा से ज्यादा शक्ति हासिल करना और दूसरों को नष्ट करना, विकास का एक मानदंड समझा जा रहा था। मानवीय मूल्य मरणांतक स्थिति में पड़े हुए थे। ऐसी स्थिति में यह विषय अत्यंत प्रासंगिक था। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने परंपरा और विज्ञान के विभिन्न उदाहरणों से इस बात को सत्यापित करने का प्रयास किया कि मनुष्य की चरितार्थता प्रेम में है, मैत्री में है, त्याग में है, अपने को सबके मंगल के लिए नि:शेष भाव से दे देने में है । उनका मानना था कि नई पीढ़ी को यह सिखा देना अत्यंत आवश्यक है कि नाखून का बढ़ना मनुष्य के भीतर की पशुता की निशानी है, इसी प्रकार वृहत्तर जीवन में अस्त्र-शस्त्रों का बढ़ने देना मनुष्य की पशुता की निशानी है और उसकी बाढ़ को रोकने की अत्यंत आवश्यकता है। यह तथ्य इस निबंध की समसामयिक प्रासंगिकता को स्पष्ट करता है। आज के समय में भी यह निबंध अत्यंत प्रासंगिक ही है।

७.२.२ नाखून क्यों बढ़ते हैं ! निबन्ध का प्रतिपाद्य:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' एक तरह से अपने युगीन परिवेश के मूल्यांकन का सार्थक प्रयास है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने समसामयिक वृहत्तर परिवेश में अप्रासंगिक होते जा रहे मानवीय मूल्यों की सार्थकता को समझाने के लिए इस निबंध की रचना की थी। इस निबंध के द्वारा अहिंसा, प्रेम, मानवीयता आदि के संदर्भ में उनके उज्जवल विचारों का पता चलता है ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, महात्मा गांधी के द्वारा स्थापित जीवन-आदर्शों के पक्के समर्थक थे। उनके कई निबंधों में अनायास ही उन्होंने महात्मा गांधी और उनकी विचारधारा के प्रति अपनी श्रद्धा को प्रकट किया है । 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध में मनुष्य की पाशविक वृत्ति की चर्चा करते हुए वे कहते हैं, "एक बूढ़ा था। उसने कहा था - बाहर नहीं, भीतर की ओर देखो। हिंसा को मन से दूर करो, मिथ्या को हटाओ, क्रोध और द्वेष को दूर करो, लोक के लिए कष्ट सहो, आराम की बात मत सोचो, प्रेम की बात सोचो; आत्म-तोषण की बात सोचो, काम करने की बात सोचो। उसने कहा - प्रेम ही बड़ी चीज है, क्योंकि वह हमारे भीतर है। उच्छृखलता पशु की प्रवृत्ति है, 'स्व' का बंधन मनुष्य का स्वभाव है।"

यह स्व का बंधन आखिर क्या है ? इस निबंध में बड़े ही सार्थक तरीके से इस बात को समझाते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अंग्रेजी और हिंदी के शब्द 'इंडिपेंडेंस' और 'स्वाधीनता' की चर्चा की है। अंग्रेजी भाषा के शब्द इंडिपेंडेंस का अर्थ है - अनधीनता, जबकि स्वाधीनता का अर्थ है - स्व की अधीनता, स्व यानी की हमारा अंतर्मन। स्वाधीनता शब्द का अर्थ है, स्वयं की अधीनता या स्वयं का नैतिक बंधन, जो कि हमारे भीतर मानवीय तत्व को प्रज्वलित और प्रकाशित करता है । इस स्व के बंधन को आचार्य हजारी प्रसाद

द्विवेदी भारतीय परंपरा की अद्भुत देन मानते हैं। इसीलिए वे कहते हैं, "भारतीय चित्त जो आज भी 'अनधीनता' के रूप में न सोच कर 'स्वाधीनता' के रूप में सोचता है, वह हमारे दीर्घकालीन संस्कारों का फल है । वह स्व के बंधन को आसानी से नहीं छोड़ सकता । अपने-आप पर अपने-आप के द्वारा लगाया हुआ बंधन हमारी संस्कृति की बड़ी भारी विशेषता है ।"

इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अत्यंत सरल और सहज ढंग से पूरी ऐतिहासिक परंपरा का विश्लेषण किया है। जिसमें उन्होंने अस्त्रों - शस्त्रों के चरणबद्ध विकास के द्वारा मनुष्य के भीतर बढ़ती हुई पाशविक वृत्ति को समझाने का प्रयास किया है। सभ्यता के आरंभ में जब बौद्धिक स्तर पर मनुष्य बिल्कुल धरातल पर था और उसके पास आत्मरक्षा के लिए कोई बाहरी साधन नहीं था, तब वह नाखूनों के माध्यम से ही यह काम पूरा करता था । पर जैसे-जैसे उसका बौद्धिक विकास होता गया और वह अन्य चीजों के उपयोग को समझता गया, वैसे-वैसे उसने पेड़ की डालों, ढेलों, बड़े पत्थरों, धनुष-बाण, भाले, तलवार और इसी तरह क्रमशः पलीते वाली बंदूकों, बमों, बमवर्षक वायुयानों, मशीनगनों और परमाणु बम के विकास के द्वारा अपने भीतर की पाशविक वृत्ति को संतुष्ट करने का प्रयास किया। पर ध्वंस के लिए जुटाए गए यह सभी साधन क्या इस धरा को जीवनदायिनी के रूप में शेष रहने देंगे। इस पृथ्वी के सभी देश इस प्रतियोगिता में सम्मिलित हैं, तो क्या इसका यह अर्थ है कि जब संहार होगा, तो सब कुछ नष्ट होगा। क्या सही मायने में यह ध्वंस हमारे विकास का द्योतक है ? यदि नहीं तो फिर वास्तविकता क्या है ?

'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध इस दृष्टि से अत्यंत विशिष्ट है कि इसमें भारतीय परंपरा और तत्कालीन परिवेश के सार्थक तत्वों का विवेचन और विश्लेषण करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने मानवीय मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा का सार्थक प्रयास किया है। शक्ति की प्रतियोगिता मनुष्यता को नष्ट होने की तरफ ले जाएगी, जबकि हमारी परंपरा में मौजूद प्रेम, मैत्री तथा अहिंसा जैसे तत्व मनुष्यता को विकास की सार्थक ऊंचाई की ओर ले जाएंगे। हजारों वर्षों से भारतीय साहित्य और मेधा इन तत्वों का प्रचार और प्रसार करती चली आ रही है। आधुनिक काल में महात्मा गांधी ने इन्हीं मूल्यों की व्यवहारिक परिणति का उदाहरण पूरे विश्व के सम्मुख रखा था। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की स्पष्ट धारणा है कि इन्हीं मूल्यों को पुनः अपनाकर ही मानवता ऊर्ध्वगामी हो सकती है । उनके संपूर्ण विश्लेषण का यही निष्कर्ष है और यही इस निबंध की देन है।

७.३ सारांश

इस इकाई के अंतर्गत 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध का अध्ययन किया गया। 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध मनुष्य की पाशविक वृत्तियों का विश्लेषण करने वाला निबंध है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध लेखन कला अत्यंत गंभीर विषयों के साथ गंभीर हो जाती है और कहीं मस्ती की लहर के समान प्रतीत होती है । इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की विविध संवेदनाओं को लक्षित किया जा सकता है । उनके मानवतावादी विचार भारतीय संस्कृति को लेकर उनका दृष्टिकोण तथा गुरु-गंभीर विद्वता इन निबंधों का प्राणतत्व है ।

७.४ उदाहरण – व्याख्या

व्याख्या-अंश (१):

'इंडिपेंडेंस' का अर्थ है अनधीनता या किसी की अधीनता का अभाव, पर 'स्वाधीनता' शब्द का अर्थ है अपने ही अधीन रहना। अंग्रेजी में कहना हो, तो 'सेल्फडिपेंडेंस' कह सकते हैं। मैं कभी-कभी सोचता हूँ कि इतने दिनों तक अंग्रेजी की अनुवर्तिता करने के बाद भी भारतवर्ष 'इंडिपेंडेंस' को अनधीनता क्यों नहीं कह सका? उसने अपनी आजादी के जितने भी नामकरण किए - स्वतंत्रता, स्वराज्य, स्वाधीनता - उन सबमें 'स्व' का बंधन अवश्य रखा। यह क्या संयोग की बात है या हमारी समूची परंपरा ही अनजान में, हमारी भाषा के द्वारा प्रकट होती रही है ?

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध से उधृत है।

प्रसंग: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' में मनुष्य के भीतर बढ़ती पाशविक प्रवृत्ति का विचारपूर्ण ढंग से विश्लेषण किया है। इसी विश्लेषण के क्रम में वे विभिन्न संस्कृतियों का भाषा आदि के संदर्भ में मूल्यांकन भी करते हैं। इस उधृत अंश में अंग्रेजी और हिंदी भाषा के बहाने वे इन संस्कृतियों के आंतरिक तत्वों का विश्लेषण करते हैं।

व्याख्या: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' में मनुष्य के भीतर बढ़ती हिंसावृत्ति को लक्षित किया है। यह उद्धरण उसी निबंध का अंश है। इस उद्धरण में भाषा और संस्कृति के बीच मूल्यपरक संबंध को लक्षित किया गया है। अंग्रेजी भाषा के शब्द 'इंडिपेंडेंस' का अर्थ है, किसी भी प्रकार की अधीनता का अभाव, जो एक तरह से अराजकता में भी परिवर्तित हो सकता है। परंतु भारतीय संदर्भों में एवं हिंदी भाषा में इस शब्द के जो अर्थ व्यवहृत होते हैं, वे हैं - स्वतंत्रता एवं स्वाधीनता। इन सभी शब्दों में 'स्व' शब्द जुड़ा हुआ है, जिससे यह अर्थ संकेतित होता है कि स्वयं की अधीनता या स्वयं का बंधन। यह 'स्व' का बंधन हमें अपसंस्कृति की ओर ले जाने से बचाता है। यह स्व का बंधन हमें मानव-धर्म के विरुद्ध कार्य करने से रोकता है। यह लक्षण हजारों वर्षों से भारतीय संस्कृति का अनिवार्य अंग रहा है।

इस निबंध में मानवता की चर्चा करने के क्रम में लेखक इस प्रश्न का उत्तर ढूंढने का प्रयास करते दिखाई देते हैं कि आज के मनुष्य में लगातार बढ़ती पाशविक वृत्ति का कारण क्या है और इसके पीछे वे कहीं न कहीं बढ़ती वैचारिक अराजकता को भी जिम्मेदार समझते हैं। भारतीय संस्कृति में प्रेम, मैत्री और अहिंसा जैसे मूल्य घुले-मिले हैं और भारतीय जनमानस इन मूल्यों से गहरे तक प्रभावित है। 'स्व' का नैतिक बंधन, जिसे वह अपने जीवन के आरंभ से देखता और जीता है, स्वाभाविक रूप से वह उसके कर्म-श्रंखला का एक अनिवार्य अंग बन जाता है और इसी के चलते दया, ममता, मानवता आदि भावनाएं भारतीय जनमानस का चेतन-अंश बनी रहती हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस उद्धरण में शब्द प्रयोग के माध्यम से भारतीय संस्कृति की इसी विशेषता को रेखांकित करने का अद्भुत प्रयास किया है।

विशेष:

१. भाषा के प्रति लेखक की सूक्ष्मतत्व अन्वेषणी क्षमता का परिचय मिलता है।

२. भारतीय संस्कृति की विशेषता का वर्णन किया है।

व्याख्या: अंश २:

एक बूढ़ा था। उसने कहा था - बाहर नहीं, भीतर की ओर देखो। हिंसा को मन से दूर करो, मिथ्या को हटाओ, क्रोध और द्वेष को दूर करो, लोक के लिए कष्ट सहो, आराम की बात मत सोचो, प्रेम की बात सोचो; आत्म-तोषण की बात सोचो, काम करने की बात सोचो। उसने कहा - प्रेम ही बड़ी चीज है, क्योंकि वह हमारे भीतर है। उच्छृखलता पशु की प्रवृत्ति है, 'स्व' का बंधन मनुष्य का स्वभाव है।

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध से उधृत है।

प्रसंग: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पर महात्मा गांधी के व्यक्तित्व और गांधीवाद का स्पष्ट प्रभाव था। सत्य, अहिंसा और प्रेम के सिद्धांतों से आपूरित गांधीवाद उनके भीतर एक आशा का संचार करता था। जिस समय पूरा विश्व युद्ध के आतंक से आक्रांत था, उन्हें एकमात्र गांधीवाद से ही मानवता के बचने की आशा दिखाई देती थी। निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' में मनुष्य की हिंसावृत्ति का विश्लेषण करने के क्रम में वे महात्मा गांधी के इसी महत्व को प्रकट करते हैं।

व्याख्या: 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध के इस उद्धृत अंश में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने महात्मा गांधी के मानवता के प्रति किए गए सार्थक प्रयासों को याद किया है। महात्मा गांधी ने जनमानस को लगातार नैतिक होने की प्रेरणा दी। उन्होंने प्रेम, अहिंसा और सत्य के मूल्यों पर अत्यंत विश्वास करते हुए जनमानस को इन्हें अपनाने पर बल दिया। यह सब कुछ उन्होंने केवल सैद्धांतिक रूप से कहकर ही नहीं किया बल्कि उनके आंदोलनों में इसका व्यावहारिक फलन भी पूरे विश्व ने देखा। महात्मा गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध इन उपकरणों का प्रयोग सर्वप्रथम किया था और अपने आंदोलनों में उन्हें भारी सफलता भी मिली थी। वहां भारतीयों के अधिकारों के लिए लड़ते हुए अंग्रेज सरकार को उन्होंने झुकने के लिए और रंगभेद की नीति त्यागने के लिए विवश किया था।

पूरी तरह से सन १९१५ में भारत लौटने के बाद महात्मा गांधी ने यहां भी अपने उन्हीं प्रयासों को व्यवहारिक रुप से लागू किया और ब्रिटिश सरकार को पुनः सोचने पर विवश कर दिया। यह उस समय पूरे विश्व के लिए बड़े आश्चर्य का विषय था कि दो कपड़ों में अपना तन ढके हुए और हाथ में लाठी पकड़े हुए एक व्यक्ति पूरे विश्व को अपने औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत लिए हुए इंग्लैंड की सरकार को पीछे हटने पर मजबूर किए था। महात्मा गांधी की इस सफलता पर पूरा विश्व आशा भरी निगाहों से उनकी तरफ देख रहा था। दरअसल अपने आंदोलनों में महात्मा गांधी ने भारतीय परंपरागत मूल्यों का प्रयोग करते हुए एक तरफ भारतीय जनमानस को नैतिकता की प्रेरणा दी, वहीं दूसरी तरफ उन्हें सत्य के लिए लड़ना सिखाया और उनकी पूरी लड़ाई नि:शस्त्र लड़ाई थी।

महात्मा गांधी का दर्शन नैतिक दर्शन है। वे वाह्य बंधनों की अपेक्षा स्व के बंधन को ज्यादा महत्वपूर्ण समझते थे। स्व' के बंधन को मानने वाला व्यक्ति कभी भी अराजकता का समर्थन नहीं करेगा। वह अकेले भी होगा, तो किसी भी प्रकार के आपराधिक कृत्य को अंजाम नहीं देगा क्योंकि वह नैतिकता की स्वत:स्फूर्त भावना से प्रेरित है। वह न केवल स्वयं को ऐसी बातों से दूर रखेगा बल्कि दूसरों को भी ऐसी प्रेरणा देने का काम करेगा। इसीलिए महात्मा गांधी भी 'स्व' के बंधन का समर्थन करते थे और इसे मानवीय जीवन के लिए अनिवार्य समझते थे। महात्मा गांधी का दर्शन सात्विक कर्म का दर्शन है, आत्मसंतोष का दर्शन है, स्व के बंधन का दर्शन है। इन्हीं अर्थों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' में महात्मा गांधी का उल्लेख किया है।

विशेष:

१. गांधीवाद और महात्मा गांधी के प्रति आचार्य द्विवेदी के दृष्टिकोण का परिचय मिलता है।

२. आज के समय में भी स्व के बंधन का महत्व स्थापित होता है।

७.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. 'नाखून क्यों बढ़ते हैं', निबंध में बूढ़े के रूप में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किसका उल्लेख किया है ?

(क) लोकमान्य बालगंगाधर तिलक (ख) गोपालकृष्ण गोखले

(ग) महात्मा गांधी (घ) दादाभाई नौरोजी

२. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार 'इंडिपेंडेंस' शब्द का शुद्ध अर्थ है ?

(क) स्वतंत्रता (ख) स्वाधीनता

(ग) अनधीनता (घ) अधीनता

३. सिक्थक का अर्थ है ?

(क) मोम (ख) शहद

(ग) आलता (घ) नाखून

७.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) 'स्व' के बंधन से क्या तात्पर्य है ?

२) 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए ?

munotes.in

७.७ बोध प्रश्न

१) 'भारतीय चित्त आज भी अनधीनता के रूप में न सोच कर स्वाधीनता के रूप में सोचता है।' इस कथन की व्याख्या कीजिए ?

२) 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध की अंतर्वस्तु को स्पष्ट कीजिए ?

७.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

७.१

निबन्ध : आम फिर बौरा गये

इकाई की रुपरेखा

७.१.० इकाई का उद्देश्य

७.१.१ प्रस्तावना

७.१.२ निबन्ध : आम फिर बौरा गये

७.१.२.१ आम फिर बौरा गये निबन्ध की अन्तर्वस्तु

७.१.२.२ आम फिर बौरा गये निबन्ध का प्रतिपाद्य

७.१.३ सारांश

७.१.४ उदाहरण-व्याख्या

७.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

७.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

७.१.७ बोध प्रश्न

७.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

७.१.० इकाई का उद्देश्य

- पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' में संग्रहीत निबन्धों में से 'आम फिर बौरा गए' निबंध का अध्ययन सम्मिलित है।
- इस निबंध में छात्र निबंध की अन्तर्वस्तु और प्रतिपाद्य को समझ सकेंगे।
- इन निबंध के अध्ययन से छात्र न केवल आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की विभिन्न संदर्भों में विशिष्ट दृष्टि से परिचित होंगे, बल्कि खुद उनके समसामयिक चिंतन के सही आधारों का चयन करने की योग्यता उनमें उत्पन्न होगी।
- संपूर्ण इकाई का अध्ययन करने के बाद छात्र आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की निबंध-लेखन संबंधी विशेषताओं को समझने और समझाने में सक्षम होंगे।

७.१.१ प्रस्तावना

'आम फिर बौरा गये' निबंध आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के व्यक्ति-व्यंजक निबंधों में से एक श्रेष्ठ निबंध है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की लेखन प्रवृत्ति के अनुरूप इस निबंध में उनकी इतिहास चेतना, सूक्ष्म शोध-दृष्टि, पुराणों के प्रति उनका विशेष चिंतन एवं संस्कृत लौकिक साहित्य का गहन अध्ययन आदि सभी की झलक मिलती है। उनका सूक्ष्म विश्लेषण कभी भी पाठकों को चमत्कृत कर देता है। प्राचीन साहित्य से ऐसे-ऐसे तथ्य और व्याख्याएँ वे पाठकों के सामने रखते हैं कि पाठक चमत्कृत हो जाता है। 'आम फिर बौरा गये' निबंध में

munotes.in

इन्हीं प्रवृत्तियों का दर्शन होता है। इसी के साथ समसामयिक संदर्भों को भी वे अपने निबंधों में सम्मिलित करना नहीं भूलते, वह भी इस निबंध में देखा जा सकता है।

७.१.२ निबन्ध : आम फिर बौरा गये

७.१.२.१ आम फिर बौरा गये निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

'आम फिर बौरा गये' इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने आश्चर्य मिश्रित उत्कंठा से मनुष्य की अपराजेय शक्ति की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इस सृष्टि में सभ्यता के आरंभ से मनुष्य धीरे-धीरे अपने प्रयासों से और अपनी बुद्धि कौशल के प्रयोग से इस धरा को अपने अनुकूल बनाता चला आया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पुराणों और संस्कृत-साहित्य के तमाम उदाहरणों से इस बात को पुष्ट करते हुए आम्रमंजरी और उसके संबंध में विभिन्न धारणाओं की चर्चा करते चलते हैं। साथ ही इस धरा में मनुष्य के दुर्जेय संघर्ष की कहानी भी साथ-साथ चलती दिखाई देती है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में एक तरह की बौद्धिक मस्ती देखने को मिलती है। वे कठिन पौराणिक और ऐतिहासिक प्रसंगों से खेलते हुए चलते हैं। यह निबंध इन्हीं सब प्रवृत्तियों का श्रेष्ठ उदाहरण है। उनकी बौद्धिक मस्ती में तमाम लोक-विश्वास, शास्त्रीय आख्यान, इतिहास के अनुत्तरित प्रश्नों से संघर्ष, सभी कुछ एक साथ चलता रहता है। इससे यह पता चलता है कि उनका अध्ययन कितना गुरु-गंभीर है। और प्राचीन साहित्य पर उनका ऐसा अधिकार है कि वे सर्वथा नवीन दृष्टि से उसकी व्याख्या भी करते चलते हैं।

निबंध की शुरुआत वे एक लोक-विश्वास से करते हुए कहते हैं, "बसंत पंचमी के पहले अगर आम्रमंजरी दिख जाए तो उसे हथेली पर रगड़ लेना चाहिए। क्योंकि ऐसी हथेली साल भर तक बिच्छू के जहर को आसानी से उतार देती है।" और इस शुरुआत के बाद उनका वायवीय-विचरण आरंभ हो जाता है। वे एक साथ जीवविज्ञान, इतिहास, समाजशास्त्र, साहित्य आदि विषयों में तैरना आरंभ कर देते हैं। आम और आम्रमंजरी को लेकर वे तमाम शास्त्रीय प्रमाण, मान्यताएं देते हुये इसी के साथ-साथ अन्य विश्लेषण आरंभ कर देते हैं। इन विश्लेषणों में वे तमाम विरोधाभासों को भी खोजते हैं, जैसे जिस आम्रमंजरी को हथेली पर रगड़ने से बिच्छू का जहर आसानी से उतर जाता है, वह आम्रमंजरी मदन देवता का अमोघ बाण है। जबकि बिच्छू मदन देवता का विध्वंस करने वाले महादेव का अस्त्र है। महादेव ने कामदेव को नष्ट किया पर उन्हीं का अस्त्र बिच्छू, मदन देवता के अस्त्र से पराजित है। यह सचमुच कितना विरोधाभासी है।

आम्रमंजरी के सौंदर्य का संस्कृत में कालिदास जैसे साहित्यकारों ने वर्णन किया है। आम्रमंजरी और उसकी महक सदा से जनमानस को विभोर करती आई है आम की बौर वसंत में अपनी उभार पर होती है और उसकी महक सारे वातावरण को महका देती है। आम्रमंजरी की बात करते-करते कब वे कामदेव और श्रीकृष्ण की अभिन्नता पर चिंतन आरंभ कर देते हैं, यह पता ही नहीं चलता। वे अपने ऐसे प्रश्नों के पीछे के कारणों का उल्लेख भी करते चलते हैं जैसे, धर्मशास्त्र की पोथियों के अनुसार बसंत पंचमी के दिन मदन देवता की पूजा करने से स्वयं श्री कृष्णचंद्र जी प्रसन्न होते हैं, दूसरी तरफ तांत्रिक आचार्यों में विष्णु भजन करने वालों के अनुसार कामगायत्री ही श्री कृष्णगायत्री हैं। और ऐसी ही

मान्यताओं से उनके मन में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि कामदेव और श्री कृष्ण क्या अभिन्न देवता हैं ? दरअसल जहां भी पौराणिक इतिहास में ऐसे विरोधाभास आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को दिखाई देते हैं, वह सप्रमाण ऐसी धारणाओं को ठीक करने या इनकी वास्तविकता को जानने का प्रयास आरंभ कर देते हैं। इसीलिए वे लिखते हैं कि "मेरा मन अधभूले इतिहास के आकाश में चील की तरह मंडरा रहा है, कहीं कुछ चमकती चीज नजर आई नहीं कि झपाटा मारा। पर कुछ दिख नहीं रहा है। सुदूर इतिहास के कुज्झटिकाच्छन्न नभोमंडल में कुछ देख लेने की आशा पोसना ही मूर्खता है।" यह कथन भारतीय इतिहास लेखन की एक विवशता की ओर भी संकेत करता है, जिसमें तथ्य और बातें अस्पष्ट ढंग से संकेतित हैं और उनसे सही तथ्यों को निकाल पाना बड़ा असंभव सा कार्य है। सचमुच वह ऐतिहासिक तथ्य कोहरे के आवरण में ढके हुए हैं, जिन्हें देख पाना अत्यंत दुष्कर कार्य है।

आम्र मंजरी के बहाने तमाम पौराणिक धारणाओं की चर्चा करते-करते कब वे इतिहास की ओर मुड़ जाते हैं, पता भी नहीं चलता और उसकी व्याख्या करते हुए मनुष्य की दुर्जेय शक्ति के प्रति विश्वास प्रकट करते हैं। वे लिखते हैं, "आर्यों के साथ असुरों, दानवों और दैत्यों के संघर्षों से हमारा साहित्य भरा पड़ा है। रह-रहकर मेरा ध्यान मनुष्य की इस अद्भुत विजय यात्रा की ओर खिंच जाता है। कितना भयंकर संघर्ष वह रहा होगा जब घर में पालने पर सोए हुए लड़के तक चुरा लिए जाते होंगे और समुद्र में फेंक दिए जाते होंगे।" अपने ऐतिहासिक अध्ययन के अनुसार जो समझ उन्होंने विकसित की उस आधार पर वे कहते हैं कि आर्यों को इस देश में सबसे अधिक संघर्ष असुरों से ही करना पड़ा था। दैत्य, दानव और राक्षसों से भी उनकी बजी थी पर असुरों से निपटने में उन्हें बड़ी शक्ति लगानी पड़ी थी। उनके अनुसार असुर हर तरह से सभ्य थे। उनका तकनीकी ज्ञान बहुत उन्नत था। उन्होंने बड़े-बड़े नगर बसाए थे। महल बनाए थे। उनकी अपेक्षा गंधर्व, यक्ष और किन्नर शांतिप्रिय जातियाँ थीं, जिनमें विलासिता की मात्रा कुछ अधिक थी। अपनी इस इतिहास धारणा को बताते-बताते वह अचानक संस्कृति के एक अद्भुत तथ्य को पाठकों के सामने प्रकट करते हैं कि काम देवता या कंदर्प वस्तुतः गंधर्व ही हैं, केवल उच्चारण बदल गया है। यह तथ्य भारत के सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया को हमारे सामने स्पष्ट करता है। किस तरह विभिन्न जातियों के मिलने से, उनके आपसी सांस्कृतिक-धार्मिक विश्वास भी मिलजुल कर एक नए रूप में हमारे सामने प्रकट होते हैं। यह तथ्य एक तरह से भारत के सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया को सूत्र रूप में हमारे सामने प्रकट करता है।

ऐसी ही चर्चाओं के क्रम में वे अपने समसामयिक परिवेश की भी व्याख्या करते दिखाई देते हैं, जब वे आर्य और असुरों के संघर्ष की चर्चा करते-करते अचानक यह तथ्य उद्घाटित करते हैं कि "आज इस देश में हिंदू और मुसलमान इसी प्रकार के लज्जाजनक संघर्ष में व्याप्त हैं। बच्चों और स्त्रियों को मार डालना, चलती गाड़ी से फेंक देना, मनोहर घरों में आग लगा देना, मामूली बातें हो गई हैं।" आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कथन उनके समय के समाज की भयंकर दशा से उपजा है। जैसा कि हम जानते हैं 'कल्पलता' संग्रह के सभी निबंध १९५१ के पहले प्रकाशित हुए थे। आजादी के समय हिंदू-मुस्लिम दंगों का इतिहास, उसकी भयावहता और क्रूरता से हम सभी परिचित हैं। दो अलग-अलग धर्म और संस्कृतियाँ, जो सैकड़ों वर्षो से साथ रहना सीख गई थीं, उन्हें अंग्रेजी शासकों ने अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए किस तरह क्षत-विक्षत कर दिया। उन्हें आपस में लड़ाकर इस देश की जड़ों को उन्होंने कमजोर कर दिया और हम भारतीय मूर्खों की तरह एक-दूसरे को नष्ट

करने में संलग्न हो गए। मानव इतिहास में ऐसी दुष्टता का उदाहरण कहीं और दुर्लभ है। भारत विभाजन के बाद जितनी बड़ी आबादी अपने-अपने स्थानों को छोड़कर अजनबी जगहों पर जाने को विवश हुई, वह भी इतिहास की एक दुर्लभ घटना है। इस तरह के नकारात्मक संघर्ष के प्रति आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की पीड़ा उनके कई निबंधों में हमें देखने को मिलती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भाषा के प्रति अत्यंत सतर्क साहित्यकार हैं। अपने निबंधों में वे लगातार इसका परिचय देते हैं। उनके अधिकतर निबंधों में शब्दों की उत्पत्ति और उनके अर्थ की व्यापकता या संक्षिप्तता पर हमें नई जानकारी मिलती है। उदाहरण स्वरूप इस निबंध में 'आम' शब्द का विश्लेषण करते हुए वे कहते हैं कि, "पंडित लोग कहते हैं कि 'आम्र' शब्द 'अम्र' या 'अम्ल' शब्द का रूपांतर है। अम्र अर्थात खट्टा।" इसी प्रकार जादू शब्द के संदर्भ में उनका विश्लेषण देखने योग्य है, "यह इंद्रजाल या जादू विद्या का आचार्य माना जाता है अर्थात 'यातुधान' है। यातु और जादू शब्द एक ही शब्द के भिन्न-भिन्न रूप हैं। एक भारतवर्ष का है, दूसरा ईरान का। ऐसे अनेक शब्द हैं। ईरान में थोड़ा बदल गए हैं और हम लोग उन्हें विदेशी समझने लगे हैं। 'खुदा' शब्द असल में वैदिक 'स्वधा' शब्द का भाई है। 'नमाज' भी संस्कृत 'नमस्' का सगा संबंधी है। 'यातुधान' को ठीक-ठीक फारसी वेश में सजा दें तो 'जादूदाँ' हो जाएगा।" आचार्य जी के इस विश्लेषण से यह संकेत भी मिलता है कि विश्व की बहुत सारी भाषाओं में इसी तरह के पारस्परिक सगे संबंध हैं। भौगोलिक दूरियों और परिवेशगत कारणों से धीरे-धीरे शब्द ध्वनियों में परिवर्तन आ गया और वे बिल्कुल अलग प्रतीत होने लगे। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में कई स्थलों पर इस तरह के विश्लेषण पाठकों को आश्चर्यचकित कर देते हैं।

'आम फिर बौरा गए' निबंध, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की एक और विशेषता को महत्वपूर्ण ढंग से पाठकों के सामने रखता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पौराणिक इतिहास के ऐसे-ऐसे चरित्रों को अपने निबंध में स्थान देते हैं, जिनसे और कहीं मिल पाना सामान्य लोगों के लिए बड़ा मुश्किल है। और वे जिस ढंग से इनका वर्णन करते हैं, वे चरित्र अपनी पूरी चारित्रिक विशेषताओं के साथ हमारे सामने प्रकट होते हैं। जैसे, इस निबंध में ही उन्होंने भागवत पुराण के एक चरित्र शम्बर असुर का उल्लेख किया है, जिसका नाम सम्बर, सांबर या साबर के नाम से भी कहीं-कहीं जिक्र मिलता है। शम्बर इंद्रजाल या जादू विद्या का आचार्य माना जाता है। प्राचीन भारतीय संस्कृति में विभिन्न उत्सवों का भी वर्णन इस निबंध में है, जिससे प्राचीन संस्कृति के बारे में हमें जानकारी मिलती है। उन्होंने अपने इस निबंध में सुबसंतक नामक महोत्सव की चर्चा की है।

आम फिर बौरा गए निबंध आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की ज्यादातर निबंध लेखन विशेषताओं को समेटे हुए एक महत्वपूर्ण निबंध है। इस निबंध में जिस तरह से वे लोक-विश्वास, पुराण, इतिहास, साहित्य और समकालीन परिवेश तक की यात्रा करते हैं, यह उन्हीं के व्यक्तित्व के वश की बात है। ऐसा लालित्य हिंदी के अन्य निबंधकारों में कम ही देखने को मिलता है। ऐसी व्यक्ति-व्यंजकता हिंदी निबंध के इतिहास में दुर्लभ है। निबंध लिखते हुए वे जब अपने मन की रौ के अनुसार झूम रहे होते हैं तो उनकी अभिव्यक्ति देखते ही बनती है। उनकी अभिव्यक्ति में जबरदस्त उत्साह का अतिरेक देखने को मिलता है और यह उत्साह पाठक को भी एक सजग मनोदशा और सहज मनोवृत्ति से संपन्न बनाता है।

पाठक इस निबंध को पढ़ते हुए संस्कृति की सूक्ष्मताओं को देखकर आनंदित भी होता है और उत्साहित भी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में यह अत्यंत महत्वपूर्ण और विशिष्ट निबंध है।

७.१.२.२ आम फिर बौरा गये निबन्ध का प्रतिपाद्य:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अधिकतर निबंध ललित निबंधों की श्रेणी में आते हैं। जिनमें प्रधान रूप से व्यक्ति व्यंजकता का तत्व हमें देखने को मिलता है। 'आम फिर बौरा गए' निबंध इस दृष्टि से अत्यंत उल्लेखनीय निबंध है। यह निबंध आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की शैली से पहचाना जाने वाला निबंध है। इस निबंध में उन्होंने अत्यंत रोचक शैली में आम और आम्रमंजरी के बहाने भारतीय संस्कृति और साहित्य के विशिष्ट पक्षों पर सार्थक चर्चा की है।

जैसा कि हम जानते हैं, एक विषय पर चलते-चलते विषयान्तर करके अपनी बात को और व्यापक बनाने का जो उनका तरीका है, वह इस निबंध में भी उल्लेखनीय ढंग से देखने को मिलता है। वे बात आरंभ करते हैं वसंतपंचमी के समय में आम्रमंजरी और बिच्छू से जुड़े हुए लोकविश्वास को लेकर और इसके बाद आम्रमंजरी के विभिन्न संदर्भों की चर्चा करते हुए वे अपने मनपसंद विषय भारतीय संस्कृति पर भी आ जाते हैं। इतिहास का वह अनदेखा सत्य जो प्रामाणिक ढंग से हमें नहीं मिलता पर साहित्यिक प्रमाणों से उसे पुष्ट करते हुए साक्षात अपने निबंधों में आचार्य जी उपस्थित कर देते हैं।

आर्य-असुर संघर्ष भारतीय संस्कृति का ऐसा ही विशिष्ट पक्ष है जो उनके कई निबंधों में हमें देखने को मिलता है। इसी संघर्ष की चर्चा करते-करते वे निबंध को समसामयिक संदर्भों से भी जोड़ देते हैं और तत्कालीन समय में घटी सांप्रदायिक संघर्ष की वीभत्स घटना को भी निबंध में सम्मिलित कर लेते हैं। वह घटना भारतीय इतिहास का सर्वाधिक काला पृष्ठ है, जहां बिना किसी गलती के करोड़ों की आबादी को राजनीतिक और कूटनीतिक महत्वाकांक्षाओं के चलते हिंसा और क्रूरता की आग के हवाले कर दिया गया था।

भारतीय इतिहास और संस्कृति, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के मनपसंद विषय हैं जिन पर उनका अध्ययन भी अत्यंत गहरा है और उसकी व्याख्या भी वे अत्यंत विशिष्ट तरीके से करते हैं। उनके वर्णन की शैली ऐसी है कि अनदेखा सत्य भी सत्य रूप में आंखों के सामने साक्षात उपस्थित हो जाता है। इस तरह यह निबंध भारतीय संस्कृति के कुछ विशिष्ट संदर्भों और महत्वपूर्ण तात्कालिक सत्य से हमें रूबरू कराता है।

७.१.३ सारांश

इस इकाई के अंतर्गत 'आम फिर बौरा गए' निबंध का अध्ययन किया गया। यह निबंध 'आम फिर बौरा गए' व्यक्ति व्यंजकता की दृष्टि से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का अत्यंत श्रेष्ठ निबंध है जिसमें उन्होंने अपनी विशिष्ट छाप छोड़ी है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध लेखन कला कभी अत्यंत गंभीर विषयों के साथ गंभीर हो जाती है तो कहीं 'आम फिर बौरा गए' जैसे निबंधों में मस्ती की लहर के समान प्रतीत होती है। इस इकाई में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की विविध संवेदनाओं को लक्षित किया जा सकता है। उनके मानवतावादी

विचार भारतीय संस्कृति को लेकर उनका दृष्टिकोण तथा गुरु-गंभीर विद्वता इन निबंधों का प्राणतत्व है।

७.१.४ उदाहरण व्याख्या

व्याख्या अंश (१):

आज इस देश में हिंदू और मुसलमान इसी प्रकार के लज्जाजनक संघर्ष में व्याप्त हैं। बच्चों और स्त्रियों को मार डालना, चलती गाड़ी से फेंक देना, मनोहर घरों में आग लगा देना, मामूली बातें हो गई हैं। मेरा मन कहता है कि यह सब बातें भुला दी जाएंगी। दोनों दलों की अच्छी बातें ले ली जाएंगी। बुरी बातें छोड़ दी जाएंगी। पुराने इतिहास की ओर दृष्टि ले जाता हूं तो वर्तमान इतिहास निराशाजनक नहीं मालूम होता।

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'आम फिर बौरा गये' निबंध से उधृत है।

प्रसंग: अपनी लेखन विशेषता के अनुरूप आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने निबंधों में वर्णन के क्रम में समसामयिक समस्याओं की तरफ भी अपनी दृष्टि को केंद्रित करते हैं। उन्होंने इस निबंध में आर्य जाति के साथ असुर, दानव, दैत्य आदि के संघर्ष का वर्णन करते हुए और उसकी विध्वंसकता को ध्यान में रखते हुए वे अपने परिवेश पर भी चले जाते हैं और तत्कालीन समय में जो हिंदू-मुस्लिम संघर्ष चल रहा था, उसका मूल्यांकन करने लगते हैं।

व्याख्या: हिंदुस्तान की आजादी ने सबसे बड़ी जो कीमत चुकाई थी वह थी, भारत और पाकिस्तान का बंटवारा। यह बंटवारा जितना अंग्रेजी शासकों की कूटनीतिज्ञता का परिणाम था, उतना ही यह हमारे राष्ट्रीय नेताओं की महत्वाकांक्षा से भी पैदा हुआ था। लगभग सात-आठ सौ वर्षों से एक साथ निवास कर रही हिंदू और मुस्लिम संस्कृतियों में अंग्रेजी शासन के पूर्व एक समायोजन की स्थिति में आ चुकी थी। परंतु अंग्रेजों ने 'फूट डालो और राज करो' की रणनीति अपनाते हुए न केवल हिंदू-मुस्लिम विवाद को बढ़ावा दिया बल्कि इसके साथ-साथ हिंदू जाति व्यवस्था की विसंगतियों का फायदा उठाते हुए हिंदुओं में भी आपसी फूट डाल दी।

परिणामस्वरूप आपसी विद्वेष लगातार बढ़ता गया और अंततः जब हिंदुस्तान का बंटवारा हुआ और भारत एवं पाकिस्तान नामक दो देश अस्तित्व में आए तो उसका खामियाजा आम जनता को बेवजह भुगतना पड़ा। घोषित पाकिस्तान में रहने वाले हिंदुओं पर जमकर अत्याचार हुए। उनके घरों को जला दिया गया। उनकी अन्य संपत्तियां भी आगजनी का शिकार हुईं। महिलाएं और बेटियां या तो बेइज्जत की गयीं या इस डर से उन्होंने स्वयं ही कुएं में कूदकर या अन्य साधनों से आत्महत्या का विकल्प चुना। भारत में भी दोनों संप्रदायों में जमकर संघर्ष हुआ। सार्वजनिक संपत्तियों का भयंकर नुकसान हुआ। जान-माल की भारी हानि हुई और यह सब कुछ जिन लोगों की वजह से हुआ, वे अपने-अपने देश में सरकार निर्माण और विकास की नई-नई इबारतें लिखने में मशगूल हो गए।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध में अपने समय की इस पीड़ा का वर्णन किया है। क्योंकि वह एक आशावादी साहित्यकार हैं, अतः उन्हें यह उम्मीद है कि दोनों संप्रदाय आपसी समझदारी से इस संघर्ष को समाप्त करेंगे और दोनों संप्रदाय पुनः सामंजस्य के मार्ग पर चल पड़ेंगे।

विशेष:

१. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने समसामयिक संदर्भ को निबंध का विषय न होते हुए भी स्थान दिया है।

२. समसामयिक संदर्भों को दृष्टि में बनाए रखना और अवसर मिलते ही पाठकों के समक्ष रखना उनके लेखन की महत्वपूर्ण विशेषता है।

व्याख्या अंश (२):

मेरा अनुमान है कि आम पहले इतना खट्टा होता था और इसका फल इतना छोटा होता था कि इसके फल को कोई व्यवहार में नहीं लाता था। संभवत: यह भी हिमालय के पार्वत्य देश का जंगली वृक्ष था। इसके मनोहर कोरक और दिगंत को मूर्छित कर देने वाला आमोद ही लोकचित्त को मोहित करते थे। धीरे-धीरे यह फल मैदान में आया। मनुष्य के हाथ रूपी पारस से छूकर यह लोहा भी सोना बन गया।

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'आम फिर बौरा गये' निबंध से उधृत है।

प्रसंग: 'आम फिर बौरा गए' निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस स्थल पर आम के ऐतिहासिक विश्लेषण को हमारे सामने रखा है। मनुष्य ने खान-पान की आदतों का धीरे-धीरे विकास किया और फलों आदि का उपयोग करना धीरे-धीरे सीखा। इसी संदर्भ में आम का विश्लेषण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने यहां पर किया है।

व्याख्या: मानव का इतिहास हजारों वर्ष प्राचीन है। हमारे पास पाश्चात्य अवधारणाओं के अनुसार पिछले लगभग ढाई हजार वर्षों का इतिहास ऐसा इतिहास है, जिसके बारे में हम काफी कुछ जानते हैं। परंतु उसके पहले के बारे में हम केवल अनुमान ही लगा सकते हैं। मनुष्य ने प्रागैतिहासिक काल में अपने यायावर जीवन को छोड़कर कभी बस्तियां बनाना सीखा होगा, खेती आदि का ज्ञान हासिल किया होगा और इसमें उसे हजारों वर्षों का समय लग गया होगा। प्रकृति ने वरदान-स्वरुप मनुष्य को जीवन जीने की हर स्थिति दी है और यह सब कुछ समय के साथ मनुष्य ने जाना समझा और उसका उपयोग करना सीखा।

आम का उपयोग भी बहुत प्राचीन काल में नहीं होता था। यद्यपि बसंत उत्सव के आसपास आम्रमंजरी की महक पूरे वातावरण को सुवासित करती थी, पर खाद्य फल के रूप में आम का वह महत्व नहीं था, जो आज है। वैदिक काल में आम से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण गूलर का फल था। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने निबंधों में अपनी कल्पना से बहुत सारे अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तर सार्थक तरीके से देने का प्रयास करते हैं। आम के संबंध में भी

munotes.in

उनकी कल्पना कुछ ऐसा ही काम कर रही थी। इसीलिए वे अनुमान लगाते हुए आम के उपयोग पर अपनी बात कहते हैं।

आज की तरह संभव था, पहले आम का फल इतना विकसित और मधुरता से भरा हुआ नहीं होता था और न ही यह मैदानी क्षेत्र की पैदाइश है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का अनुमान है कि यह भी हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र में मिलने वाला एक जंगली वृक्ष था। लोग इसे इसकी मोहक महक के कारण जानते पहचानते थे। धीरे-धीरे समय के साथ जब इसके फलों का विकास हुआ, तब लोगों ने इसके उपयोग को जाना और समझा और यह फ़ल पर्वतीय क्षेत्र से मनुष्य के द्वारा मैदानी क्षेत्रों में भी लाया गया। यहां भी बाग-बागवानी में उसे स्थान दिया गया। क्रमश: विकास का आज यह परिणाम है कि शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जो आम के फल को पसंद न करता हो, आम की मधुरता उसे न ललचा देती हो। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस उद्धरण में आम के संबंध में यही बताने का प्रयास किया है।

विशेष:

१. मानव के चरणबद्ध विकास को लक्षित किया है।

२. इस उद्धरण से यह संकेत भी मिलता है कि मनुष्य किस तरह समय के साथ चीजों के उपयोग को सीख सका है।

७.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. 'औचित्य विचार चर्चा' नामक पोथी के रचयिता निम्न में से कौन हैं ?

(क) दंडी (ख) क्षेमेंद्र

(ग) भामह (घ) कुंतक

२. इंद्रजाल या जादू विद्या का आचार्य निम्न में से किसे माना जाता है ?

(क) कामदेवता (ख) कृष्णगायत्री

(ग) क्षेमेंद्र (घ) शम्बर

३. आम्र मंजरी किस देवता का अमोघ बाण है ?

(क) रुद्र (ख) महादेव

(ग) मदन (घ) राम

४. 'उदुम्बर' का अर्थसाम्य निम्न में से किस शब्द से है ?

(क) गूलर (ख) सफरी

(ग) आम्र (घ) अमृत

munotes.in

७.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) 'सुवसंतक' उत्सव के संदर्भ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने क्या शास्त्रीय प्रमाण दिए हैं ?

२) निबंध के आधार पर शम्बर असुर का वर्णन कीजिए ?

३) निबंध के आधार पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा दिए गए तत्कालीन संदर्भों का उल्लेख कीजिए ?

७.१.७ बोध प्रश्न

१) 'आम फिर बौरा गए' निबंध की अंतर्वस्तु का विश्लेषण कीजिए?

२) 'आम फिर बौरा गए' निबंध के आधार पर भारतीय संस्कृति की विशिष्टता का उल्लेख कीजिए?

३) 'आम फिर बौरा गए' निबंध का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए?

७.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

८

निबन्ध : शिरीष के फूल

इकाई की रूपरेखा

८.० इकाई का उद्देश्य

८.१ प्रस्तावना

८.२ निबन्ध : शिरीष के फूल

  ८.२.१ शिरीष के फूल निबन्ध की अन्तर्वस्तु

  ८.२.२ शिरीष के फूल निबन्ध का प्रतिपाद्य

८.३ सारांश

८.४ उदाहरण-व्याख्या

८.५ वैकल्पिक प्रश्न

८.६ लघुत्तरीय प्रश्न

८.७ बोध प्रश्न

८.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

८.० इकाई का उद्देश्य

पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' में संग्रहीत निबन्धों में से पहले दस निबंधों का अध्ययन सम्मिलित है। ये निबंध हैं - 'नाखून क्यों बढ़ते हैं', 'आम फिर बौरा गए', 'शिरीष के फूल', 'भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य', 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद', 'ठाकुरजी की बटोर', 'संस्कृतियों का संगम', 'समालोचक की डाक', 'महिलाओं की लिखी कहानियाँ' और 'केतुदर्शन'। इन निबंधों का अध्ययन करने के बाद आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के संपूर्ण व्यक्तित्व का मूल्यांकन भी किया जायेगा। इस इकाई के अंतर्गत 'शिरीष के फूल' निबंध का अध्ययन सम्मिलित है। इन निबंध के अध्ययन से छात्र न केवल आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की विभिन्न संदर्भों में विशिष्ट दृष्टि से परिचित होंगे, बल्कि खुद उनके समसामयिक चिंतन के सही आधारों का चयन करने की योग्यता उनमें उत्पन्न होगी। संपूर्ण इकाई का अध्ययन करने के बाद छात्र आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की निबंध-लेखन संबंधी विशेषताओं को समझने और समझाने में सक्षम होंगे।

८.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी हिंदी के समर्थ निबंधकार हैं। वे हिंदी के ऐसे गिने-चुने निबंधकारों में से एक हैं, जिनमें विषय-वैविध्यता के साथ-साथ अभिव्यक्ति की अद्भुत शक्ति भी थी। उनके निबंध उनकी वैयक्तिक विशेषताओं से गहरे तक संपृक्त हैं। उनके निबंधों में इतिहास-चेतना और विशिष्ट संस्कृति दर्शन देखने को मिलता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का व्यक्तित्व, उदारचेता साहित्यकार का व्यक्तित्व है और इसमें सामंजस्य की अद्भुत

mynotes.in

भावना देखने को मिलती है। उनकी इसी भावना के कारण उनके विचार अन्य निबंधकारों से विशिष्ट हो जाते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कुछ विशेषताएं उनके निबंधों के आधार पर चिन्हित की जा सकती हैं जैसे, उनकी इतिहास के प्रति विशेष रूचि उनके निबंधों में देखने को मिलती है, धर्म और संस्कृति के संबंध में उनके मौलिक विचार उनके निबंधों में दिखाई देते हैं, पौराणिक एवं संस्कृत-साहित्य के प्रति एक सम्मान का भाव देखने को मिलता है। मानवतावाद के प्रति उनके विचार अपने समय की सबसे खास व्याख्या के रूप में देखे जा सकते हैं। उनके लिए साहित्य की रचना केवल वाग्वैदग्ध्य नहीं है बल्कि उसका एक विशिष्ट उद्देश्य है और वह उद्देश्य है - लोक कल्याण। ऐसा साहित्य ही श्रेयस्कर है जो सामाजिक मनुष्य के मंगल विधान को सुनिश्चित करता है। 'अशोक के फूल', 'विचार और वितर्क', 'कल्पलता', 'कुटज', 'आलोकपर्व' एवं 'विचार प्रवाह' आदि उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह हैं, जिनमें उनके संपूर्ण मानसिक जगत की तर्कसंगत अभिव्यक्ति देखने और समझने को मिलती है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कई उपन्यासों की भी रचना की जैसे, 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारुचंद्रलेख', 'पुनर्नवा', 'अनामदास का पोथा'। शोध और आलोचना संबंधी उनके कई ग्रंथ प्रकाशित हुए जिनमें, 'सूर साहित्य', 'हिंदी साहित्य की भूमिका', 'कबीर', 'हिंदी साहित्य का आदिकाल', 'हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास', 'मध्यकालीन बोध का स्वरूप', 'सहज साधना', 'मध्यकालीन धर्म साधना', 'नाथ संप्रदाय', 'सिख गुरुओं का पुण्य स्मरण', 'मेघदूत एक पुरानी कहानी', 'कालिदास की लालित्य योजना', 'मृत्युंजय रवीन्द्र', 'लालित्य तत्व', 'साहित्य का मर्म', 'साहित्य का साथी', 'प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद' आदि उल्लेखनीय हैं। उनके द्वारा सृजित इस तालिका में जो विषय सम्मिलित हैं, उनसे हम उनकी रूचि का अंदाजा सहज ही लगा सकते हैं। एक सर्जक व्यक्ति कितनी ही विधाओं में रचना करे परंतु उसका अपना एक व्यक्तित्व उन सभी में अनुस्यूत रहता है। इन ग्रंथों से इतिहास और परंपरा के प्रति उनके एक खास लगाव का अंदाजा हम सहज ही लगा सकते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य को वैचारिक रूप से नई दिशाओं से संपन्न बनाया। उन्होंने हिंदी साहित्य के इतिहास की कई भूलों को संशोधित किया। तत्कालीन वैचारिक अवधारणाओं को भारतीय इतिहास और परंपरा के अनुरूप विश्लेषित किया। जिन विषयों को वे अपने शोधग्रंथों में उठा सकते थे या जिन विषयों पर विस्तृत और व्यापक गंभीर चिंतन की आवश्यकता थी, वहां तो हमें अलग ग्रंथ ही मिलते हैं, पर असंख्य छोटे-छोटे वैचारिक सूत्र सिद्ध करने के लिए उन्होंने निबंधों का सहारा लिया। इसीलिए उनके निबंध हमें उनकी पूरी विचार-सरणि का सहज अभिव्यक्ति-करण प्रतीत होते हैं।

८.२ निबन्ध : शिरीष के फूल

८.२.१ शिरीष के फूल निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

'शिरीष के फूल' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का अत्यंत प्रसिद्ध ललित निबंध है। उनकी अभिव्यक्ति शैली की सुंदरता इस निबंध में देखते ही बनती है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की संवेदना अतीत की सामग्री से अपने समय के प्रश्नों का उत्तर देती है। यह निबंध भी इसी शैली में अपने समय की कुछ समस्याओं का समाधान ढूंढने का और उनका विश्लेषण करने का प्रयास है। विषय-वस्तु की दृष्टि से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध व्यंजनात्मकता

का उत्कृष्ट उदाहरण सिद्ध होते हैं। इस निबंध में आचार्य ने शिरीष के संपूर्ण स्वरूप की विशेषताओं को चिन्हित करते हुए उन्हें आज के परिवेश से जोड़कर - कहीं वर्णन, कहीं विश्लेषण, कहीं व्यंग और कहीं हास्य-पूर्ण ढंग से अपने उद्देश्य को सिद्ध किया है।

निबंध का आरंभ वे अत्यंत उन्मुक्त ढंग से शिरीष की विशेषताओं को बताते हुए करते हैं, साथ ही उसके महत्व को स्थापित करने के लिए अन्य प्रजातियों से उसकी तुलना भी करते चलते हैं। अपनी बात आरंभ करते हुए वे कहते हैं, "जेठ की जलती धूप में, जबकि धारित्री निर्धूम अग्निकुंड बनी हुई थी, शिरीष नीचे से ऊपर तक फूलों से लद गया था। कम फूल इस प्रकार की गर्मी में फूल सकने की हिम्मत करते हैं। कर्णिकार और आरग्वध (अमलतास) की बात मैं भूल नहीं रहा हूं।.... शिरीष के साथ आरग्वध की तुलना नहीं की जा सकती। वह पन्द्रह-बीस दिन के लिए फूलता है।..... कबीरदास को इस तरह पन्द्रह दिन के लिए लहक उठना पसंद नहीं था।..... 'दस दिन फूला फूलि के खंखड़ भया पलास'! ऐसे दुमदारों से तो लंडूरे भले। फूल है शिरीष। वसंत के आगमन के साथ लहक उठता है, आषाढ़ तक तो निश्चित रूप से मस्त बना रहता है। मन रम गया तो भरे भादो में भी निर्घात फूलता रहता है जब उमस से प्राण उबलता रहता है और लू से हृदय सूखता रहता है एकमात्र शिरीष कालजयी अवधूत की भांति जीवन की अजेयता का मंत्र प्रचार करता रहता है।" इस तरह शिरीष के स्वरूप वर्णन के साथ वह अपनी बात आरंभ करते हैं। शिरीष की कोमलता, उसकी कठोरता, विपरीत परिस्थितियों में उसकी जीवित रहने की क्षमता आदि सभी विशेषताओं के कारण वे उसे अवधूत की संज्ञा देते हैं।

दरअसल शिरीष की इन विशेषताओं के बहाने, वे जीवन में विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष करने और अपने को जीवन की प्रतियोगिता में बनाए रखने की जद्दोजहद की वे प्रशंसा करते हैं। यह विशेषताएं और गुण जो कि उन्हें एक पौधे में दिखाई दे रही हैं, मानव जीवन के लिए भी अत्यंत उपयोगी और महत्वपूर्ण हैं। ये ऐसी विशेषताएं हैं, ऐसे गुण हैं, जिनसे किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व न केवल निखरता है बल्कि जीवन के सुख-दुख, धूप-छांव आदि से गुजरते हुए वह व्यक्ति अपने समूचे परिवेश की संवेदना को मानवीय आर्द्रता से महसूस करता है और समाज के लिए अपना प्रदेय प्रदान करता है। शिरीष के इन गुणों को वे अत्यंत प्रफुल्लित ढंग से व्यक्त करते हैं। उनके वर्णन में इतिहास स्वत: सम्मिलित हो जाता है, जो कि उनके लेखन की एक महत्वपूर्ण विशेषता भी है। शिरीष का वर्णन करते हुए वे आगे कहते हैं, "शिरीष के वृक्ष बड़े और छायादार होते हैं। पुराने भारत का रईस जिन मंगल-जनक वृक्षों को अपनी वृक्ष-वाटिका की चहारदीवारी के पास लगाया करता था, उनमें एक शिरीष भी है। अशोक, अरिष्ट, पुन्नाग और शिरीष के छायादार और घनमसृण हरीतिमा से परिवेष्टित वृक्ष-वाटिका जरूर बड़ी मनोहर दिखती होगी।..... शिरीष का फूल संस्कृत-साहित्य में बहुत कोमल माना गया है। मेरा अनुमान है कि कालिदास ने यह बात शुरू-शुरू में प्रचार की होगी। उनका कुछ इस पुष्प पर पक्षपात था (मेरा भी है।)। कह गए हैं, शिरीष पुष्प केवल भौंरों के पदों का कोमल दबाव सहन कर सकता है।..... शिरीष के फूलों की कोमलता देखकर परवर्ती कवियों ने समझा कि उसका सब-कुछ कोमल है। यह भूल है। इसके फल इतने मजबूत होते हैं कि नए फूलों के निकल आने पर भी स्थान नहीं छोड़ते। जब तक नए फल-पत्ते मिलकर धकियाकर उन्हें बाहर नहीं कर देते तब तक वे डटे रहते हैं।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के द्वारा शिरीष वृक्ष की इन विरोधाभासी विशेषताओं का वर्णन केवल शिरीष का वर्णन करने के लिए ही नहीं किया जा रहा, बल्कि वे अपनी सृजनात्मकता से कैसे इसका संबंध अपने समय-संदर्भों से जोड़ देते हैं, यह उनकी अत्यंत महत्वपूर्ण कलात्मक विशेषता है। इन विशेषताओं को देकर, इन सभी का साम्य वे अपने समय के राजनीतिक नेतृत्व से जोड़ देते हैं। जिस प्रकार शिरीष के फल सूख जाने के बावजूद बिना धकियाए अपने स्थान को नहीं छोड़ते, उसी प्रकार राजनीति से जुड़े हुए लोग भले ही वे उम्र अधिक हो जाने के कारण या अन्य और कारणों से सेवा के योग्य नहीं रह जाते परंतु अपनी अनुचित महत्वाकांक्षाओं के कारण वे अपने स्थान को छोड़ने के लिए तत्पर नहीं होते। पद और अधिकार की महत्वाकांक्षा उन्हें कुछ भी करने के लिए प्रेरित करती है। वे सही - गलत कुछ भी करके अपने पद और अधिकार से चिपके रहना चाहते हैं। इसे व्यक्त करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं, "शिरीष के पुराने फल बुरी तरह खड़खड़ाते रहते हैं। मुझे इनको देखकर उन नेताओं की बात याद आती है, जो किसी प्रकार जमाने का रुख नहीं पहचानते और जब तक नई पौध के लोग उन्हें धक्का मारकर निकाल नहीं देते तब तक जमे रहते हैं। मैं सोचता हूं कि पुराने की यह अधिकार-लिप्सा क्यों नहीं समय रहते सावधान हो जाती।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी शिरीष वृक्ष को अवधूत की संज्ञा से सुशोभित करते हैं। शिरीष अवधूत क्यों है ? क्योंकि जीवन की कितनी भी विषम परिस्थितियाँ हों, उसमें डटकर संघर्ष करने की शक्ति है। वह बाहरी प्रभावों से निर्विकार रहते हुए, अपने ही आनंद में मग्न रहता है। अर्थात धूप हो, गर्मी हो, चाहे कितनी भी कठिन विषम परिस्थितियां हों, शिरीष अपने जीवन का रस वायुमंडल से भी खींच लेता है। उसकी इस विकट संघर्ष शक्ति का ही परिणाम है कि वह निर्विकार रहते हुए भी इतने कोमल तंतुजाल और सुकुमार केसर को उगा लेता है। जीवन संघर्ष की कड़वाहट उसके फूलों में कहीं भी दिखाई नहीं देती। जो व्यक्ति निर्विकार रहते हुए, जीवन संघर्ष करते हुए और जीवन की विसंगतियों से पैदा हुआ गरल पीते हुए भी इस धरा को अपने स्नेह से सिक्त रखता है, अपने सौंदर्य से सुशोभित करता है, वही सही मायने में अवधूत की श्रेणी में होता है। इसीलिए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी शिरीष वृक्ष को अवधूत की संज्ञा देते हैं और शिरीष के गुणों का वर्णन करते-करते उन्हें कबीर और कालिदास याद आते हैं। उन्हें कबीर और शिरीष में समानता दिखाई देती है। दोनों मस्त और बेपरवाह हैं, पर सरस और मादक हैं। कहने का अर्थ यह कि कबीर भी जीवन भर सामाजिक विसंगतियों से लड़ते रहे, संघर्ष करते रहे पर उन्होंने उन संघर्षों से कड़वाहट नहीं इकट्ठी कीं बल्कि बाहरी कठोर आवरण के बावजूद भीतर से वे सरस और निर्मल बने रहे और समाज को वही सरसता और निर्मलता उन्होंने प्रदान की। इसी तरह कालिदास भी अवधूत या अनासक्त योगी के समान आचार्य द्विवेदी को नजर आते हैं। जिस प्रकार शिरीष के फूल फक्कड़ाना मस्ती में पनप सकते हैं, उसी प्रकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को लगता है कि मेघदूत का काव्य भी अनासक्त - अनाविल उन्मुक्त ह्रदय में ही उभर सकता है। उनके अनुसार, "जो कवि अनासक्त नहीं रह सका, जो फक्कड़ नहीं बन सका, जो किये - कराये का लेखा-जोखा मिलाने में उलझ गया, वह भी क्या कवि है।"

इस विश्लेषण का मूल भाव यह है कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह मानते हैं कि केवल कल्पना की उड़ान भरकर ही कोई कवि जीवन से और जन से नहीं जुड़ सकता है । जब तक उसने अपने परिवेश की विसंगतियों और विपरीत परिस्थितियों को नहीं देखा और

भोगा होगा, वह जनपीड़ा को समझने में सक्षम नहीं होगा और न ही वह इस संदर्भ में कोई मार्ग दिखा सकेगा। जो कविता जीवन को प्रशस्त नहीं कर सकती । वह कविता भी क्या कविता है? सच्चा व्यक्ति, सच्चा अवधूत वही है जो गरल पीकर भी अमृत प्रदान करता है। यह विशेषता उन्हें कबीर में दिखाई पड़ती है । कबीर पर किया गया उनका अध्ययन जगजाहिर है। वास्तव में कबीर आज जितने बड़े विराट रूप में हमारे सामने हैं, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के प्रयत्नों का ही फल है । आचार्य द्विवेदी ऐसे गुणों के सदैव प्रशंसक रहे हैं और उनके कई निबंधों में इस तरह के जीवट विचार हमें देखने को मिलते हैं ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार जीवनसत्य को उद्घाटित करने के लिए ही अवधूत होना आवश्यक नहीं है बल्कि जीवन-सौंदर्य को समझने और अभिव्यक्त करने के लिए भी यह अत्यंत आवश्यक है । कालिदास में वे इसी विशेषता को पाते हैं । कालिदास अपने साहित्य में सौंदर्य की अभिव्यक्ति जिस ढंग से कर सके हैं, उसमें उनके अनासक्त योगी जैसी स्थिरप्रज्ञता और विदग्धता का ही योगदान है, इसीलिए वे लिखते हैं, "कालिदास वजन ठीक रख सकते थे क्योंकि वे अनासक्त योगी की स्थिरप्रज्ञता और विदग्ध प्रेमी का हृदय पा चुके थे। कवि होने से क्या होता है ? मैं भी छन्द बना लेता हूं तुक जोड़ लेता हूं और कालिदास भी छंद बना लेते थे, तुक भी जोड़ ही सकते होंगे। इसीलिए हम दोनों एक श्रेणी के नहीं हो जाते।" सौंदर्य की अभिव्यक्ति के लिए सिर्फ इतना ही पर्याप्त नहीं है। एक कवि सौंदर्य की अभिव्यक्ति करने में सक्षम तब हो पाता है जब वह अनासक्त भाव से उस सौंदर्य को महसूस करता है। इसीलिए वे कहते हैं, "शकुंतला बहुत सुंदर थी। सुंदर क्या होने से कोई हो जाता है। देखना चाहिए कि कितने सुंदर हृदय से वह सौंदर्य डुबकी लगाकर निकला है। शकुंतला कालिदास के हृदय से निकली थी ।..... कालिदास सौंदर्य के आवरण को भेद कर उसके भीतर तक पहुंच सकते थे, दुख हो कि सुख, वे अपना भाव-रस उस अनासक्त कृषीवल की भांति खींच लेते थे जो निर्दलित इक्षुदण्ड से रस निकाल लेता है । कालिदास महान थे, क्योंकि वे अनासक्त रह सके थे।" और कालिदास के वर्णन के क्रम में वह इसी समानता के दर्शन आधुनिक कवियों में से सुमित्रानंदन पंत में करते हैं । सुमित्रानंदन पंत के सौंदर्य चित्रण में भी उन्हें यही अनासक्त भाव दिखाई देता है ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में वर्णन एक बवंडर की तरह आते हैं, जिनमें उड़ा लेने की प्रवृत्ति होती है और वह किस दिशा की ओर चले जाएंगे, यह पता नहीं चलता। उनके लगभग सभी निबंधों में ऐसी प्रवृत्ति देखने को मिल जाती है । इसी प्रवृत्ति के कारण वे इतिहास, शास्त्र, प्राचीन साहित्य आदि की चर्चा करते-करते कब आधुनिक परिवेश में प्रविष्ट हो जाते हैं, पता ही नहीं चलता। इस निबंध में भी वे शिरीष की चर्चा करते-करते, उसके गुणों को बताते-बताते कब उनका तारतम्य इतिहास के विभिन्न संदर्भों से करने लगते हैं और कब उसे अपने समय-संदर्भों से जोड़ देते हैं, पता नहीं चलता । शिरीष उन्हें आश्चर्य से भर देता है। उसका अनासक्त योगी की भांति इस जगत में स्थिर बने रहना उन्हें बेहद प्रेरणादायी लगता है । धूप, वर्षा, आंधी, लू आदि जैसे बाह्य परिवर्तनों से वह कैसे अपने को सुरक्षित रख लेता है और उनके प्रति तटस्थ रहते हुए कैसे इतने सुंदर फूल उपजा लेता है, यह उन्हें बेहद आश्चर्यचकित करने वाला और दुर्लभ दृश्य लगता है। यह दुर्लभता उन्हें कबीर में दिखती है, कालिदास में दिखती है, सुमित्रानंदन पंत में दिखती है और अंत में महात्मा गांधी में दिखती है। निबंध के अंत में वे इस विषय को अपने समय-संदर्भों से जोड़ते हुए कहते हैं, "हमारे देश के ऊपर से जो यह मार-काट, अग्निदाह, लूट-पाट, खून-खच्चर का

बवंडर बह गया है, उसके भीतर भी क्या स्थिर रहा जा सकता है ? शिरीष रह सका है। अपने देश का एक बूढा रह सका था। क्यों मेरा मन पूछता है कि ऐसा क्यों संभव हुआ ? क्योंकि शिरीष भी अवधूत है। शिरीष वायुमंडल से रस खींचकर इतना कोमल और इतना कठोर है। गांधी भी वायुमंडल से रस खींचकर इतना कोमल और इतना कठोर हो सका था। मैं जब-जब शिरीष की ओर देखता हूं तब तब हूक उठती है - हाय, वह अवधूत आज कहां है!" और इस तरह से वे निबंध का समापन करते हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की सृजनात्मक चेतना उनके अपने अध्यवसाय और गुरु-गंभीर अध्ययन का परिणाम है। उनका शास्त्रज्ञान, उनकी इतिहास-चेतना, उनका साहित्य प्रेम, उन्हें ज्ञान से लबरेज और जीवंत बनाता है। एक बवंडर की तरह चलने वाले उनके विचार, जो हमें उनके निबंधों में दिखाई देते हैं, वे उनकी इसी प्रवृत्ति का परिणाम हैं। शिरीष की अनासक्ति इस समाज के लिए किस तरह प्रेरणादायी है, समाज को सौंदर्ययुक्त करने के लिए कितनी उपयोगी और आवश्यक है, यह इस निबंध को पढ़कर समझा जा सकता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने समय-संदर्भों से बेहद व्यथित थे। स्वतंत्रता के समय का अस्थिर वातावरण और हिंसा का अतिरेक जीवन भर उन्हें सालता रहा। यही हिंसा उनके समय के सबसे बड़े प्रेरणादायी व्यक्तित्व महात्मा गांधी को भी लील गई। उनकी यह संवेदना उनके कई निबंधों में अभिव्यक्त हुई है।

८.२.२ शिरीष के फूल निबन्ध का प्रतिपाद्य:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में मनुष्य की विभिन्न प्रवृत्तियों का निदर्शन हमें होता है। उन्होंने इतिहास, संस्कृति, साहित्य आदि के बहाने अलग-अलग शैलियों में मनुष्य के अमर इतिहास का मूल्यांकन किया है। इसीलिए उनके निबंधों में हमें सुख-दुख के सफेद-स्याह दृश्य मिलते हैं। शिरीष के फूल निबंध कल्पलता के श्रेष्ठ निबंधों में से एक है, जिसमें आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने व्यंजनापूर्ण ढंग से इतिहास के साथ-साथ अपने समय-संदर्भों का सार्थक विश्लेषण किया है, इसके साथ ही एक विशिष्ट मानवतावादी दृष्टि जो उनके साहित्य का प्राणतत्व है, वह भी हमें देखने को मिलती है।

आज का युग स्वार्थ का युग है और मनुष्य का लगातार नैतिक पतन होता जा रहा है। मनुष्य महानता के तत्वों को छोड़कर निकृष्टता की ओर बढ़ रहा है। व्यक्ति ही अपने समाज का चेहरा होता है। उसी के समूह से मिलकर समाज का निर्माण होता है। 'जैसा व्यक्ति, वैसा समाज', इसीलिए आज समाज हमें निरंतर गर्त की ओर जाता दिखाई दे रहा है। कौन से लक्षण हैं जो व्यक्ति और समाज को उर्ध्वमुखी बनाते हैं, इस निबंध में उनका सार्थक विश्लेषण किया गया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्य में मनुष्य और उसकी प्रवृत्तियाँ निरंतर शोध का विषय रही हैं और जीवन के उदात्त मूल्यों में उनकी गहरी आस्था रही है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लिए साहित्य का उद्देश्य ही है - मनुष्य का आत्मिक और नैतिक विकास। और यह जिस तरह भी संभव हो सकता है वह प्रयास उनके लेखन में हमें दिखाई देता है।

शिरीष के फूल निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी शैली के अनुरूप प्रतीकात्मक ढंग से अपनी बात कहते हैं। वह शिरीष वृक्ष के स्वरूप का वर्णन करते हैं, उसके गुणों-अवगुणों को पाठकों के सामने रखते हैं, उसकी समीक्षा करते हैं, गुणों की प्रशंसा करते हैं

और प्रतीकात्मक ढंग से यह सब करते हुए वे अंत में अपने उद्देश्य की ओर आ जाते हैं। उनका अंतिम उद्देश्य है - लोककल्याण और अपनी बात कहते हुए वे शिरीष के गुणों का साम्य-संयोग मनुष्य से स्थापित करते हुए वे एक नया समाजोपयोगी दृष्टिकोण हमारे सामने रखते हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि में शिरीष अवधूत की भांति फक्कड़ाना मस्ती में जीवित रहने वाला वृक्ष है । जो अत्यंत विपरीत परिस्थितियों में भी अपने को न केवल जीवित रखता है बल्कि अपने सद्गुणों से समाज को लाभान्वित करता है। ठीक उसी प्रकार का दृष्टिकोण हमारे समाज के राजनेताओं और साहित्यकारों में भी आवश्यक है। राजनेताओं को अपनी अधिकार-लिप्सा और स्वार्थवृत्ति पर अंकुश लगाकर यह कार्य करना होगा। उन्हें सचमुच निर्विकार रहकर समाज सेवा का संकल्प लेना होगा, तभी वे समाज के लिए उपयोगी हो सकते हैं और समाज को कुछ दे सकते हैं। इसके साथ ही उन्हें नई चली आती पीढ़ी को भी अवसर देना होगा। यह सब कुछ तभी संभव हो सकेगा, जब वे निर्विकार भाव से एक अवधूत की भांति अपने कार्यों को सिद्ध करेंगे। ठीक ऐसे ही कवि और साहित्यकार को भी निर्विकार रहकर एक अवधूत की भांति समाज के सुंदर-असुंदर का चित्रण करना चाहिए। इसी में उनके साहित्य और उनकी कविता की सार्थकता है। अपनी बात को सिद्ध करने के लिए वे कबीर और कालिदास का व्यावहारिक उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं। वस्तुतः आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का लेखन और चिंतन पूरी तरह से समाज और मनुष्यता को समर्पित है। उनके समस्त लेखन में इन्हीं के प्रति चिंताएं देखने को मिलती हैं। यह निबंध भी इन्हीं समस्त प्रवृत्तियों से युक्त है, प्रेरित और प्रभावित है ।

८.३ सारांश

'कल्पलत्ता' निबंध संग्रह से 'शिरीष के फूल' निबंध का वर्णन और विश्लेषण किया गया है। इन निबंध के आधार पर हम कह सकते हैं कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि इतिहास प्रेरित सांस्कृतिक दृष्टि है, जिसके अंतर्गत वे समसामयिक प्रश्नों पर भी विचार करते हैं। मानवीयता उनके लिए ऐसा प्रत्यय है, जो साहित्य के मूल में है और इसका अंतिम उद्देश्य लोक-कल्याण है । ऊपर उल्लिखित निबंध इस दृष्टि से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अत्यंत महत्वपूर्ण निबंध है ।

८.४ उदाहरण व्याख्या

व्याख्या : अंश (१):

मैं सोचता हूं कि पुराने की यह अधिकार-लिप्सा क्यों नहीं समय रहते सावधान हो जाती ? जरा और मृत्यु यह दोनों ही जगत के अतिपरिचित और अतिप्रमाणिक सत्य हैं। तुलसीदास ने अफसोस के साथ इनकी सच्चाई पर मोहर लगाई थी - 'धरा को प्रमान यही तुलसी जो फरा सो झरा जो बरा सो बुताना !' मैं शिरीष के फलों को देख कर कहता हूं कि क्यों नहीं फ़लते ही समझ लेते बाबा की झड़ना निश्चित है !

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'शिरीष के फूल' निबंध से उधृत है।

प्रसंग: उक्त उद्धरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने मनुष्य की लालची प्रवृत्तियों की आलोचना की है। जबकि जीवन की अनित्यता भारतीय दर्शन में हमेशा से वर्णित है और इस सत्य से सभी परिचित हैं। फिर भी अधिकार लिप्सा और लालच के कारण मनुष्य अपनी नैतिकता से लगातार समझौता करता रहता है। इस अवतरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसी का विश्लेषण किया है।

व्याख्या: शिरीष के फूल निबंध से लिया गया यह अवतरण हमारे जीवन के नैतिक पक्ष से संबंधित है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने समय-संदर्भों को सामने रखकर यह विचार करते हैं कि इस समय लोग अधिकार प्राप्त करने के लिए बेहद इच्छुक हैं और जिन लोगों को अधिकार मिल जाते हैं अर्थात वे ऐसे पदों पर नियुक्त हो जाते हैं जहां जिसका वह अनुचित लाभ अपने लिए उठाते हैं, उन पदों और अधिकारों को छोड़ने में उन्हें बेहद तकलीफ होती है। वह इन्हें बनाए रखने के लिए किसी भी तरह का अनैतिक समझौता खुद से करते हैं अर्थात उनका नैतिक स्तर बहुत गिर जाता है। यह बात विशेष रूप से उन्होंने अपने समय की राजनीति को ध्यान में रखते हुए कही है।

जबकि हमारे जीवन का अंतिम सत्य है - लगातार जीवन का क्षरण और अंततः मृत्यु। अर्थात हम इस धरा से कुछ भी लेकर अंतिम रूप से नहीं जा सकते, फिर भी अधिकार और संचय के प्रति इतने उत्सुक रहते हैं। जबकि हमें अनासक्त भाव से अपने कर्मों को अंजाम देना चाहिए। भारतीय पौराणिक साहित्य में भी जीवन के विभिन्न पक्षों में मनुष्य के विभिन्न कार्य-धर्मों का विवरण दिया गया है और एक समय के बाद मनुष्य को यह निर्देश दिया गया है कि वह इस भौतिक जगत के समस्त लालच और इच्छाओं को त्याग कर अनासक्त भाव से अपना जीवन व्यतीत करें। परंतु हमारे समय में मनुष्य का नैतिक स्तर इतना गिर गया है कि वे स्थायी रूप से अपनी सभी भौतिक इच्छाओं को बनाए रखना चाहते हैं, जो कि संभव नहीं है। इसके प्रमाण में उन्होंने कवि तुलसीदास की उक्ति भी उधृत की है कि, इस धरती के लिये प्रामाणिक तथ्य तो यही है कि जो फल लगे हैं वह एक दिन झड़ जाएंगे और जो आज बहुत दीप्त हो रहा है, जाना जा रहा है, प्रसिद्ध है, एक दिन यह प्रसिद्धि उसे छोड़ जाएगी। जिस दिन वह अपनी शारीरिक सामर्थ्य के अनुसार कमजोर होता जाएगा, उसकी क्षमताएं कम होती रहेंगी अर्थात वह वृद्ध होता जाएगा, उस दिन अशक्त होकर उसे यह सब कुछ त्यागना ही होगा। यदि वह इच्छा से नहीं भी त्यागेगा तो पीछे से आने वाले लोग उसे धकेल कर हाशिए पर डाल देंगे। इसलिए समय रहते अपनी क्षमताओं को समझते हुए व्यक्ति को नई आने वाली पीढ़ी को अधिकार देते रहना चाहिए, सौंपते रहना चाहिए।

वस्तुतः आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस अवतरण के माध्यम से यह संकेत करते हैं कि प्रकृति का यह अटल नियम है कि एक पीढ़ी के बाद दूसरी पीढ़ी लगातार आती रहती है और पहली पीढ़ी को अपने पीछे आने वाली दूसरी पीढ़ी को समय रहते अनासक्त भाव से अपनी लालसाओं का शमन करते हुए पद - अधिकार इत्यादि स्वेच्छा से सौंप देना चाहिए।

विशेष:

१. निबंधकार ने अपने समय के कटु सत्य को अभिव्यक्त किया है।
२. निबंधकार ने जीवन की अनित्यता का संकेत किया है।
३. निबंधकार ने अनासक्त भाव से जीवन जीने की प्रेरणा दी है।

व्याख्या : अंश (२):

अवधूतों के मुंह से ही संसार की सबसे सरस रचनाएं निकली हैं । कबीर बहुत-कुछ इस शिरीष के समान ही थे, मस्त और बेपरवाह, पर सरस और मादक। कालिदास भी जरूर अनासक्त योगी रहे होंगे । शिरीष के फूल फक्कड़ाना मस्ती से ही ऊपज सकते हैं और मेघदूत का काव्य उसी प्रकार के अनासक्त अनाविल उन्मुक्त हृदय में उमड़ सकता है । जो कवि अनासक्त नहीं रह सका, जो फक्कड़ नहीं बन सका, जो किए - कराए का लेखा-जोखा मिलाने में उलझ गया, वह भी क्या कवि है ?

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'शिरीष के फूल' निबंध से उधृत है ।

प्रसंग: यह अवधारणा शिरीष के फूल निबंध से उद्धृत है जिसमें आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने यह बताने का प्रयास किया है कि एक कवि किस रूप में ज्यादा सार्थक तरीके से अपने कथ्य को कह सकता है कभी समाज की संपत्ति होता है और उसकी कविता समाज हित के गहरे उद्देश्यों से जुड़ी होती है उसमें खास सौंदर्य बोध होता है जो उसके अनासक्त भाव से उत्पन्न होता है इसी संदर्भ में इस में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कुछ उपयोगी तथ्यों की चर्चा की है ।

व्याख्या: अवधूत कौन है ? अवधूत वह है, जिसने इस धरा के वास्तविक सत्य को जान लिया है, जो जीवन के सार्थक उद्देश्य को समझ गया है और जो निर्विकार भाव से कर्मरत रहते हुए समाज को अपना सार्थक योगदान प्रदान करता है, जिसे भौतिक इच्छाएं और आकांक्षाएं उसके कर्मपथ से विचलित नहीं कर पाते हैं, वही अवधूत है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी शिरीष के फूल निबंध में शिरीष को अवधूत की संज्ञा देते हैं और शिरीष के गुणों को बताते - बताते, इन गुणों की साम्यता कवियों से भी स्थापित करते हैं ।

उनकी दृष्टि में कबीर, कालिदास और सुमित्रानंदन पंत ऐसे कवि हैं, जो इन गुणों का धारण कर सके हैं अर्थात यह भी अवधूत ओं के समान हैं । इनमें जीवन के प्रति यथार्थ दृष्टिकोण देखने को मिलता है । इनकी कविता समाज के व्यापक हितों को लेकर चली है। इनमे जीवन और जगत को देखने का एक निर्विकार नजरिया रहा है, इसीलिए कबीर समाज के व्यापक हितों को आवाज दे सके हैं और अवधूत जैसी फक्कड़ाना मस्ती के चलते ही कालिदास सौंदर्य के प्रति निर्विकार दृष्टि रख सके हैं। सौंदर्य की अभिव्यक्ति विभिन्न कवियों में अलग-अलग तरीके से देखने को मिलती है । कोई सौंदर्य को अधिकार-लिप्सा से देखता है, उसे प्राप्त करना चाहता है । और किसी की दृष्टि उस को तटस्थ भाव से पूजने और वर्णित करने की होती है । कालिदास सौंदर्य को तटस्थ भाव से देखने वाले कवि थे । इसीलिए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह मानते हैं कि वे अपने साहित्य में इतना सार्थक वर्णन कर सके हैं।

अपने वर्णन के क्रम में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि सुंदर होने भर से कोई सुंदर नहीं हो जाता। बल्कि कवियों के संदर्भ में वे यह कहते हैं कि किसी कवि का सौंदर्य वर्णन तब महत्वपूर्ण बनता है, जब वह अत्यंत सुंदर हृदय से उस सौंदर्य को देखता और परखता है, अर्थात हृदय में आत्मसात कर फिर वर्णन करता है। इसीलिए कालिदास शकुंतला का इतना सुंदर वर्णन कर सके। समाज को भी दिशा देने का काम एक सुंदर हृदय व्यक्ति ही कर

सकता है। कबीर में यह सुंदरता थी। वे समाज के सच्चे सौंदर्य को देख और परख सके थे। वे जानते थे कि विसंगतियां और विकृतियां क्या हैं । और सबकुछ बिना किसी विकार के तटस्थ भाव से उन्होंने देखा था, हृदयंगम किया था। इसीलिए उसी अनुरूप वे समाज का चित्र अपने काव्य में उपस्थित कर सके। वस्तुतः आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह मानते हैं कि कवियों के लिए यह आवश्यक है कि वे तटस्थ भाव से विषयवस्तु का निरीक्षण करें और फिर अवधूत की भांति उसका वर्णन करें, जैसा कि कालिदास और कबीर ने किया।

विशेष :

१. वास्तविक सौंदर्यबोध का वर्णन किया है।

२. कालिदास और कबीर के सौंदर्य बोध की विशेषताओं का अंकन किया है।

८.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. शिरीष का फूल संस्कृत साहित्य में किस प्रकार का माना गया है ?

(क) कोमल (ख) कठोर

(ग) बेनूर (घ) बदरंग

२. प्रेंखा दोला का अर्थ है ?

(क) कुर्सी (ख) झूला

(ग) चारपाई (घ) तिपाई

३. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार निम्न में से कौन सा वृक्ष अवधूत के समान है?

(क) अमलतास (ख) अरिष्ट

(ग) पुन्नाग (घ) शिरीष

४. शकुंतला का चित्र निम्न में से किसने बनाया था ?

(क) कालिदास (ख) दुष्यंत

(ग) तुलसीदास (घ) कबीर

८.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) निबंध 'शिरीष के फूल' का उद्देश्य।

२) निबंध 'शिरीष के फूल' और कालिदास का व्यक्तित्व।

munotes.in

३) निबंध 'शिरीष के फूल' और कबीर का व्यक्तित्व।

४) शिरीष वृक्ष की विशेषताएँ।

८.७ बोध प्रश्न

१) निबंध 'शिरीष के फूल' की विषयवस्तु का विश्लेषण कीजिए ?

२) निबंध 'शिरीष के फूल' के आधार पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की विशेषताओं की चर्चा कीजिए ?

३) निबंध 'शिरीष के फूल' के प्रतिपाद्य का विस्तार से विश्लेषण कीजिए ?

८.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

८.१

निबन्ध : भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य

इकाई की रूपरेखा

८.१.० इकाई का उद्देश्य

८.१.१ प्रस्तावना

८.१.२ निबन्ध : भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य

८.१.२.१ भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य निबन्ध की अन्तर्वस्तु

८.१.२.२ भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य निबन्ध का प्रतिपाद्य

८.१.३ सारांश

८.१.४ उदाहरण-व्याख्या

८.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

८.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

८.१.७ बोध प्रश्न

८.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

८.१.० इकाई का उद्देश्य

- 'भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य' निबन्ध की अन्तर्वस्तु को छात्र जानेंगे।
- 'भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य' निबन्ध का प्रतिपाद्य क्या है उससे छात्रों को परिचय होगा।

८.१.१ प्रस्तावना

'भगवान महाकाल का कुण्ठ नृत्य' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया ऐसा निबंध है जो देश को आजादी मिलने के बाद की चुनौतियों और मुश्किलों को सामने रखता है। १५ अगस्त १९४७ से पूर्व देश का घटनाक्रम इस लक्ष्य के प्रति विशेष रूप से समर्पित था कि कैसे देश की आजादी के लक्ष्य को प्राप्त किया जाए। यह अत्यंत दुष्कर था पर जीवट संघर्ष की बदौलत भारतीय जनसमूह अंततः इस लक्ष्य को प्राप्त कर सका। आजादी मिलने के बाद की स्थितियां किंकर्तव्यविमूढ़ कर देने वाली थीं। यह तय करना कि अब देश की जो प्रासंगिक समस्याएँ हैं, उनसे कैसे निपटा जाए, बड़ा कठिन कार्य था। सामूहिक चिंतन के अतिरिक्त सामूहिक क्रियान्वयन की अत्यंत आवश्यकता थी। इन्हीं समस्त प्राथमिक चुनौतियों को लेकर और विकास के पथ पर आगे बढ़ने के लिए आवश्यक सतर्कताओं को ध्यान में रखते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध की रचना की है।

munotes.in

८.१.२ निबन्ध : भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य

८.१.२.१ भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

'भगवान महाकाल का कुण्ठ नृत्य' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया ऐसा निबंध है जो देश को आजादी मिलने के बाद की चुनौतियों और मुश्किलों को सामने रखता है। १५ अगस्त १९४७ से पूर्व देश का घटनाक्रम इस लक्ष्य के प्रति विशेष रूप से समर्पित था कि कैसे देश की आजादी के लक्ष्य को प्राप्त किया जाए । यह अत्यंत दुष्कर था पर जीवट संघर्ष की बदौलत भारतीय जनसमूह अंततः इस लक्ष्य को प्राप्त कर सका। आजादी मिलने के बाद की स्थितियां किंकर्तव्यविमूढ़ कर देने वाली थीं। यह तय करना कि अब देश की जो प्रासंगिक समस्याएँ हैं, उनसे कैसे निपटा जाए, बड़ा कठिन कार्य था । सामूहिक चिंतन के अतिरिक्त सामूहिक क्रियान्वयन की अत्यंत आवश्यकता थी। इन्हीं समस्त प्राथमिक चुनौतियों को लेकर और विकास के पथ पर आगे बढ़ने के लिए आवश्यक सतर्कताओं को ध्यान में रखते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध की रचना की है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया 'कल्पलत्ता' निबंध संग्रह में से 'भगवान महाकाल का कुण्ठ नृत्य' निबंध में देश की आजादी के बाद सबसे बड़ी समस्या साम्प्रदायिकता की थी । साम्प्रदायिक हिंसा के बाद अस्थिर हो चुकी सामाजिक और राजनीतिक स्थिति की थी । भारतीय संस्कृति नैतिकता को लेकर अत्यंत आग्रही रही है। हजारों वर्षों में इसमें कई बार अन्य संस्कृतियों का प्रभाव पड़ने के बावजूद भी जो धीरता, नैतिकता और मानवीयता का तत्व रहा है, वह कभी भी कुंठित नहीं हो सका। इसी नैतिकता और धीरता के गुणों के कारण ही भारतीय जनसमूह आजादी के लक्ष्य को सफलतापूर्वक हासिल कर सका है। इसे स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं, "अपनी पराधीनता और बेबसी के दिनों में भी एक बात में हम बराबर विरोधियों से बीस रहे हैं। हम में उनकी अपेक्षा कहीं अधिक नैतिक बल रहा है। घोर विपत्ति के क्षणों में भी हमने अन्याय का पक्ष कभी नहीं लिया है। जिस बात को हम सत्य समझ रहे हैं, उसके लिए बड़ा-से-बड़ा बलिदान देने को तैयार भी रहे हैं।" आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इन स्थितियों के लिए भारतीय संस्कृति के व्यापक प्रभाव को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं । वे इस बात का महत्व भी भली-भांति समझते हैं कि भारतीय संस्कृति के इन संस्कारों का व्यापक प्रभाव अन्य परतंत्र देशों की जनता पर भी व्यापक रूप से पड़ा है। उस समय एशिया और अफ्रीका का बहुत बड़ा भाग यूरोपीय उपनिवेशवाद का शिकार था। फ्रांस, ब्रिटेन आदि के प्रभाव में इन महाद्वीपों का एक बड़ा भू-भाग था। महात्मा गांधी ने तो दक्षिण अफ्रीका के संघर्ष में नेतृत्व भी किया था और अंग्रेजी शासकों को झुकाने में सफलता भी हासिल की थी । बाद में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का उन्होंने जिस तरह से नेतृत्व किया, पूरे भारत को राजनीतिक दृष्टि से एकीकृत स्थिति में लेकर आये, भारतीय जनसमूह को उसकी शक्ति का एहसास दिलाया और अपने अहिंसक आंदोलनों के द्वारा जो चमत्कारी प्रभाव उत्पन्न किया, उसका अंग्रेजों ने भी लोहा माना और अन्य देशों पर भी इसका अत्यंत सकारात्मक प्रभाव पड़ा। इन सभी के पीछे भारतीयों की वह नैतिक शक्ति थी, जो भारतीय संस्कृति का स्थायी प्रभाव थी ।

स्वतंत्रता के बाद भारत में जो भी उथल-पुथल हुई, वह राष्ट्रीय शर्म का विषय बनी। पूरा देश इससे आहत था। भारतीय संस्कृति में यह दुर्लभ उदाहरण था कि भारतीय इस तरह से आपस में लड़ रहे थे। घोर अमानवीयता देखने को मिल रही थी। यह हमारी संस्कृति के बिल्कुल भी अनुकूल नहीं था। ऐसी स्थिति में सत्य, प्रेम, अहिंसा जैसे मूल्य अपनी मूल्यवत्ता को कितना बनाए रख सकते थे ? आजादी के बाद राजनीति में जिस तरह के दो-मुँहेपन और दोगलेपन की स्थितियां बनीं, उनमें सत्य लगभग पराजित ही था। इन स्थितियों को सामने रखकर ही आचार्य जी लिखते हैं, "नित्य समाचार पत्रों में हम अपने नंगे विरोधियों को देखते हैं जो झूठ बोलने में जरा भी संकुचित नहीं होते और पाप करके दूसरों पर निर्लज्जतापूर्वक दोषारोपण करते हैं। सुनकर हमारा खून खौल जाता है। हम सोचते हैं कि ऐसा भी बेहया कोई हो सकता है। कभी-कभी हम झुंझलाते हैं, अपने नेताओं के सदुपदेशों से चिढ़ जाते हैं, कह उठते हैं, बेहया लोगों के सामने इन सदुपदेशों का क्या मूल्य है।" दरअसल निबंधकार उन तात्कालिक परिस्थितियों में जैसे नैतिक मूल्यों का पुनर्परीक्षण कर रहा है। राजनीति, वह चाहे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हो या राष्ट्रीय स्तर पर, जिस अधोपतन का शिकार थी, वहां पर इस तरह का प्रश्न उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था। विभाजन के बावजूद पाकिस्तान जिस तरह से विभाजनकारी प्रवृत्तियों को भारतीय भूभाग पर बढ़ावा दे रहा था, ऐसी स्थितियों में सचमुच राजनीतिक आदर्श अप्रासंगिक हो उठे थे। किसी भी बुद्धिजीवी का इन स्थितियों में व्यथित हो जाना कोई असंभव बात नहीं थी।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि एकदम निर्भ्रांत और स्पष्ट थी। वह जिस निष्ठा से भारतीय संस्कृति की प्रशंसा करते थे, उतनी ही ईमानदारी से वे अपनी कमियों को स्वीकार भी करते थे। बजाय के छिपाने के वे कभी भी पुनर्मूल्यांकन और आत्मसुधार की आवश्यकता पर जोर देते थे। इस निबंध में इस तरह की बात करते हुए वे कहते हैं, "चुटकी बजा के हजारों वर्ष की संस्कृति को उड़ाया नहीं जा सकता। हम यह नहीं कह सकते कि हममें दोष नहीं है। दोष एक-दो हैं? हमने कम पाप किए हैं। करोड़ों को हमने अनजान में नीच बना रखा है, करोड़ों को जानबूझकर पैरों-तले दबा रखा है और करोड़ों को हमने उपेक्षा से महान संदेशों के अयोग्य समझ रखा है। नतीजा यह होता है कि जब हम आगे बढ़ने लगते हैं तब कुछ लोग नीचे की ओर खींचते हैं - जिन्हें पैरों तले दबाया है वह कैसे आगे बढ़ने देंगे ?" भारतीय सामाजिक संरचना पर यह आचार्य जी की अत्यंत मार्मिक टिप्पणी है। वे जानते हैं कि भारत की एक बड़ी आबादी जाति एवं वर्ण आदि के कारण हजारों वर्षों से शोषण का शिकार रही है और उसके साथ सामाजिक ईमानदारी नहीं बरती गई है। आज की स्थितियों में वे इस बात को महसूस करते हैं कि जब समेकित भारतीय हितों की बात की जाती है तो भारतीय संस्कृति की ऐसी ही विसंगतियों के कारण भारतीय समाज पूर्ण-एकता की स्थिति में नहीं आ पाता है। इस तरह का संकेत केवल एक स्थिति का वर्णन ही नहीं है, दरअसल आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस नासूर पर उंगली इसलिए रख रहे हैं कि बदलते हुए समय में अब भारतीय लोगों को अपनी इन प्रथाओं और परंपराओं के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है। आधुनिक काल में दकियानूसी - रूढ़िवादी बातों की अब कोई उपयोगिता नहीं बची है। स्वतंत्रता, समानता और सामाजिक न्याय के इस युग में हर व्यक्ति समान है और दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक समाज में हर किसी को समानता का अधिकार प्राप्त है। यदि भारत को विश्व में शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में स्वयं को स्थापित करना है तो उसे इन स्थितियों को बदलने के लिए तैयार रहना होगा।

आजादी के बाद की जो परिस्थितियां निबंधकार को बेहद व्यथित करती हैं, उनमें से एक यह है कि आजादी के पहले हमें अपने शत्रु का पता था कि वह कौन है, उसकी प्रकृति क्या है, वह क्या कर सकता है, आदि-आदि । जिसके कारण लड़ने की दिशाएं हमें मालूम थीं परंतु आजादी के बाद की जो स्थितियां बनीं, उनमें एक दूसरी तरह का शत्रु सामने खड़ा नजर आया और वह शत्रु था भारतीय जनसमूह में ही मौजूद ऐसे लोग जो लाज-शर्म से दूर थे, झूठ बोलना जिनकी फितरत थी। ऐसे लोगों का ही वर्णन करते हुए निबंधकार लिखता है, "मुक्ति का संग्राम समाप्त होते ही हमें दूसरे प्रकार के शत्रुओं से पाला पड़ा है। कुछ तो ऐसे लंगे हैं कि राम-राम कहने के सिवा कुछ दूसरा सूझता ही नहीं। कुछ ऐसे काइयां है कि बस मुंह में राम बगल में छुरी।.... भारतवर्ष का सबसे निकट शत्रु वह है जो लाज-हया का नाम नहीं जानता, जो झूठ बोलकर गर्व करता है, जो छुरा भोंक कर हंसा करता है । जिसे धर्म-कर्म से कोई वास्ता नहीं । उससे उलझना हमारे लिए बड़ा कठिन होगा। रक्त में बेहयाई न हो तो उधार मांगने से थोड़े ही मिलेगी ? और यहीं इस वीरप्रसू भूमि में महाकाल का कुंठनृत्य शुरू होता है।" दरअसल निबंधकार के इस मंतव्य के पीछे के आधार यथार्थ प्रेरित हैं । उस समय देश का एक बड़ा वर्ग ऐसा था जो शांति की स्थापना में अड़ंगे लगा रहा था । बार-बार आपसी भाईचारे में व्यवधान उत्पन्न करना, सांप्रदायिक घटनाओं के द्वारा हिंसा पैदा करना, यह उसका स्वभाव था । और ऐसे तत्वों से निपटने के लिए आदर्शों की नहीं बल्कि दंड की आवश्यकता थी । सिद्धांत ऐसे लोगों के लिए नहीं होते, जिनमें मानवीयता नहीं होती। सत्य, अहिंसा, प्रेम ऐसे लोगों के लिए नहीं है जो इनका मूल्य नहीं समझते। ऐसी स्थितियों में सारा तंत्र-मंत्र और आदर्श किसी काम के नहीं सिद्ध होते । परंतु इस अतिरंजिता को समाप्त करने में दण्ड की उपयोगिता स्वतःसिद्ध है ।

'महाकाल के कुण्ठ नृत्य' से आखिर क्या तात्पर्य है ? आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध में जो प्रतीकात्मक अर्थ दिया है, वह यह है कि राजनीतिक तंत्र में अब नैतिक आदर्श संभवत: अप्रासंगिक हो चले हैं । बदले परिवेश में समस्याओं का स्वरूप बदल गया है। ऐसे में अब अन्य साधनों का उपयोग आवश्यक हो गया है । जिन्हें धर्म और नीति समझ में नहीं आते, उन्हें दंड की भाषा में समझाना आवश्यक हो गया है। भारतीय संस्कृति को अब इस परिवर्तन की अत्यंत आवश्यकता है। महाकाल के कुंठ नृत्य की यही प्रासंगिकता है । इस बात के महत्व को समझाने के लिए ही वे एक व्यवहारिक उदाहरण भी देते हैं कि यदि कोई जंगली सूअर आंख मूंदकर आक्रमण करता है तब क्या उसे सदुपदेशों से शांत किया जा सकता है ? क्या मंत्र बल से हिंसक पशुओं को बांधा जा सकता है ? ऐसा संभव ही नहीं है। ऐसे हिंसक पशुओं से निपटने के लिए अस्त्र ही उपयोगी है। समाज में भी जब इस तरह की हिंसक प्रवृत्तियां पैदा होती हैं तो उन्हें तंत्र-मंत्र और अध्यात्म की नहीं बल्कि अस्त्र - शस्त्र और कठोर दंड की आवश्यकता होती है।

इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अत्यंत व्यावहारिक दृष्टि से समस्या को देखा, जांचा और परखा है और उसके व्यावहारिक समाधान देने के प्रयास भी किए हैं। आडंबर के इस युग में सचमुच सत्य-अहिंसा-अध्यात्म जैसे तत्व नए संदर्भों में अप्रासंगिक हो गए हैं। आज का युग झूठ का युग है। स्वार्थ और लिप्सा का युग है। ऐसे में सभी से जिनके ऊपर करोड़ों की रक्षा का भार है, उनसे ऐसे नैतिक-आध्यात्मिक सिद्धांतों की आशा नहीं की जा सकती। व्यवस्था को नियोजित करने वाले हमारे सत्ता तंत्र के लोगों को भी आज के युग के अनुरूप अपने को बदलना होगा। यदि ऐसा नहीं होगा तो हमारी व्यवस्था कई तरह के छद्म-

युद्ध का शिकार हो जाएगी । इसीलिए वे कहते हैं, "झूठी बातों को सुनकर चुप हो रहना ही भले आदमी की चाल है। परंतु इस स्वार्थ और लिप्सा के जगत में जिन लोगों ने करोड़ों के जीवन मरण का भार कंधे पर लिया है वे उपेक्षा भी नहीं कर सकते । जरा-सी गफलत हुयी कि सारे संसार में आप के विरुद्ध जहरीला वातावरण तैयार हो जाएगा ।" आचार्य जी के इस कथन से हम आज के युग में संवेदनशीलता का अंदाजा लगा सकते हैं। आज के समय में जबकि मीडिया इतना शक्तिशाली हो गया है, व्यर्थ के प्रलाप फैलना बड़ी आम सी बात हो गई है । और बड़ी बड़ी घटनाएं ऐसे दुष्प्रचार के कारण हो जाती हैं । इसीलिए वे कहते हैं, "आधुनिक युग का एक बड़ा भारी अभिशाप है कि गलत बातें बड़ी तेजी से फैल जाती हैं। समाचारों के शीघ्र आदान-प्रदान के साधन इस युग में बड़े प्रबल हैं और धैर्य और शांति से मनुष्य की भलाई के सोचने के साधन अब भी बहुत दुर्बल हैं। सो, जहां हमें चुप होना चाहिए वहां चुप रह सकना खतरनाक हो गया है ।"

दरअसल युग संदर्भों के अनुरूप जीवन आदर्शों में बदलाव की मांग इस निबंध की अत्यंत महत्वपूर्ण विशेषता है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्वयं भी भारतीय संस्कृति के बड़े पक्षधर और मानवतावादी साहित्यकार हैं । मानवतावाद पर उनकी गहरी आस्था, उनके साहित्य में सर्वत्र और सभी विधाओं में दिखाई देती है । उनके अधिकतर निबंधों में उन्होंने स्पष्ट रूप से अपने दृष्टिकोण को व्यक्त किया है । परंतु जिस अनुरूप परिवेश में परिवर्तन हुआ है, उसमें हाथ बांधकर खड़े रहना और सिर्फ घटनाओं को देखना उन्हें उचित नहीं जान पड़ता। वह कर्म और स्वभाव - दोनों में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस करते हैं और इसी तथ्य को उन्होंने इस निबंध में महत्वपूर्ण और व्यवहारिक ढंग से सामने रखा है ।

८.१.२.२ भगवान महाकाल का कुण्ठनृत्य निबन्ध का प्रतिपाद्य:

'भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य' सामयिक स्थितियों का मूल्यांकन करने वाला निबंध है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जब संस्कृति और इतिहास पर लिखते हैं तब वे समसामयिक संदर्भों को जोड़ना बिल्कुल नहीं भूलते। यह निबंध तो पूर्णतया सामयिक स्थितियों पर और उन स्थितियों के मूल्यांकन पर आधारित निबंध है ।

देश की आजादी के समय जिस तरह से घटनाएं घट रही थीं, उनमें मूल्यों का भारी परिवर्तन देखने को मिल रहा था। राष्ट्रीय - अंतरराष्ट्रीय राजनीति में वैसे परिवर्तन उसके पहले नहीं देखे गए थे। इतने व्यापक संदर्भों में भी मूल्यहीनता की स्थिति डरा देने वाली थी। स्वयं नव-स्वतंत्र भारत की स्थिति भी अत्यंत त्रासद थी। सांप्रदायिकता से क्षत-विक्षत भारत की स्थिति अत्यंत अस्थिर थी। व्यक्तिगत रूप में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का नैतिक मूल्यों पर बड़ा विश्वास और गहरी आस्था रही है। उनका समस्त साहित्य मानवीयता के संदर्भ में इन्हीं की उद्घोषणा रहा है ।

वास्तव में यह अंतिम सत्य है कि बिना नैतिकता के समाज कभी भी संतुलन की स्थिति में खड़ा नहीं हो सकता और उस पर भारत जैसा बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक देश तो बिल्कुल भी नहीं । मुद्दा यह नहीं है कि नैतिक मूल्य घट रहे हैं, परिस्थितियां बिगड़ रही हैं, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लिए इस निबंध को रचने में बड़ा मुद्दा यह है कि उन्होंने अत्यंत व्यावहारिक दृष्टिकोण से इन समस्त स्थितियों का मूल्यांकन करते हुए यह मान्यता रखी है

कि समयानुकूल अपनी धारणाओं विश्वासों और मूल्यों में परिवर्तन कर लेना ही समझदारी है। जिससे समाज और राष्ट्र को अस्थिरता के संकट से बचाया जा सके।

परंतु जैसा कि हमने देखा नैतिक मूल्यों के प्रति आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की गहरी आस्था है। इन विपरीत परिस्थितियों में भी उनकी यह आस्था डिगती नहीं है। उनके सामने महात्मा गांधी का आदर्श है, जिन्होंने अपने सत्य, अहिंसा के व्यवहारिक प्रयोगों से पूरी दुनिया को एक नया रास्ता दिखाने का काम किया। उसी अनुसार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को अभी यह विश्वास है कि नैतिक आदर्शों की रक्षा की जा सकती है। इसीलिए वे लिखते हैं, "हमें महान संयोग मिला है। हमारे पूज्य नेता ने दिखा दिया है कि बड़े से बड़े सत्य का व्यवहार से कोई विरोध नहीं है। निष्क्रिय रहकर सत्य की बातें बघारना आसान है। कार्यक्षेत्र में - स्वार्थों की संघर्ष स्थली में - महान आदर्शों की रक्षा करना कठिन काम है। और हमें वही करना है।"

८.१.३ सारांश

इस इकाई में 'भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य' निबंध का आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने वर्णन और विश्लेषण किया है। इन निबंध से हम कह सकते हैं कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि इतिहास प्रेरित सांस्कृतिक दृष्टि है, जिसके अंतर्गत वे समसामयिक प्रश्नों पर भी विचार करते हैं। मानवीयता उनके लिए ऐसा प्रत्यय है, जो साहित्य के मूल में है और इसका अंतिम उद्देश्य लोक-कल्याण है। उक्त निबंध इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

८.१.४ उदाहरण - व्याख्या

व्याख्या अंश (१):

चुटकी बजा के हजारों वर्ष की संस्कृति को उड़ाया नहीं जा सकता। हम यह नहीं कह सकते कि हममें दोष नहीं है। दोष एक-दो हैं? हमने कम पाप किए हैं। करोड़ों को हमने अनजान में नीच बना रखा है, करोड़ों को जानबूझकर पैरों-तले दबा रखा है और करोड़ों को हमने उपेक्षा से महान संदेशों के अयोग्य समझ रखा है। नतीजा यह होता है कि जब हम आगे बढ़ने लगते हैं तब कुछ लोग नीचे की ओर खींचते हैं - जिन्हें पैरों तले दबाया है, वह कैसे आगे बढ़ने देंगे?

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'भगवान महाकाल का कुण्ठ नृत्य' निबंध से उधृत है।

प्रसंग: इस उद्धरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने आत्म-मूल्यांकन के रूप में हमारे समाज और संस्कृति की विकृतियों और विसंगतियों को कहकर पूरे समाज को आईना दिखाने का प्रयास किया है। हिंदू समाज में जाति और वर्ण के आधार पर जो कुत्सित षड्यंत्र हजारों वर्षों तक किए गए हैं, उन्हीं की ओर संकेत किया गया है।

व्याख्या: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भारतीय संस्कृति के प्रति अपनी एक विशिष्ट अवधारणा रखते हैं। उनके लिए भारतीय संस्कृति से तात्पर्य केवल सनातन संस्कृति से नहीं है बल्कि उनकी दृष्टि में हजारों वर्षों के इतिहास में विभिन्न संस्कृतियों के मेलजोल से

जिस एक समेकित प्रभाव वाली संस्कृति का विकास हुआ है, वह भारतीय संस्कृति है। और इस भारतीय संस्कृति पर उन्हें गर्व भी महसूस होता है। जिसे उनके निबंधों में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

परंतु हमारे सांस्कृतिक विकास में कई स्थल ऐसे हैं जिन्हें देखकर वे भी संकुचित हो जाते हैं। ऐसा ही एक स्थल है - जाति व्यवस्था और वर्ण व्यवस्था के कारण एक बड़ी आबादी के शोषण का शिकार होना। इस बिंदु पर उन्हें क्षरित हो रहे मानवीय तत्वों को लेकर शर्मिंदगी भी महसूस होती है। और इसे भी देश के विकास में अत्यंत बाधक मानते हैं। इसी संदर्भ में भारत की आजादी के बाद जब एकीकृत शक्ति निर्माण की आवश्यकता महसूस होती है तो उन्हें इन प्रवृत्तियों के कारण समाज विभाजित दिखाई देता है, जिसके प्रति उनके मन में आक्रोश है। इतिहास की इन भूलों को वे समाप्त करना चाहते हैं। आज का युग नए विचारों का युग है। प्राचीन और मध्यकालीन युग की बहुत सारी अवधारणाएं आधुनिक काल में एकदम बदल चुकी हैं। ऐसे में यह आवश्यक है कि अब इस तरह की सामाजिक बुराइयों को बदलने के लिए शक्ति संपन्न वर्ग को स्वयं आगे आना चाहिए और ऐसी परंपराओं को बदलकर समाज को एक नई मजबूती देने का प्रयास करना चाहिए।

विशेष:

१. भारतीय संस्कृति की विसंगतियों की ओर ध्यान आकर्षित किया है।

२. भारत की एकता के विकास में बाधक तत्वों का वर्णन किया है।

व्याख्या अंश (२):

आधुनिक युग का यह एक बड़ा भारी अभिशाप है कि गलत बातें बड़ी तेजी से फैल जाती हैं। समाचारों के शीघ्र आदान-प्रदान के साधन इस युग में बड़े प्रबल हैं और धैर्य और शांति से मनुष्य की भलाई के सोचने के साधन अभी बहुत दुर्बल हैं। सो, जहां हमें चुप होना चाहिए वहां चुप रह सकना खतरनाक हो गया है। हमारा सारा साहित्य नीति और सच्चाई का साहित्य है। भारतवर्ष की आत्मा कभी दंगा-फसाद और टंटे को पसंद नहीं करती परंतु इतनी तेजी से कूटनीति और मिथ्या का चक्र चलाया जा रहा है कि हम चुप नहीं बैठ सकते। अगर लाखों-करोड़ों को हत्या से बचना है तो हमें टंटे में पढ़ना ही होगा।

संदर्भ: यह उद्धरण आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह कल्पलता के 'भगवान महाकाल का कुण्ठ नृत्य' निबंध से उधृत है।

प्रसंग: आधुनिक काल में तकनीकी विकास ने जहां एक ओर मनुष्य के लिए वरदान का कार्य किया है, वहीं कुछ स्थानों पर इसके कारण मूल्यहीनता की स्थिति भी उत्पन्न हुई है। मीडिया के बढ़ते प्रभाव में सच और झूठ का फैसला करना धीरे-धीरे मुश्किल हो गया है। व्यर्थ प्रलाप का प्रकोप बहुत ज्यादा बढ़ गया है। यहां अब सच को साबित करने की स्थितियां उत्पन्न हो गई हैं। इन्हीं का संकेत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस अवतरण में किया है।

mnotes.in

व्याख्या: आधुनिक युग में जैसे-जैसे संचार के तकनीकी साधनों का विकास हुआ है, वैसे-वैसे इस समाज में कई तरह की समस्याएं भी सम्मिलित हुई है । मीडिया के विकास के कारण प्रचार-दुष्प्रचार का दौर बड़ी तेजी से विकसित हुआ है । प्रोपेगेंडावाद आज के मीडिया युग की ही देन है, जिसमें अवांछित ढंग से किसी विषय को गलत तरीके से उठाकर उस पर भी सहमति प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इससे कई बार झूठ जीतता है और सत्य की पराजय होती है ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस अवतरण में हमारा ध्यान इसी दिशा में आकर्षित किया है। इसी व्यथा को समझते हुए उन्होंने यह बताने का प्रयास किया है कि भले ही हम कितने भी मूल्यपरक हैं और हमारा समस्त साहित्य, नीति और सच्चाई का साहित्य है परंतु आज के समय में व्यर्थ प्रलाप की जो स्थितियां उत्पन्न होती हैं, उनसे बचने के लिए यह आवश्यक है कि इस मिथ्या चक्र का विरोध करने के लिए हम भी अपना पक्ष रखें। इन स्थितियों में चुप रहने का अर्थ स्वयं को अपराधी बना देना है ।

अंतरराष्ट्रीय जगत में जिस प्रकार एक देश दूसरे देश को लांछित कर उसकी प्रतिष्ठा को हानि पहुंचाता है, ऐसी स्थिति में सही और नैतिक पक्ष को सही होने के बावजूद भी अपना पक्ष रखना ही पड़ता है । आज के समय की इसी विसंगति की ओर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस स्थल पर संकेत किया है ।

विशेष:

१. तत्कालीन समय के मीडिया की स्थिति की ओर संकेत किया है ।

८.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. हमने एशिया और अफ्रीका के करोड़ों अधिवासियों में आशा और उत्साह का संचार किस प्रकार किया है ?

(क) क्रोध से (ख) आचरण से

(ग) लालच से (घ) माया से

२. अंग्रेजों में हजार दोष है। पर एक बड़ा भारी गुण भी है। वह क्या है ?

(क) ईमानदारी (ख) निष्ठा

(ग) करुणा (घ) लाज शर्म

३. चुटकी बजा के हजारों वर्ष की संस्कृति को क्या नहीं किया जा सकता ?

(क) भुलाया (ख) गिराया

(ग) उड़ाया (घ) उठाया

४. अपनी विशाल सांस्कृतिक महिमा के प्रभाव के कारण हम अन्याय करके क्या होते हैं ?

(क) लज्जित (ख) मूर्छित

(ग) क्रोधित (घ) पीड़ित

८.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य निबंध का सार।

२) भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य निबंध का प्रतिपाद्य।

३) भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य निबंध की भाषा।

८.१.७ बोध प्रश्न

१) भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य निबंध का आधुनिक संदर्भों में परिप्रेक्ष्य स्पष्ट कीजिए?

२) भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य निबंध का उद्देश्य अपने शब्दों में लिखिए ?

३) भगवान महाकाल का कुंठ नृत्य निबंध की विषयवस्तु का विस्तार से वर्णन कीजिए ?

८.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

९

निबन्ध : महात्मा के महाप्रयाण के बाद

इकाई की रूपरेखा

९.० इकाई का उद्देश्य

९.१ प्रस्तावना

९.२ निबन्ध : महात्मा के महाप्रयाण के बाद

  ९.२.१ 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबन्ध की अन्तर्वस्तु

  ९.२.२ 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबन्ध का प्रतिपाद्य

९.३ सारांश

९.४ उदाहरण-व्याख्या

९.५ वैकल्पिक प्रश्न

९.६ लघुत्तरीय प्रश्न

९.७ बोध प्रश्न

९.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

९.० इकाई का उद्देश्य

- पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' में संग्रहीत निबंध में से 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' का अध्ययन किया जाएगा।
- प्रस्तुत निबंध में विषयवस्तु के रूप में उन्होंने किस तरह के विचार व्यक्त किए हैं, इस विश्लेषण के साथ ही उनकी अभिव्यक्ति शैली और उनके विचारों की प्रासंगिकता पर भी चर्चा की जाएगी।
- 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध की अन्तर्वस्तु को छात्र जानेंगे।
- 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध के प्रतिपाद्य को छात्र समझ सकेंगे।

९.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी के ऐसे ललित निबंधकार हैं, जिनमें विषय-वैविध्यता और अभिव्यक्ति सामर्थ्य अपने अद्भुत रूप में मौजूद है। उनके निबंधों में इतिहास और संस्कृति जैसे विषय सर्वथा नवीन उदभावनाओं से युक्त मिलते हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य के प्रति नवीन आस्थावादी स्वर मिलता है। विचार ग्रहण करने और फिर उन्हें अभिव्यक्ति देने की दृष्टि से आचार्य द्विवेदी अत्यंत उदार प्रकृति के रहे हैं। किसी भी प्रकार की वैचारिक कुंठाएँ या दुराग्रह हमें उनके साहित्य में देखने को नहीं मिलते हैं। वे प्राचीन संस्कृत साहित्य और ज्योतिष के प्रकांड विद्वान थे, परंतु प्राचीनता के प्रति अत्यधिक मोह उनमें नहीं मिलता।

mynotes.in

उनका व्यक्तित्व आधुनिक चेतना से संपन्न व्यक्तित्व है । उन्होंने नए और पुराने के बीच जिस तर्कपूर्ण ढंग से सामंजस्य स्थापित किया है, वह उनके गहरे अध्ययन और शोध का परिणाम है। वे अपने विचारों में एकदम स्पष्ट हैं। कहीं कोई भ्रांति नहीं। भारतीय संस्कृति का जिस तरह से उन्होंने विश्लेषण किया है, या आधुनिक प्रवृत्तियों का जैसा विश्लेषण उनके निबंधों में मिलता है, वह उनकी निर्भ्रांत दृष्टि का ही परिणाम है । अति गंभीर विषयों का चयन करने के बाद भी उनके निबंध वैचारिकता के बोध से कभी जटिल नहीं हो पाते। विषयों के प्रति उनकी व्याख्या और विश्लेषण इतने सरल और सहज ढंग से होते हैं कि सामान्य से सामान्य पाठक भी उनके मंतव्य को आसानी से समझ सकता है । इस इकाई के अंतर्गत हम 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध का अध्ययन कर रहे हैं । उपरोक्त तथ्यों के आलोक में इन निबंध को भी देखने का प्रयास किया जाएगा।

९.२ निबन्ध : महात्मा के महाप्रयाण के बाद

९.२.१ 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध एक विशेष मन:स्थिति में लिखा गया निबंध है और इस निबंध के केंद्र में महात्मा गांधी हैं। महात्मा गांधी का भारतीय राजनीति और जनसमूह में अत्यंत प्रभाव रहा है । सन १९१५ के बाद भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का उन्होंने नेतृत्व किया था। सत्य, अहिंसा आदि जैसे नैतिक सिद्धांतों पर आधारित उनके विचारों का एवं व्यवहार के स्तर पर जनसमूह के बीच प्रचारित किए उनके नैतिक दर्शन का जबरदस्त प्रभाव भारतीय जनसमाज पर पड़ा। साथ ही उस समय की ब्रिटिश सरकार भी उनसे घबराती थी । महात्मा गांधी के विराट व्यक्तित्व का प्रभाव भारत की प्रत्येक भाषा के साहित्य पर देखने को मिलता है। उनकी विचारधारा तत्कालीन समय में आश्चर्य में डाल देने वाली विचारधारा थी, जिसका अपने समय-संदर्भों में प्रयोग एक असंभव सी घटना प्रतीत होती है, पर इसी असंभव को महात्मा गांधी ने संभव कर दिखाया था । देश की आजादी का अध्याय अंतिम समय में महात्मा गांधी के लिए बड़ा दुखद रहा। बहुत सारे ऐसे निर्णय लिए गए जिसमें संभवत उनकी सहमति नहीं थी, पर तात्कालिक कारणों से यह निर्णय लिए गए। जिससे गांधीजी बहुत आहत भी हुए। अंततः ३० जनवरी सन १९४८ को दिल्ली के बिरला हाउस में नाथूराम गोडसे के द्वारा उनकी हत्या कर दी गयी । महात्मा गांधी की हत्या के बाद किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति में भावपूर्ण ढंग से इस निबंध में इस विराट व्यक्तित्व को याद किया गया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उनके व्यक्तित्व के साथ-साथ उनकी वैचारिकता पर भी अपने भाव प्रकट किए हैं ।

सन १९१५ में पूरी तरह से भारत लौटने के बाद महात्मा गांधी ने अपना सारा जीवन भारतीय समाज को समर्पित कर दिया । जीवन-भर सेवा कर्म करते हुए उन्होंने बेहद सादा जीवन व्यतीत किया। तत्कालीन समय में ब्रिटिश सरकार का सूरज कभी डूबता नहीं था और वह सरकार एक धोती और लंगोटी में रहने वाले इस संत नेता से के नैतिक आदर्शों के कारण उनसे घबराती थी। ऐसे व्यक्ति की कोई ऐसे निर्ममता से हत्या कर देगा, यह कल्पना से परे बात लगती है । इस प्रथम अनुभूति को अभिव्यक्त करते हुए निबंधकार लिखता है कि "महात्मा जी को एक पढ़े-लिखे हिंदू युवक ने गोली मार दी - यह समाचार कुछ ऐसा विचित्र और अप्रत्याशित था कि शायद ही किसी ने सुनते ही विश्वास कर लिया हो । मुझे भी शुरू में

विश्वास नहीं हुआ, परंतु बहुत शीघ्र इसकी सच्चाई का प्रमाण मिल गया । महात्माजी को सचमुच ही किसी ने गोली मार दी थी, सचमुच ही वे सदा के लिए हमें छोड़ कर चले गए थे, सचमुच ही पशुता ने अमर पौधे को चर डाला था ।" महात्मा गांधी जैसे व्यक्तित्व के इस तरह चले जाने के बाद एक लेखक की जो मानसिकता है, उसकी अनुभूतियां हैं, उन सभी का वर्णन इस निबंध में मिलता है।

यह निबंध इस दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है कि राष्ट्रपिता कहे जाने वाले महात्मा गांधी का इस तरह से जाना हर किसी को किंकर्तव्यविमूढ़ कर रहा था । उसका वर्णन भी इस निबंध में विस्तार से मिलता है । उस समय का युग आज की तरह सूचनाओं के तेजी से प्रसारित होने का युग नहीं था । एकमात्र रेडियो और समाचार पत्र, जनसंचार के साधनों के रूप में हमारे पास मौजूद थे। इस तरह की घटनाएं घट जाने के बाद जो अफरा-तफरी की स्थिति बनती है, उसका वर्णन करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी लिखते हैं, "किसी को ठीक से पता नहीं था कि षड्यंत्र का क्या और कैसा रूप है, पर सब समझते थे कि है वह बहुत व्यापक। किसी ने इस दल को डांटा किसी ने उस दल को। शोक, क्रोध और घृणा एक के बाद एक आती रही और जाती रही । आज भी मन मुक्त नहीं हुआ है । महात्मा जी को खोकर हमने सचमुच क्या खो दिया है यह आज भी ठीक-ठीक समझ में नहीं आ रहा है। इतना भर निश्चित है कि हम अनाथ हो गए हैं। हम संसार की दृष्टि में गिर गए हैं और कहीं भी सहारा नहीं खोज पा रहे हैं ।" यह केवल लेखक के शब्द नहीं है बल्कि यह उस समय की समग्र मानसिकता है । और इस कथन से हम अंदाजा लगा सकते हैं कि महात्मा गांधी की हत्या के बाद लोग किस स्थिति में थे, क्या सोच रहे थे । जैसा कि लेखक कहता है, हम संसार की दृष्टि में गिर गए हैं और कहीं भी सहारा नहीं खोज पा रहे, सचमुच महात्मा गांधी का व्यक्तित्व ऐसा था कि पूरा विश्व उनका सम्मान करता था। यहां तक की शत्रु होने के बावजूद महात्मा गांधी के नैतिक आदर्शों के सामने ब्रिटिश सरकार भी नतमस्तक थी और ऐसे विश्वव्यापी समर्थित व्यक्ति को उसके अपने ही घर में हत्या का शिकार होना पड़ा । यह सचमुच बेहद शर्मिंदगी का विषय था, जो इन शब्दों में व्यक्त हुआ है।

महात्मा गांधी की इस देश में स्थिति कुछ ऐसी थी जैसे एक परिवार में पिता या मुखिया की होती है। परिवार का हर सदस्य उसकी छत्रछाया में अपने को सुरक्षित महसूस करता है। कुछ यही हाल देश का भी था । बिना किसी भाषाई और सांस्कृतिक आग्रह के पूरा देश एक स्वर में उन्हें राष्ट्रपिता के रूप में स्वीकार करता था। विभिन्न विचारधाराओं से जुड़े हुए अलग-अलग दल भी उनके महत्व और उनकी छत्रछाया के महत्व को समझते थे । इसीलिए वैचारिक विरोधाभासों के बावजूद जब महात्मा गांधी कोई बात अंतिम रूप से कहते थे तो किसी भी दल के लोग उसे अस्वीकार नहीं कर पाते थे । इस तरह महात्मा गांधी की स्थिति इस देश की राजनीति में एक पिता की तरह थी । इस संदर्भ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं, "शोक भी कैसा पावक-धर्म है । जिन लोगों के मुंह से हम कभी प्रेम और सत्य की बात सुनने की आशा नहीं कर रहे थे, वे भी द्विधाहीन कंठ से इनकी महिमा घोषित कर रहे हैं। जिन कूटनीति-विशारदों के मुख से कभी उच्छ्वास और आवेग का एक भी शब्द नहीं सुना गया, उन्होंने भी अपना मौन भंग किया है । किसी-किसी के गले में निश्चित रूप से आवेग, पिच्छल भाषा सुनी गई है । महात्मा ने जीकर जो आश्चर्य दिखाया था - मरकर उसके कई गुना आश्चर्य दिखाया । यह सब कैसे संभव हुआ ? क्या सचमुच आध्यात्मिक शक्ति की विजय हुई है ?" आम जनता किसी भी समस्या के लिए उनकी तरफ देखती थी कि इस

संदर्भ में बापू क्या कहते हैं और गांधी जी के दिशा-निर्देश देने पर जनता पूर्ण विश्वास के साथ उनका अनुसरण भी करती थी। यह विश्वास महात्मा गांधी ने अपनी जीवन भर की सेवा से अर्जित किया था। इसीलिए जब उनकी हत्या हुई तो लोग किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति में और हताश स्थिति में थे, उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे सचमुच उनके घर का मुखिया, उनका पिता अब नहीं रहा।

महात्मा गांधी की शख्सियत सचमुच अत्यंत विराट थी और वह देश की सीमाओं को लांघकर पूरी पृथ्वी को अपने दायरे में ले चुकी थी। महात्मा गांधी के आदर्श, त्याग और बलिदान की अपेक्षा रखते थे। पूरी दुनिया उनके विचारों का समर्थन करती थी परंतु यथार्थ यह था कि मुंह से समर्थन करने के बावजूद दुनिया अलग-अलग तरह के साम्राज्यवादी विचारों और शोषण के विभिन्न तरीकों से भरी पड़ी थी। लेखक को बड़ा आश्चर्य होता है कि जब उनकी स्वीकारोक्ति इतनी ज्यादा थी, उनके विचारों की स्वीकार्यता इतनी अधिक थी, तब क्यों नहीं लोग उन विचारों को अमल में लाते हैं। इसीलिए वे लिखते हैं, "तप और त्याग की महिमा यदि सबको मालूम है तो क्यों नहीं लोग उन्हें अपनाते ? यदि सचमुच ही लोग अहिंसा को बड़ी वस्तु मानते हैं तो क्या कारण है कि महात्माजी के प्रति शोक प्रकट करने के साथ ही साथ तलवार को सान पर चढ़ाते जा रहे हैं ? लोग यदि बराबरी और भाईचारे के लिए मर-मिटने वाले की प्रशंसा करते हैं, तो क्यों नहीं साम्राज्य और शोषण के मोह को छोड़ देते।" दरअसल लेखक की इस तरह की अभिव्यक्ति का कारण हमारे समाज का दोगलापन है। हमारे समाज के भीतर ही कितने सेठ और सामंत थे, जिन्होंने महात्मा गांधी के आंदोलनों के लिए भारी आर्थिक योगदान दिए परंतु उन्होंने अपना व्यवसाय और अपना मार्ग नहीं बदला। शोषणकारी व्यवस्था का अंग वे बने ही रहे। यह एक बड़ा विरोधाभास है, जो लेखक के साथ-साथ पाठकों को भी आश्चर्यचकित करता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी शोक के इस वातावरण में भी चिंतनमग्न हैं कि वे क्या कारण हैं, जो महात्मा गांधी के विचारों के अमल की राह में रोड़ा बनते हैं। उन्हें यह देखकर अति क्षुब्धता होती है कि समाज की कथनी और करनी में कितना बड़ा फर्क है। वे कहते हैं, "कूटनीतिज्ञ के मुंह से सत्य की प्रशंसा सुनकर मन में ग्लानि होती है, सेनापतियों के मुंह से अहिंसा की स्तुति सुनता हूं, तो क्रोध होता है; सेठों और सामंतों के मुंह से त्याग और तप की चर्चा सुनता हूं तो झुंझलाहट पैदा होती है; और साम्राज्यवादियों के मुंह से तो गांधी का नाम सुनकर ही घृणा हो आती है।" वास्तव में लेखक का दृष्टिकोण यह है कि जब इतनी व्यापक स्वीकारोक्ति है, तब यह सभी लोग महात्मा गांधी के विचारों को क्यों नहीं स्वीकार कर पाते। इस संबंध में लेखक का मत है कि त्याग, तपस्या और दया को स्वीकार करने के लिए जिस कठोर संयम और मानसिक अनुशासन की आवश्यकता होती है, वह दरअसल बहुत कम लोगों में होता है। स्वयं लेखक भी यह स्वीकार करता है कि महात्मा जी के गुणों को अपनाने में उसे किस तरह व्यवहारिक समस्याओं का सामना करना पड़ा और वह स्वयं भी इस पथ से विचलित हो गया। महात्मा जी के आदर्शों पर चलने के लिए जिस संयम अनुशासन और जिस चरित्र बल की आवश्यकता है, वह संभवत: न होने की वजह से यह कथनी और करनी का अंतर दिखाई देता है।

महात्मा गांधी एक आदर्श व्यक्तित्व थे और आदर्श का अनुसरण कर सकना सबके बस की बात नहीं होती। लेखक इस सत्य को समझते हैं इसीलिए वे महात्मा गांधी पर चिंतन के क्रम

में इन स्थितियों को भी रखने की चेष्टा करते हैं। महात्मा गांधी संयमी और जितेंद्रिय थे और उनके जैसा हो सकना सबके लिए संभव भी नहीं है। अपने निबंध के अंत में लेखक ऐसी व्यवहारिक स्थिति की तलाश पर भी जोर देते हैं । लेखक को ऐसा लगता है कि जो इंद्रियदमन है, मनोविकारों को रोकने का अभ्यास है, यह भी अभावात्मक वस्तु है। लेखक को लगता है कि इतने भर से कोई महात्माजी जैसा शक्तिपुंज नहीं बन सकता। इन साधनों के अतिरिक्त भी कोई भीतरी महान वस्तु है, जिसके होने से ही मनुष्य को जितेंद्रियता प्राप्त होती है। महात्मा गांधी के व्यक्तित्व के सामने लेखक अपने को सदा अक्षम ही पाता रहा। वे कहते भी हैं कि "जिस प्रकार मैं उनका अनुगमन करने में असफल रहा हूँ उसी प्रकार उनका विरोध करने में भी ! मैं नियमित रूप से चरखा नहीं चला सका, उसकी संपूर्ण उपयोगिता भी नहीं समझ सका। मैं सत्यवादी नहीं बन सका। प्राणी मात्र के प्रति मानसिक मैत्री का आदर्श पालन मैंने करने का प्रयत्न किया, लेकिन व्यवहार में कई बार विपरीत कर्म करना पड़ा।" परंतु इस सबके बावजूद लेखक को लगता है कि भले ही उनके जैसी शक्ति और सामर्थ्य हमारे जैसे आम लोगों में नहीं है, फिर भी हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि हम अपने सार्थक कर्मों के द्वारा खुद को इतिहास विधाता की योजना में अपने आप को खपा दें। महात्मा गांधी अब हमारे बीच नहीं रहे पर क्या ऐसा है जो उनकी अमर देन के रूप में हमारे साथ मौजूद है। भले ही उनका नश्वर शरीर नष्ट हो गया पर उनकी वाणी, उनके विचार, उनके उपदेश, उनका मार्गदर्शन - ये सब हमारे बीच सदा मौजूद रहेंगे और भविष्य की राह दिखाते रहेंगे।

लेखक की दृष्टि में महात्मा गांधी का एक और बड़ा कार्य है जो भविष्य में समझा जाएगा और वह यह है कि परमसत्य को समझने वाले बड़े विद्वान जीवन व्यापार से उस परमसत्य अर्थात वृत्ति का विरोधाभास मानते हैं । परंतु महात्मा गांधी ने इस धारणा को बदला । लेखक के अनुसार, "महात्मा जी ने केवल वाणी से नहीं, अपने संपूर्ण जीवन से यह दिखा दिया है कि मनुष्य के छोटे स्वार्थों का द्वंद्व बड़े सत्य का विरोधी नहीं है। इन छोटे स्वार्थों को व्याप्त करके, इनको अपना अंग बनाकर ही हृदय स्थित महासत्य विराज रहा है । इनके भीतर से वह सेतु तैयार किया जा सकता है जो मनुष्य को मनुष्य से विच्छिन्न होने से बचाए। छोटे स्वार्थ निश्चय ही मनुष्य को भिन्न-भिन्न दलों में टुकड़े-टुकड़े कर रहे हैं, परंतु यदि मनुष्य चाहे तो एक ऐसा महासेतु निर्माण कर सकता है, जिससे समस्त विच्छिन्नता का अंतराल भर जाए । महात्माजी ने उस महान सेतु के निर्माता सत्य को देखा था और धर्म, अर्थ और व्यवहार को एक करने में सफलता प्राप्त की थी ।" इस तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, महात्मा गांधी और उनके योगदान को याद करते हैं। सचमुच अध्यात्म और व्यवहार को अलग-अलग स्वीकार करने वाले और विरोधाभासी मानने वाले लोगों के लिए महात्मा गांधी का उदाहरण अत्यंत अद्भुत उदाहरण है, जिन्होंने अध्यात्म और व्यवहार के दायित्व को एक समीकरण के दायरे में रखने में सफलता प्राप्त की थी।

यह निबंध वास्तव में महात्मा गांधी की मृत्यु के बाद व्यथित परंतु संतुलित मन:स्थिति में उनके कार्यों और योगदानों को याद करने का प्रयास है। शरीर नश्वर है। इसका नष्ट होना तय है, परंतु व्यक्ति के विचार और कर्म उसे अमर बनाने में बड़ी भूमिका अदा करते हैं । महात्मा गांधी के व्यक्तित्व में अध्यात्म और व्यवहार का अत्यंत सुंदर समन्वय था और यह समन्वय उनके पूरे जीवन में दिखाई देता है। उन्हें साबरमती का संत यूं ही नहीं कहा जाता। सचमुच उन्होंने अपना अधिकांश जीवन एक संत के रूप में त्यागपूर्ण ढंग से व्यतीत किया।

उनकी अपनी जरूरतें बहुत कम थीं। उनके जीवन और विचारों में मानवीयता का उत्कृष्ट उदाहरण हमें मिलता है। सत्य, प्रेम और अहिंसा हजारों वर्षों से भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग रहे हैं, शास्त्र पढ़े और पढ़ाए जाते रहे हैं पर उन्होंने आधुनिक युग में जिस तरह व्यवहारिक ढंग से भौतिक जीवन में इन्हें सम्मिलित किया, वह अपने आप में अत्यंत दुर्लभ उदाहरण है। महात्मा गांधी ने किसी नए विचार को जन्म नहीं दिया बल्कि शास्त्रज्ञान की जो पूंजी है, उसमें से अपने समय के मुताबिक उन्होंने सिद्धांतों और आदर्शों का चयन किया और उन्हें व्यवहारिक जीवन में उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया। यह उनकी सबसे बड़ी देन थी। लेखक के अनुसार उनके समन्वयशील व्यक्तित्व ने ज्ञान का जिस नए तरीके से नियोजन प्रस्तुत किया, वह समाज का सदियों तक मार्गदर्शन करता रहेगा।

९.२.२ महात्मा के महाप्रयाण के बाद निबन्ध का प्रतिपाद्य:

'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की निर्मम हत्या के बाद एक विशिष्ट मनोदशा में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया निबंध है। इस निबंध में उन्होंने महात्मा गांधी के प्रति अपनी आस्थाएं एवं भावनाएं व्यक्त की हैं, साथ ही महात्मा गांधी के आदर्शों पर विचारपूर्ण ढंग से चिंतन किया है। और आज के समय में उनकी आवश्यकता को भी व्यक्त किया है। किसी की हत्या कर देने से उसके शरीर को तो नष्ट किया जा सकता है, पर उसके विचारों को नष्ट नहीं किया जा सकता। महात्मा गांधी अपने विचार और कर्म से अमरता से परिपूर्ण व्यक्तित्व हैं। वे समस्त भारतवासियों के हृदय में सदा के लिए विराजमान हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी महात्मा गांधी को एक ऐसे व्यक्तित्व के रूप में देखते हैं, जो असंभव समझी जाने वाली विशेषताओं से युक्त है। जिसका चरित्र-बल हिमालय से भी ऊंचा है। जिसने सत्य, अहिंसा जैसे आदर्शों को अपनाकर राष्ट्रीय आंदोलन के संदर्भ में अपना पूरा संघर्ष जीवंत किया है। और संपूर्ण विश्व के सामने एक आदर्श उदाहरण सामने रखा है। आज के युग में जबकि 'मुंह में राम बगल में छुरी' कहावत हर जगह चरितार्थ होती है, ऐसे निष्ठुर समय में महात्मा गांधी ने आदर्शों को अपने आचरण में ढालकर अपने व्यवहारिक जीवन में संभव किया है। अपने दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान ब्रिटिश सरकार के अमानवीय कृत्यों के विरुद्ध उन्होंने पहली बार आवाज उठाई थी। सत्य और अहिंसा के उनके सिद्धांतों का प्रथम प्रयोग दक्षिण अफ्रीका में ही उन्होंने किया था, जहां ब्रिटिश सरकार नि:शस्त्र और नि:शब्द रह गई तथा उसे अपना आचरण बदलना पड़ा। महात्मा गांधी के सिद्धांतों की यह पहली जीत थी।

भारत आने के बाद यहां भी कमोवेश स्थिति दक्षिण अफ्रीका जैसी ही थी। यहां भी भारत ब्रिटिश उपनिवेश था और अंग्रेजी सरकार मनमाने ढंग से भारतीयों पर शासन कर रही थी। उसका उद्देश्य केवल भारत की संपत्ति लूटना था जो कि वह लगातार कर रही थी। भारतीयों की जीवन दशा के सुधार की तरफ उसका कोई ध्यान नहीं था। भारतीय कीड़े-मकोड़ों की तरह जीवन जीने को विवश थे। किसानों-मजदूरों की दशा अत्यंत खराब थी। ऐसे में महात्मा गांधी ने यहां के आंदोलन की बागडोर संभाली और सन १९१५ के बाद धीरे-धीरे राजनीतिक नेतृत्व उनके हाथ में आ गया। उन्हीं के नेतृत्व में भारत आजादी प्राप्त कर सका।

आज के समय में वास्तविक स्थिति यह है कि सद्गुणों की प्रशंसा तो हर कोई करता है परंतु अपने जीवन में उन्हें अपनाने में सभी असफल रहते हैं। संसार के बड़े-बड़े नामवर लोग बातें तो बड़े-बड़े सिद्धांतों की करते हैं पर जब सही वक्त आता है, वे सिद्धांतों को छोड़कर स्वार्थों के साथ खड़े हो जाते हैं। अब की राजनीति कूटनीतिज्ञों की राजनीति है। तत्कालीन युग व्यापारिक युग था। सेठ और सामंत, बातें तो बड़ी त्यागपूर्ण ढंग से करते थे परंतु अंदर खाते उनके कर्म जगजाहिर थे। महात्मा गांधी एक सच्चे भक्त थे। मानवीयता उनमें कूट-कूट कर भरी थी। महात्मा गांधी के जाने के बाद सबसे सच्ची श्रद्धांजलि उनके लिए क्या होगी ? शायद महात्मा गांधी के आदर्शो को अपनाकर समाज जब आगे बढ़ेगा और महात्मा गांधी की परिकल्पना के अनुसार राम-राज्य की स्थापना होगी, तभी सच्चे अर्थों में उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित होगी। समाज में कथनी और करनी के अंतर को बांटना होगा। आत्मिक शुद्धता के साथ समाज के निम्न वर्ग को ऊपर उठाने का कार्य करना होगा। अपने भीतर आत्मबल पैदा करना होगा। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध में महात्मा गांधी के जाने के बाद उनकी इसी विरासत की ओर संकेत किया है और विश्लेषण के क्रम में इसे बनाए रखने पर जोर दिया है।

९.३ सारांश

इस इकाई के अंतर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' का अध्ययन किया गया। 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध महात्मा गांधी को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए, उनके आदर्शों का विवेचन और विश्लेषण करने से संबंधित है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अत्यंत व्यावहारिक दृष्टि से महात्मा गांधी के विचारों और सिद्धांतों का विश्लेषण किया है। गांधीवाद पर उनकी आस्थाएं, उनका मानवतावादी दृष्टिकोण, उनकी इतिहास चेतना और धर्म तथा संस्कृति के संबंध में उनका व्यवहारिक दृष्टिकोण - यह सभी इन निबंध में हमें देखने को मिलता है।

९.४ उदाहरण-व्याख्या

व्याख्या-अंश (१):

मैंने महात्मा जी के अनेक गुणों को अपने भीतर ले आने का संकल्प कई बार किया है। संकल्पों की सच्चाई के बारे में मुझे रत्तीभर भी संदेह नहीं है। पर बड़ी जल्दी मैं विचलित हो गया हूँ। मेरे जैसे और लोग भी दुनिया में होंगे। मैंने अनुभव किया है कि बड़ी बातों का जीवन में उतार लेना भी तप:साध्य है। केवल संकल्प मात्र से कुछ नहीं होता। कठोर संयम और मानसिक अनुशासन के बिना मनुष्य किसी भी सद्गुण को नहीं अपना सकता।

संदर्भ: प्रस्तुत अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' में संग्रहीत 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध से लिया गया है।

प्रसंग: इस अवतरण में महात्मा गांधी के जीवन जीने के तरीकों और आदर्शों पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने प्रकाश डाला है। महात्मा गांधी एक ऐसी शख्सियत हैं, जिनकी करनी और कथनी में कोई अंतर नहीं था। उन्होंने उच्च आदर्शों को अपनाते हुए अपना

जीवन व्यतीत किया और यही प्रेरणा पूरे समाज को भी दी। इन्हीं संदर्भों की चर्चा इस अवतरण में निबंधकार ने की है।

व्याख्या: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी महात्मा गांधी के व्यक्तित्व से खासे प्रभावित थे। महात्मा गांधी उस समय भारत की राजनीति के ऐसे आध्यात्मिक नेता थे, जिनसे भारत का हर व्यक्ति, हर बुद्धिजीवी प्रेरणा ग्रहण करता था। उनके बताए आदर्शो पर चलना चाहता था। इसी संबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी अनुभूतियों को पाठकों से साझा करते हुए यह व्यक्त कर रहे हैं कि महात्मा गांधी के विचारों और आदर्शों पर बात कर लेना आसान है, परंतु उनका अनुसरण करना अत्यंत कठिन है। उसके लिए व्यक्ति को कठोर संयम और मानसिक अनुशासन के नियमों को अपनाना होगा। एक स्थितप्रज्ञ की दशा को प्राप्त करना होगा। सकारात्मक कर्मों की अद्भुत प्रेरणा ग्रहण करनी होगी और यह सिर्फ संकल्प लेने भर से नहीं होगा बल्कि जीवन में इन बातों को उतारना भी होगा।

महात्मा गांधी ने अपने जीवन से संपूर्ण विश्व के लिए एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया। जिन्होंने सत्य, प्रेम और अहिंसा के आदर्शों पर आजीवन चलते हुए दिखाया। महात्मा गांधी कोई किसान या व्यापारी नहीं थे और न ही उनके सामने संघर्ष करने के लिए साधु - संत बैठे हुए थे। दुनिया की सबसे बड़ी साम्राज्यवादी सरकार - ब्रिटिश सरकार के विरोध में भी खड़े थे और जिस सरकार के लिए यह कहा जाता था कि उसके साम्राज्य का सूर्य कभी अस्त नहीं होता, इस पृथ्वी का एक बड़ा भूभाग उसके अधिकार में था, ऐसी शक्ति शक्तिशाली सरकार के सम्मुख निहत्थे और नि:शस्त्र होकर एक व्यक्ति अपने नैतिक बल के अनुसार दृढ़ होकर खड़ा था। संसार की वह सबसे शक्तिशाली सरकार भी उनके नैतिक बल के सम्मुख झुकने को विवश हो गयी। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस कौतुक से आश्चर्यचकित हैं और वे भी महात्मा गांधी के आदर्शों को प्राप्त कर उनका अनुसरण करना चाहते हैं पर यह भी भली-भांति समझते हैं कि बिना आत्मबल के, बिना मानसिक अनुशासन के इस लक्ष्य को हासिल करना कठिन ही नहीं, बल्कि असंभव है।

विशेष:

१. कठोर संयम और आत्मिक बल के सराहना की है।

२. महात्मा गांधी के आदर्शों का बखान किया है।

९.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. मनुष्यता आज भी किस वृत्ति से श्रेष्ठ मानी जाती है ?

(क) दैवीय (ख) बेसुरी

(ग) ईश्वरीय (घ) आसुरी

२. कूटनीतिज्ञ के मुंह से किसकी प्रशंसा सुनकर मन में ग्लानि होती है ?

(क) सत्य (ख) प्रेम

(ग) आस्तेय (घ) अहिंसा

३. सेनापतियों के मुंह से किसकी स्तुति सुनकर निबंधकार को क्रोध होता है ?

(क) युद्ध (ख) अशांति

(ग) अहिंसा (घ) संघर्ष

४. किसके मुंह से गांधी का नाम सुनकर निबंधकार को घृणा हो आती है ?

(क) साम्राज्यवादी (ख) उदारवादी

(ग) साम्यवादी (घ) लोकतंत्रवादी

९.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) लेखक महात्मा गांधी के किन गुणों को भीतर ले आने का संकल्प करता है ?

२) जितेंद्रियता और चरित्र बल पर टिप्पणी लिखिए ?

९.७ बोध प्रश्न

१) 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध की अंतर्वस्तु का विश्लेषण कीजिए ?

२) 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध में लेखक ने महात्मा गांधी के चरित्र की विशेषताओं को किस प्रकार रेखांकित किया है ?

३) 'महात्मा के महाप्रयाण के बाद' निबंध के प्रतिपाद्य को स्पष्ट कीजिए ?

९.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

९.१

निबंध : ठाकुरजी की बटोर

इकाई की रूपरेखा

९.१.० इकाई का उद्देश्य

९.१.१ प्रस्तावना

९.१.२ निबंध : ठाकुरजी की बटोर

९.१.२.१ 'ठाकुरजी की बटोर' निबन्ध की अन्तर्वस्तु

९.१.२.२ 'ठाकुरजी की बटोर' निबन्ध का प्रतिपाद्य

९.१.३ सारांश

९.१.४ उदाहरण-व्याख्या

९.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

९.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

९.१.७ बोध प्रश्न

९.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

९.१.० इकाई का उद्देश्य

- 'ठाकुरजी की बटोर' निबंध की अन्तर्वस्तु को छात्र जानेंगे।
- 'ठाकुरजी की बटोर' निबंध का प्रतिपाद्य क्या है, उसका छात्र अध्ययन करेंगे।

९.१.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी के ऐसे ललित निबंधकार हैं, जिनमें विषय-वैविध्यता और अभिव्यक्ति सामर्थ्य अपने अद्भुत रूप में मौजूद है। उनके निबंधों में इतिहास और संस्कृति जैसे विषय सर्वथा नवीन उदभावनाओं से युक्त मिलते हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य के प्रति नवीन आस्थावादी स्वर मिलता है। विचार ग्रहण करने और फिर उन्हें अभिव्यक्ति देने की दृष्टि से आचार्य द्विवेदी अत्यंत उदार प्रकृति के रहे हैं। किसी भी प्रकार की वैचारिक कुंठाएँ या दुराग्रह हमें उनके साहित्य में देखने को नहीं मिलते हैं। वे प्राचीन संस्कृत साहित्य और ज्योतिष के प्रकांड विद्वान थे, परंतु प्राचीनता के प्रति अत्यधिक मोह उनमें नहीं मिलता। उनका व्यक्तित्व आधुनिक चेतना से संपन्न व्यक्तित्व है। उन्होंने नए और पुराने के बीच जिस तर्कपूर्ण ढंग से सामंजस्य स्थापित किया है, वह उनके गहरे अध्ययन और शोध का परिणाम है। वे अपने विचारों में एकदम स्पष्ट हैं। कहीं कोई भ्रांति नहीं। भारतीय संस्कृति का जिस तरह से उन्होंने विश्लेषण किया है, या आधुनिक प्रवृत्तियों का जैसा विश्लेषण उनके निबंधों में मिलता है, वह उनकी निर्भ्रांत दृष्टि का ही परिणाम है। अति गंभीर विषयों का चयन करने के बाद भी उनके निबंध वैचारिकता के बोध से कभी जटिल नहीं हो पाते। विषयों के प्रति उनकी व्याख्या और विश्लेषण इतने सरल और सहज ढंग से होते हैं कि सामान्य से

munotes.in

सामान्य पाठक भी उनके मंतव्य को आसानी से समझ सकता है। इस इकाई के अंतर्गत हम 'ठाकुर जी की बटोर' निबंध का अध्ययन कर रहे हैं। उपरोक्त तथ्यों के आलोक में इस निबंध को भी देखने का प्रयास किया जाएगा।

९.१.२ निबन्ध : ठाकुरजी की बटोर

९.१.२.१ ठाकुरजी की बटोर निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध 'ठाकुरजी की बटोर' एक ऐसा निबंध है, जिसमें कई तरह की संवेदनाएं एक साथ मिली-जुली स्थिति में दिखाई देती हैं परन्तु केंद्र में साम्प्रदायिक सौहार्द है जिसकी उनके समय में बहुत आवश्यकता थी। इस निबंध में आचार्य द्विवेदी जी के इतिहास-प्रेम, धर्म के प्रति उनकी विशिष्ट समझ, संस्कृति के संबंध में उनके मौलिक विचार और नव-मानवतावाद के दर्शन होते हैं। इस निबंध में आचार्य द्विवेदी का भावविह्वल व्यक्तित्व निखर कर सामने आया है। धर्म और संस्कृति के प्रति उनका क्या दृष्टिकोण है या आज के समय में धर्म और संस्कृति की उपयोगिता और महत्व क्या है, यह इस निबंध से भलीभांति जाना और समझा जा सकता है।

निबंध का आरंभ एक निराश मन:स्थिति से होता है। सौ हिंदू घरों एवं पन्द्रह मुस्लिम घरों से मिलजुल कर बने एक गांव में ठाकुरजी के मंदिर की दुर्दशा का वर्णन करने से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी निबंध का आरंभ करते हैं। धर्म के प्रति एक उदासीनता के भाव को महसूस कर अचानक उनका मन उस विराट शक्ति के प्रति सोचने पर विवश हो जाता है और वे वैष्णव धर्म के ऐतिहासिक संदर्भों, विभिन्न कालखण्डों में उसके उत्थान-पतन की दशाओं और उसकी चिरंजीविता के विश्लेषण में तल्लीन हो जाते हैं। वे लिखते हैं, "सिंधु उपत्यका में किसी अर्धदेवत्व प्राप्त अनार्य वीर ने या उत्तरी प्रांतों के उपास्य किसी बाल देवता ने युग प्रतिष्ठित भागवत धर्म में परम देवता का स्थान प्राप्त किया। तब से सैकड़ों बर्बर अनार्य जातियां उसके पावन नाम से उसी प्रकार हद-दर्प होकर शांत जीवन बिताने लगी जिस प्रकार मंत्रौषधि के प्रयोग से उपगत-ज्वर महासर्प।" यह विचार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की इस मान्यता के बारे में संकेत देता है कि सनातन धर्म का विकास मानव की शांतिपूर्ण जीवन बिताने की इच्छा से उपजा है। ठाकुर जी अर्थात श्री कृष्ण उनके अनुसार सनातन धर्म के विकास के किसी चरण में अनार्य सभ्यताओं के बीच प्रसिद्ध बाल देवता का विकसित रूप है, जो भागवत धर्म में आकर भक्ति का अवलंब बनकर ठाकुरजी के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जब इतिहास की तरफ देखते हैं, उन्हें बड़ा आश्चर्य होता है कि पंजाब की ओर से आने वाली आक्रामक जातियां, जो हजारों वर्ष पहले से चली आ रही हैं। भयंकर लूट-पाट, मार-काट के बाद वे इसी धरा पर रहने के क्रम में कुछ दशकों में ही इसी धार्मिक संस्कृति को अपना ले रही हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को अपनी बौद्धिक कल्पना में ध्वंस और विकास दोनों दिख रहे हैं। पहले वह आक्रामक आक्रांताओं को ध्वंस करते देखते हैं और फिर आश्चर्यजनक रूप से उन्हें इसी चली आती सनातन संस्कृति का अंग बनते हुए भी देखते हैं। वे कहते हैं कि, "सारा उत्तरी भारत क्षण भर के लिए शमशान की तरह हो जाता है। फिर मैंने देखा, यही जातियाँ यहीं बस जाती हैं और पचास वर्ष बाद अपने

सिक्कों पर अपने को परम भागवत कहने में गर्व अनुभव करती हैं। इतना शीघ्र इतना विकट परिवर्तन। सचमुच उस देवता के सामर्थ्य का अंदाजा लगाना मुश्किल है, जिसने एक नहीं, दो नहीं बीसियों आर्येत्तर बर्बर जातियों को आचार-निष्ठ, शांत भक्त बना दिया।" यह मात्र कल्पना नहीं है। इस वक्तव्य से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की एक ऐतिहासिक धारणा भी स्पष्ट होती है कि जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं उसका दरअसल सनातन संस्कृति से संबंध तो है परंतु वह एक ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है और यह ऐतिहासिक प्रक्रिया सीधे तौर पर भारत में प्रविष्ट होने वाले बाहरी आक्रमणों से जुड़ी हुई है। बाहरी आक्रांता इस देश में विभिन्न उद्देश्यों से प्रविष्ट होते थे और उद्देश्य पूर्ति के बाद में यहीं रुक भी जाते थे। दशकों तक राजकाज करने के बाद वे इसी संस्कृति का एक हिस्सा बन जाते थे। उनकी संस्कृति भी पुरानी संस्कृति से घुलमिल कर एक नया रंग ले लेती थी और यह सब कुछ एक बार नहीं बल्कि कई-कई बार घटा। इस तरह भारतीय संस्कृति एक ऐतिहासिक प्रक्रिया का स्वाभाविक परिणाम है और इसी कारण एक समय अफगानिस्तान, ईरान आदि देशों की सीमाओं तक इसी सनातन-धर्मी देवता महाविष्णु का प्रचार और प्रसार था।

विश्लेषण को आगे बढ़ाते हुए इसी ऐतिहासिक क्रम में इस्लाम के उदय की भी चर्चा करते हैं। वे लिखते हैं, "पश्चिम में एक स्वतः संबुद्ध धर्म-भावना का अवतार हुआ जिसके हाथ में दृढ़-मुष्टि कठोर कृपाण थी, और दूसरे में समानता के आश्वासन का अमृत वरदान।..... इसी इस्लाम ने पश्चिम में इस महावीर्य देवता को उखाड़ फेंका। विजय गर्व से स्फीत-वक्ष इस्लाम निर्भीक भाव से आगे बढ़ता गया। जिसने उसे आत्मसमर्पण किया वही उसके रंग में रंग गया। अरब से लेकर गांधार तक एक ही विजय ध्वजा बार-बार प्रकम्पित होकर धरित्री का हृदय कम्पित करने लगी।" परंतु निबंधकार यह भी देखता है कि इस विजय यात्रा के बावजूद भी, उस संस्कृति के इस्लाम की दुष्टता के द्वारा नष्ट किए जाने के बाद भी; और उस महावीर्य देवता के पराजित हो जाने के बाद भी, आज भी करोड़ों हिंदू अनाडंबर भाव से गंभीर विश्वास के साथ ठाकुर जी को प्रणाम करके शांति पाते हैं। "कौन कहता है कि वह महावीर्य देवता तेजोहत हो गया है। इस्लाम उसको कुचल नहीं सकता। इस्लाम के आने के पहले विद्या और ज्ञान का महापीठ गांधार आज मुसलमान होकर बदल गया है। पाणिनि और यास्क की संतानें आज भारतवर्ष में हींग बेंचती फिरती है। इस्लाम का इससे भयंकर पराजय और क्या हो सकता है ?" इस तरह निबंधकार इस्लाम की आक्रामकता, क्रूरता और भयंकरता की अप्रत्यक्ष आलोचना करते हैं साथ ही भारतीय संस्कृति के अपने अस्तित्व को बचाने के सफल संघर्ष और जीवटता को भी याद करते हैं। यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो धार्मिक विकास का विश्लेषण करते - करते वे आज की समस्याओं पर भी कटाक्ष करते चलते हैं।

तत्कालीन भारतीय परिवेश में जिस तरह असमानता का वातावरण व्याप्त था, उसको लेकर भी उनके मन में कुछ आक्रोश था। इस्लाम के विवेचन क्रम में ही वे इसे स्पष्ट करते हैं। इस्लाम के द्वारा वे कहलवाते हैं, "मैं संस्कृति फैलाने नहीं आया, मैं कुछ तोड़ने आया हूं। हजारों को दास बनाकर, लाखों को दलित और अस्पृश्य बनाकर जिस संस्कृति का जन्म होता है वहां कुफ्र का प्राबल्य होता है। मैं उसे साफ करने आया हूं। इस असम व्यवस्था से मेरा समझौता नहीं हो सकता।" जब निबंधकार इस्लाम के द्वारा यह संबोधन देता है, तब दरअसल वह तत्कालीन परिवेश में स्वयं की सामाजिक व्यवस्था का मूल्यांकन कर रहा होता है। कहीं न कहीं इस्लाम के समानतावादी दृष्टिकोण से वह प्रभावित हैं। दरअसल बार-

बार इस महावीर्य देवता के तेजोहत होने का कारण क्या था, इस उद्धरण से समझा जा सकता है। वास्तव में हिंदू धर्म में एकता का अभाव एक ऐसा कारण था जिसके चलते बाहरी आक्रांता आसानी से इस देश को नष्ट करने का अवसर पा जाते थे। इतिहास में ऐसे एक नहीं कई उदाहरण मौजूद हैं। आंभीक के द्वारा सिकंदर को किया गया सहयोग, पृथ्वीराज की असफलता के लिए जिम्मेदार अन्य राजपूत शासक, राणा सांगा के द्वारा बाबर को आमंत्रण आदि इसी प्रकार की घटनाएं हैं, जिनसे भारतीय शासकों में पहला तो आपसी तालमेल नहीं था, दूसरा सामाजिक स्तर पर जाति - वर्ण जैसी संस्थाओं के कारण आम जनता में भी भयंकर विभाजन था। जाति और वर्ण के कारण जनसमाज कई हिस्सों में विभक्त था। स्वार्थीवृत्तियों के चलते उनमें आपस में विश्वास का वातावरण नहीं था, जिसके चलते वे बड़े लक्ष्यों की तरफ देख ही नहीं पाते थे। सामाजिक असमानता का दंश आज भी यह देश किसी न किसी रूप में झेल ही रहा है।

आज के समय में इस्लाम के जो भी उद्देश्य हैं, वह सभी के सामने स्पष्ट हैं। परंतु यह बात महत्वपूर्ण है कि आचार्य द्विवेदी ने उसकी व्याख्या बेहद प्रासंगिक रूप में की है। यह माना जाता है कि इस्लाम सभी धर्मों में बेहद आक्रामक धर्म है। परंतु आचार्य द्विवेदी इसके मूल में कुछ और देखते हैं। इस्लाम के द्वारा वे कहलवाते हैं, "मैं कभी नहीं कहता कि गुलाब और चमेली को एक कर दिया जाए। मैं कहता हूं गुलाब और चमेली हों - या आम और धतूरे, सबको एक ही समान खुला आसमान, एक ही समान खाद और पानी की सुविधा, एक ही समान यत्न और उपचार प्राप्त होने चाहिए।" अपने इन मंतव्यों के द्वारा दरअसल आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी तत्कालीन समाज के असमानतावादी माहौल पर कुठाराघात करते दिखाई देते हैं। निबंधकार की मौलिक कल्पना यही नहीं ठहरती संस्कृति के विकास क्रम में वे और आगे बढ़ते हैं। वैदिक युग की संस्कृति, उपनिषद कालीन संस्कृति, बौद्ध-धर्म कालीन संस्कृति और इस्लाम द्वारा आतंकित किए जाने के बाद के क्रम में वे भक्तिकालीन परिवेश की व्याख्या और विश्लेषण करते हैं। इस स्थल पर आकर वे उस गंगा - जमुनी तहजीब की संस्कृति की ओर संकेत करते हैं, जो आगे भारत की राष्ट्रीय एकता के लिए सेतु बनी। वैदिक युग का वह देवता अभी भी अपने अस्तित्व के साथ उपस्थित था इस्लाम ने उसे हत-दर्प किया, परंतु मिटा नहीं सका। इस्लाम के आक्रमण से कमजोर हुए इस देवता को पुनःशक्ति भक्ति-आंदोलन से मिली। जिसका उल्लेख वे इन शब्दों में करते हैं, "इसी समय दक्षिणी आसमान से कई तेजपुंज ज्वलंत ज्योतियां उत्तर की ओर बड़े वेग से दौड़ती हुई नजर आयीं। दिशाएं तिमिराच्छन्न थीं, आसमान धूल से भरा हुआ था, धरित्री रक्त से तर थी। दक्षिण आकाश से आई हुई इन ज्योतियों ने कोई बाधा नहीं मानी, किसी की परवाह न की। वे बढ़ती ही गयीं। अचानक प्रकाश की किरण में स्पष्ट मालूम हुआ, इस कुचली हुई संस्कृति-लता को एक सहारा मिला है। यह सहारा था वैष्णव धर्म - भक्ति मतवाद।"

दरअसल भक्ति आंदोलन भारत में उपजा एक ऐसा आंदोलन था, जिसने एक नई तरह की समन्वयवादी धार्मिक संस्कृति का विकास किया। इस आंदोलन में कई तरह के मत और मतान्तर चल रहे थे। हिंदी में संतकाव्य, सूफीकाव्य, रामकाव्य, कृष्णकाव्य आदि एक समान गति से विकास की ओर उन्मुख थे और इसी भक्ति के भावमयी वातावरण में हिंदू धर्म और इस्लाम धर्म निकट भी आ रहे थे। उनके बीच सेतु स्थापित करने का काम कबीर जैसे संत कवियों और कई सूफी संतों के द्वारा किया गया। भक्ति के हृदयद्रावक प्रभाव से धार्मिक कट्टरता शिथिल भी हो रही थी। पुरोहितवाद और कठमुल्लावाद इसके आड़े आ रहे थे।

हरिदास जैसे संत जो मुस्लिम परिवार में पैदा हुए थे, वह हरि नाम का कीर्तन गाते थे। मध्यकाल के कट्टरपंथी युग में मीरा जैसी विद्रोहिणी कृष्ण-गान करती रास्तों-रास्तों भटक रही थी। वैदिक काल में उपजे उस बाल देवता की छवि अब भी ज्योतिर्मान थी। निबंधकार के सामने यह दुविधा बार-बार उपस्थित होती है कि इतने बड़े-बड़े संकट इस देवता का कुछ नहीं बिगाड़ सके। इतनी महिमाशालिनी जिसकी दीप्ति है, वह ठाकुर जी का मंदिर आज इतना उपेक्षित क्यों है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भक्ति मतवाद से बेहद प्रेरित और प्रभावित हैं। इसे वे स्पष्ट करते हुए कहते हैं, "ब्राह्मण संस्कृति नहीं थी, श्रमण संस्कृति नहीं थी, राजन्य संस्कृति नहीं थी, शास्त्रीय संस्कृति भी नहीं थी। वह संपूर्ण हिंदू जाति की एककेंद्रा संस्कृति थी - अपने आप में परिपूर्ण, तेजोमयी, जीवंत।"

दरअसल ठाकुर जी का मंदिर उपेक्षित इसलिए है, क्योंकि वहां भक्ति नहीं आपसी स्वार्थ का झगड़ा है। वहां बैठे एक पंडित जी का विरोध इस बात से है कि ठाकुर जी के मंदिर का पूजन एक अब्राह्मण के द्वारा किया जाता है और पंडित जी आश्चर्यजनक विश्लेषण सामने रखते हैं कि 'ठाकुर जी की पूजा अब तक शास्त्र-निषिद्ध विधि से होती रही है। जो साधु इस समय पूजा कर रहे हैं, वह ब्राह्मण नहीं हैं और शास्त्र के मत से ठाकुर उसी जाति के होकर पूजा ग्रहण करते हैं जिस जाति में पुजारी का जन्म हुआ रहता है। इसके पूर्ववर्ती पुजारी भी अब्राह्मण थे। पिछले तीन वर्षों से ठाकुर जी अब्राह्मण होकर ही पूजा ग्रहण कर रहे हैं। इसलिए यह अत्यंत स्पष्ट बात है कि ब्राह्मण ऐसे ठाकुर जी को पूज्य नहीं समझ सकता। ब्राह्मण धर्म का यथोचित पालन कठिन व्रत है।' इस मूर्खतापूर्ण विश्लेषण पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को अपनी भक्तिकाल की व्यापक और समृद्ध परंपरा दिखाई देती है, जिसमें कोई जाति केंद्र में नहीं थी बल्कि वह पूरी हिंदू जाति का आंदोलन था। इसके लिए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भक्ति काल के कई ऐसे उदाहरण सामने रखते हैं जो ब्राह्मण न होने के बावजूद बड़े संत थे। स्वामी हरिदास, रामानुज के शिष्य परंपरा में कई संत, वल्लभाचार्य के शूद्र शिष्य कृष्णदास अधिकारी आदि। निबंधकार को आश्चर्य होता है कि जब इतने ख्यातिलब्ध संत शूद्र शिष्यों को संत का दर्जा दिला सकते थे और देवता को कोई आपत्ति नहीं थी, तो धर्म के इन ठेकेदारों को क्या अधिकार है अपनी परंपरा से द्रोह करने का। किसी भी तरह के जातिगत आग्रह से निबंधकार का वैचारिक मतभेद है। सही मायने में ईश्वरीय भावना क्या है इसे व्यक्त करते हुए आचार्य जी लिखते हैं "जो ठाकुर जाति विशेष की पूजा ग्रहण करके ही पवित्र रह सकते हैं, जो दूसरी जाति की पूजा ग्रहण करके अग्राह्य-चरणोदक हो जाते हैं, वे मेरी पूजा नहीं ग्रहण कर सकते। मेरे भगवान हीन और पतितों के भगवान हैं; जाति और वर्ण से परे के भगवान हैं, धर्म और संप्रदाय के ऊपर के भगवान हैं। वे सबकी पूजा ग्रहण कर सकते हैं और पूजा ग्रहण करके अब्राह्मण-चांडाल सबको पूज्य बना सकते हैं।" यह निबंधकार के द्वारा की गई सार्थक उपासना पद्धति है, जो समाज की आवश्यकता भी है।

देश के सांस्कृतिक इतिहास में भक्ति आंदोलन के दौरान ऐसा पहली बार हुआ, जब भारत के सांस्कृतिक एकीकरण का इतना व्यापक प्रयास आम जनजीवन के स्तर पर हुआ। दक्षिण के संत कवियों की प्रेरणा से शुरू हुई लौ उत्तर भारत में जब आई तो जाति एवं वर्ण व्यवस्था की विसंगतियों से आक्रांत समाज को बदलाव की प्रेरणा मिली। इस दौरान हुए प्रयासों के कारण सचमुच वातावरण एक संक्रमण के बाद बदलने लगा परंतु इसके बाद हमारे देश में यूरोपीय जातियों का आगमन हुआ। जो व्यापार के उद्देश्य से भारत आयीं थीं। थोड़ा समय

व्यतीत करने के बाद उनको समझ में आ गया कि इस देश की सामाजिक व्यवस्था में कई दरारें हैं जिनका वह अपने हित में प्रयोग कर सकते हैं। और यही करते हुए वे व्यापारी से कब इस देश के शासक बन बैठे, पता ही नहीं चला। हिंदू और मुस्लिम सांस्कृतिक-एकीकरण के जो प्रयास भक्तिकाल में हुए थे, उनकी कूटनीति के कारण छिन्न-भिन्न हो गए। इन दोनों ही जातियों ने यूरोपीय जातियों के षड्यंत्र को नहीं समझा और उनके हाथों का खिलौना बन गए। इस स्थिति को लक्षित करते हुए वे लिखते हैं, "हाय हिंदू और हाय मुसलमान ! आठ सौ वर्षों के निरंतर संघर्ष के बाद, एक दूसरे के इतने नजदीक रहकर भी, तुमने अपनी एक संस्कृति न बनायी।..... वर्जन पारायण हिंदू-भाव सबको धो-पोंछ डालना चाहता है, अभिमानी मुसलमान-भाव कुछ भी ग्रहण करना नहीं चाहता।" यही वह सत्य है जिसे हिंदू-मुस्लिम संदर्भों में आचार्य द्विवेदी बताना चाहते हैं। दरअसल तत्कालीन समय की यह एक महत्वपूर्ण आवश्यकता थी कि दोनों संप्रदायों में सौहार्द की भावना को बढ़ावा दिया जाए। अंग्रेजों द्वारा डाली गई फूट के कारण इस देश में आजादी और उसके बाद भी क्रूर और वीभत्स दंगों का दौर देखा था। हजारों-लाखों लोग ऐसे दंगों की भेंट चढ़े हैं। सचमुच यह बड़ा आश्चर्यजनक है कि एक नजरिया विकसित करने की जो आवश्यकता थी, वह पिछले सात-आठ सौ वर्षों में कभी विकसित करने की कोशिश नहीं की गयी। भक्तिकाल के दौरान जरूर यह प्रयास हुआ परंतु यह ज्यादा समय तक चला नहीं और नदी के एक किनारे हिंदू चलते रहे और दूसरे किनारे मुस्लिम। कभी कोई सेतु निर्मित करने की कोशिश नहीं की गयी और इसके लिए सबसे ज्यादा यदि कोई जिम्मेदार है, तो वह पुरोहितवाद और कठमुल्लावाद है। अपने हितों के लिए इस वर्ग ने कभी आम जनमानस की चेतना को बदलने का प्रयास नहीं किया।

कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी एक रास्ता देने का काम साहित्यकार करता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध जीवन के प्रति एक नई उम्मीद जगाने का काम करते हैं, समस्याओं के प्रति एक नया नजरिया देने का काम करते हैं। उनके निबंधों में उपसंहार एक आशा के रूप में ही होता है। इस निबंध में भी वे इसी आशामूलक स्वर के साथ समापन करते हैं। वे कहते हैं, " वे हिंदू धर्म के उत्कर्ष से भीत हैं। दूसरी तरफ हिंदू धर्म जरूरत से ज्यादा आत्मविश्वासी हो गया है। मुसलमान अपनी बची-खुची सारी शक्ति समेटकर मुसलमानियत का प्रदर्शन कर रहे हैं। यह अवस्था बहुत दिनों तक नहीं चलने की। वह आगंतुक उत्साह भी समाप्त हो जाएगा और यह अत्यधिक आत्मबोध-मूलक शैथिल्य तो समाप्त हो ही चला है। जब दोनों समाप्त हो जाएंगे तभी रास्ता सूझेगा। तभी शांति आएगी।" और इस तरह, एक उम्मीद के साथ वह निबंध का समापन करते हैं। वस्तुतः सांप्रदायिकता की समस्या आज भी हमारे समाज की एक प्रमुख समस्या बनी हुई है। किसी साहित्यकार का साहित्य कितना जीवंत और टिकाऊ है, यह उसकी विषयवस्तु और उसके मूल्यांकन से पता चलता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध में जिस तरह से भारतीय संस्कृति का मूल्यांकन किया है, वह उनकी दूरदर्शिता का परिचायक है।

९.१.२.२ ठाकुरजी की बटोर निबन्ध का प्रतिपाद्य

'ठाकुरजी की बटोर' निबंध, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की अद्भुत कल्पना शक्ति को प्रस्तुत करने वाला श्रेष्ठ निबंध है। इस निबंध में एक साथ हमें आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कई विशेषताएं देखने को मिलती हैं। संवेदनात्मक रूप से मानवता के प्रति उनकी गहरी

निष्ठा इस निबंध में हमें दिखाई देती है, उनकी विशिष्ट इतिहास दृष्टि - जिसका अधिकतर निबंधों में हमें परिचय मिलता है - इस निबंध में विशेष रुप से देखने को मिलती है। इसके साथ ही उन्होंने सामयिक संदर्भों को भी इस निबंध में स्थान दिया है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के मन में एक ऐसे भारतीय समाज की संकल्पना है जिसमें सभी धर्मों और संस्कृतियों के लोग एक साथ समरस भाव से निवास करते हैं। यह उस बगीचे के समान है, जहां अलग-अलग रंग और सुगंध के फूल एक साथ खिलते और मुरझाते हैं। इस निबंध में उन्होंने भारत में प्राचीन काल में धर्म के विकास और क्रमश: उसमें घटते-बढ़ते मानवीय तत्वों और आस्थाओं का विश्लेषण किया है।

'ठाकुरजी की बटोर' निबंध इस समस्या से आरंभ होता है कि एक जीर्ण - शीर्ण मंदिर में स्थापित ठाकुर जी की प्रतिमा उपेक्षित है। लोग मंदिर में न तो एकत्रित होते हैं और न ही साज-संभाल का कोई प्रयास करते हैं। जबकि जिस गांव में यह मंदिर है, वह लगभग सौ हिंदू घरों से समृद्ध है। वहीं दूसरी तरफ, सिर्फ पंद्रह मुसलमानों के घर होते हुए भी उस गांव की मस्जिद अत्यंत अच्छी स्थिति में है। यह तो एक बहाना है, अपनी बात शुरू करने का और इस बहाने से उन्होंने भारत की पूरी धार्मिक परंपरा का मूल्यांकन कर दिया है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जाति और वर्णों का आग्रह किस कदर है, यह किसी से छुपा नहीं है। मंदिरों में पुरोहित के रूप में उपस्थिति का अधिकार ब्राह्मणों का माना जाता है। अन्य किसी जाति के संत के लिए यह निषिद्ध माना जाता है। आम लोगों की इस धारणा में कितना बल है, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी धार्मिक परंपरा का मूल्यांकन करते हुए इस तथ्य को भी तराजू में तोलते हैं।

वैष्णव धर्म अत्यंत प्राचीन धर्म है और इसकी सत्ता वर्तमान भारत की सीमाओं के बाहर भी थी। निबंध के अनुसार हिंदू धर्म ईरान की सीमाओं तक, मध्य एशिया के क्षेत्र को अपने में सम्मिलित किए था। जिसके बाद इस्लाम का उदय हुआ और इस्लाम की विजयों के फलस्वरुप हिंदू धर्म की उत्तरी-पश्चिमी सीमा पंजाब तक सीमित हो गयी। अंततः इस्लाम भारत आया अपने समानतावादी आदर्शों के कारण यह प्रचलित भी हुआ। इस्लाम के आगमन के बाद भारत में सूफी और संत परंपरा का समय आरंभ हुआ। संत परंपरा दक्षिण के भक्ति मतवाद की देन थी। भक्ति मत ने धर्म में जातिगत दुराग्रहों को उपेक्षित किया और कई निम्न वर्ण के संत अपनी साधना के बल पर प्रसिद्ध हुए। संत काव्य परंपरा, राम काव्य परंपरा एवं कृष्णकाव्य परंपरा में ऐसे कई कवियों का नाम और वर्णन आता है जो निम्नवर्ण या अन्य धर्मों के थे। जैसे संत हरिदास, कृष्णदास आदि। भक्ति के प्रभाव में जातिगत आग्रह समाज में कम हुए परंतु अंग्रेजों के आगमन के बाद समाज में विभाजन का नया दौर शुरू हुआ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस पूरी परंपरा का मूल्यांकन करते हुए इस तथ्य पर आते हैं कि भारतीय समाज की जितनी हानि जातिगत दुराग्रहों के कारण हुई है, संभवत: उतनी अन्य किसी कारण से नहीं। इसीलिए वे इस निबंध में पूर्ण मानवीय दृष्टिकोण से विचार करते हुए उन्होंने ऐसे देवता को ही निषिद्ध कर दिया जो केवल जाति विशेष की पूजा ग्रहण करके ही प्रसन्न होते हैं। दरअसल वे यह बताना चाहते हैं कि ईश्वर मानवीयता से ओतप्रोत है, वहां जाति और वर्ण का नहीं बल्कि कर्मों का महत्व है। प्राचीन भारतीय वर्ण व्यवस्था का आधार भी जन्म नहीं बल्कि कर्म ही था। किसी को जन्म से मिली जाति के आधार पर उपेक्षित

करना मानवीय मूल्यों के विरुद्ध है। इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने मानवीय दृष्टिकोण का परिचय देते हुए जातिगत एवं धार्मिक दुराग्रहों की तीखी आलोचना की है और इस संदर्भ में हमें सर्वथा सकारात्मक दृष्टिकोण देने का काम किया है।

९.१.३ सारांश

इस इकाई के अंतर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'ठाकुरजी की बटोर' का अध्ययन किया गया। निबंध 'ठाकुरजी की बटोर' धर्म की संकीर्ण मनोवृत्ति पर कुठाराघात करने वाला निबंध है । इन निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की कई संवेदनात्मक विशेषताएं देखने को मिलती है।

९.१.४ उदाहरण-व्याख्या

व्याख्या-अंश (१):

रामानुज के दादा गुरुओं की परंपरा के सभी अलवार भक्त अब्राह्मण ही नहीं थे, शूद्र से भी निम्न कुल में अवतरित हुए थे। महाप्रभु वल्लभाचार्य ने अपने शूद्र शिष्य कृष्णदास अधिकारी (अष्टछाप के एक कवि) को श्रीनाथजी के मंदिर का प्रधान अधिकारी बनाया था। महाप्रभु के गोलोकवास के अनंतर एक बार उन्होंने महाप्रभु के एकमात्र गुरु श्री गोकुलनाथ गोसाई को भी मंदिर में जाना निषिद्ध कर दिया था। पंडितजी अब्राह्मणीभूत ठाकुर का चरणोंदक तक लेने में हिचकते हैं। गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय के प्राण-प्रतिष्ठाता महाप्रभु चैतन्य देव ने मुसलमान भक्त हरिदास का चरणोंदक हठ के साथ छककर पिया था।

संदर्भ: उक्त अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह कल्पलता में संग्रहीत निबंध 'ठाकुर जी की बटोर' से लिया गया है।

प्रसंग: इस अवतरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने धर्म में जातिगत दुराग्रहों की निरर्थकता को व्यक्त किया है। उन्होंने ऐतिहासिक विश्लेषण के द्वारा इस तथ्य को स्थापित किया है कि जातिगत दुराग्रह स्थापित करने का श्रेय हमारे समाज के कुत्सित मानसिकता के कुछ लोगों को है, जिन्होंने पूरी समृद्ध परंपरा को दूषित करने का कार्य किया है। उन्होंने प्राचीन काल के कुछ उदाहरणों के द्वारा अपनी बात को समझाया है।

व्याख्या: भक्ति आंदोलन को उसके शुरुआती दौर में उभारने और गति देने में रामानुज और वल्लभाचार्य जैसे संतों का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान था। भक्ति आंदोलन केवल एक धार्मिक आंदोलन ही नहीं था बल्कि उसकी भूमिका उससे कहीं ज्यादा, सामाजिक आंदोलन के रूप में थी। तत्कालीन समय में समाज में फैली हुई रूढ़ियां, जातिगत दुराग्रह और धार्मिक आडंबरों ने जनसमाज का जीवन त्रस्त कर दिया था। एक वर्ग धर्म की आड़ में अन्य वर्गो को शोषण का शिकार बनाने का उद्यम तो करता ही था, साथ ही धार्मिक विधि-विधानों में निम्न वर्ग की कोई भूमिका नहीं थी। इसके कारण भारतीय समाज विशेष रूप में उत्तर भारतीय समाज विभाजित समाज था। इन संतो ने समाज की इन समस्याओं को समझा और बदलाव लाने की क्रांतिकारी प्रक्रिया शुरू की। इनका प्रभाव इतना व्यापक था कि इन्होंने जो किया, समाज के निम्न वर्ग ने उसे हिम्मत के साथ अपनाया।

ऐसा नहीं है कि इस क्रांतिकारी प्रक्रिया के दौरान संतो को विद्रोह और विरोध का सामना नहीं करना पड़ा। उन्हें परंपरागत पुरोहित वर्ग से खासी अवमानना सहनी पड़ी। परंतु इस सब के बावजूद भी वे अपने अभियान में लगे रहे और इसी का परिणाम था कि कबीर, रहीम, धन्ना, पीपा जैसे निम्नवर्गीय समाज से संत कवियों का आगमन हुआ। कृष्ण भक्ति धारा में भी वल्लभाचार्य जी ने भक्ति के मार्ग से जातिगत दुराग्रहों को बहिष्कृत कर दिया और रामानुज की परंपरा में स्वामी रामानंद के समान सबके लिए भक्ति के द्वार खोल दिए। भक्ति का संबंध आचरण नहीं बल्कि हृदय से था। जो हृदय में ईश्वर को धार सकता था, वह भक्ति प्राप्ति का अधिकारी था। इसीलिए भक्ति कालीन हिंदी कवियों की परंपरा में हमें गैर ब्राह्मण कवियों की भी एक लंबी श्रृंखला देखने को मिलती है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भक्ति काल का अत्यंत व्यापक अध्ययन किया था और उसकी दूरदर्शिता को लक्षित किया था। भक्ति कालीन परंपरा का उनके ऊपर भी अत्यंत प्रभाव था। उनके मानवतावादी संबंधी विचार कहीं न कहीं भक्ति काल से भी प्रेरणा पाते रहे हैं।

विशेष:

१. धर्म के वास्तविक स्वरूप को व्यक्त किया है।

२. जातिगत दुराग्रहों का निषेध किया है।

३. प्राचीन उदार धार्मिक परंपरा का उल्लेख किया है।

व्याख्या-अंश (२):

मैंने उत्तेजित भाव से कहा - 'जो ठाकुर जाति विशेष की पूजा ग्रहण करके ही पवित्र रह सकते हैं, जो दूसरी जाति की पूजा ग्रहण करके अग्राह्य-चरणोदक हो जाते हैं, वे मेरी पूजा नहीं ग्रहण कर सकते। मेरे भगवान हीन और पतितों के भगवान हैं; जाति और वर्ण से परे के भगवान हैं, धर्म और संप्रदाय के ऊपर के भगवान हैं। वे सबकी पूजा ग्रहण कर सकते हैं और पूजा ग्रहण करके अब्राह्मण-चांडाल सबको पूज्य बना सकते हैं।

संदर्भ: उक्त अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह कल्पलता में संग्रहीत निबंध 'ठाकुर जी की बटोर' से लिया गया है।

प्रसंग: इस अवतरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने धर्म की वास्तविक भावना को अभिव्यक्त किया है। धर्म हिंदू धर्म के भीतर जाति के अस्तित्व के कारण एक बड़ी आबादी हमेशा उपेक्षित समझी गयी। उनके साथ अत्यंत अमानवीय व्यवहार किया गया। वर्ग विशेष की ऐसी धृष्टता के कारण निम्न वर्ग के लोगों का जीवन अत्यंत अपमानजनक और उपेक्षित था। निबंधकार ने इस अवतरण में धर्म की वास्तविक भावना को अभिव्यक्ति दी है, साथ ही धर्म और मानवता के आपसी संबंध को भी स्पष्ट किया है।

व्याख्या: इस प्रकरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के धर्म और ईश्वर के संदर्भ में विचारों का स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है। 'ठाकुर जी की बटोर' निबंध धार्मिक संकीर्णता के संदर्भ में लिखा गया निबंध है। अपनी प्रवृत्ति के अनुरूप आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ऐतिहासिक संदर्भ में भारत की धार्मिक परंपरा और संस्कृति का विश्लेषण किया है। उन्होंने धर्म में व्याप्त

mynotes.in

उन कारणों की खोजबीन की है जो सामाजिक एकता में बाधक बनते हैं। हिंदू धर्म में जाति और वर्ण के कारण समाज की स्थिति अत्यंत विद्रूप और असंगत थी और इसके चलते भारत को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। एकता के अभाव में हमारा देश कई बार बाहरी आक्रांताओं का शिकार हुआ। इस धार्मिक विद्रूपता को पैदा करने में पुरोहितों और मौलवी वर्ग का बड़ा हाथ रहा है। तथाकथित उच्च जाति के लोग निम्न वर्ग के लोगों को प्राचीन काल में मंदिरों में भी पूजा-अर्चना के लिए जाने की अनुमति नहीं देते थे, फिर किसी मंदिर में पुजारी बनने की बात तो कोई सोच भी नहीं सकता। इस निबंध में प्रसंग: ठाकुर जी के मंदिर की स्थिति केवल इसलिए बहुत बुरी दशा को प्राप्त है कि उसका पुजारी एक अब्राह्मण व्यक्ति है। इसके चलते गांव के सभी लोगों ने उस मंदिर का बहिष्कार कर रखा है। मंदिर की ऐसी दशा देखकर निबंधकार का मन व्यथित है और इसी संदर्भ में वे ऐसे लोगों की भर्त्सना करते हुए यह बात लिखते हैं।

धर्म के संबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का दृष्टिकोण पूर्ण मानवीय है। उनके प्रिय कवि कबीर हैं, जो स्वयं निम्न जाति के थे और जिन्होंने धार्मिक दुराग्रहों के विरुद्ध मध्यकाल में सबसे बड़ा विद्रोह किया था। धर्म की मूल भावना लोक-कल्याण है, ऊंच-नीच आदि असमानताएं मनुष्य ने पैदा की हैं। ऐसे लोग जो धर्म की आड़ में अपने स्वार्थ की पूर्ति करते हैं, वे कभी भी समाज को एक समान स्तर पर रखने को तैयार नहीं होते हैं। ऐसे लोगों की आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भयंकर आलोचना की है उनके अनुसार मेरा ईश्वर सबकी पूजा ग्रहण करने वाला ईश्वर है और यदि ईश्वर भी जाति विशेष की पूजा से ही प्रसन्न होते हैं तो मैं उन्हें ईश्वर मानने को तैयार नहीं हूं। वास्तव में, उनके अनुसार मेरे भगवान दीन दुखियों के भगवान हैं, उनकी नजर में सभी मनुष्य समान हैं। वे सभी की पूजा ग्रहण करके सभी को एक समान दृष्टि से देखते हैं। ऊंच-नीच के झगड़े स्वार्थी लोगों की स्वार्थ पूर्ति का साधन मात्र हैं। इस तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस अवतरण में ईश्वर के संबंध में अपनी धारणा को स्पष्ट किया है।

विशेष:

१. समाज के प्रत्येक वर्ग की समानता का समर्थन किया है।

२. ईश्वर और धर्म की विशुद्ध मानवीय व्याख्या की है।

९.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. निम्न में से कौन वल्लभाचार्य जी के शूद्र शिष्य थे ?

(क) नरहरिदास (ख) कृष्णदास

(ग) कबीरदास (घ) रहीमदास

२. महाप्रभु चैतन्य ने किस मुसलमान भक्त का चरणोदक पिया था ?

(क) रहीम (ख) रसखान

(ग) अग्रदास (घ) हरिदास

३. श्रीनाथजी के मंदिर का प्रधान अधिकारी निम्न में से कौन था ?

(क) कृष्णदास (ख) हरिदास

(ग) अग्रदास (घ) नंददास

४. मध्यकाल में कुचली हुई संस्कृति लता को निम्न में से किस का सहारा मिला ?

(क) उपनिषद (ख) वेद

(ग) भक्ति मतवाद (घ) इस्लाम

९.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) निबंध में इस्लाम स्वयं को किस रूप में व्यक्त करता है ?

२) भक्ति मतवाद के संबंध में निबंध में व्यक्त धारणाएं ?

३) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा निबंध में व्यक्त ईश्वर का वास्तविक रूप ?

९.१.७ बोध प्रश्न

१) 'ठाकुरजी की बटोर' निबंध का संवेदनात्मक विश्लेषण कीजिए ?

२) 'ठाकुरजी की बटोर' निबंध के माध्यम से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किन तथ्यों का विश्लेषण किया है ? विस्तार से लिखिए।

३) 'ठाकुरजी की बटोर' निबंध का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए ?

९.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

१०

निबंध : संस्कृतियों का संगम

इकाई की रूपरेखा

१०.० इकाई का उद्देश्य

१०.१ प्रस्तावना

१०.२ निबन्ध : संस्कृतियों का संगम

१०.२.१ संस्कृतियों का संगम निबन्ध की अन्तर्वस्तु

१०.२.२ संस्कृतियों का संगम निबन्ध का प्रतिपाद्य

१०.३ सारांश

१०.४ उदाहरण-व्याख्या

१०.५ वैकल्पिक प्रश्न

१०.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१०.७ बोध प्रश्न

१०.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१०.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का उद्देश्य आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'संस्कृतियों का संगम' की अंतर्वस्तु से परिचित कराना और इन निबंधों में दिए गए संदर्भित विषयों पर सर्वथा नवीन दृष्टि का उद्घाटन करना है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मौलिक चिंतन विभिन्न विषयों के प्रति नवीन प्रेरणा और दृष्टि देता है। चिंतन की सर्वथा नई दिशाएं प्राप्त होती हैं। इन निबंध के अध्ययन से संस्कृति के संबंध में उनकी विशिष्ट समझ और साहित्य के प्रदेय को लेकर उनके विचारों का परिचय मिलेगा।

१०.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का चिंतन अपने आप में अत्यंत मौलिक है। उनका अध्ययन अत्यंत व्यापक है। उन्होंने पौराणिक साहित्य, इतिहास और आधुनिक साहित्य का गहरा अध्ययन किया था और विभिन्न विषयों पर उन्होंने जो राय कायम की, वह उनके निबंधों में देखने को मिलती है। संस्कृति के संबंध में उनके विचारों से उनका संपूर्ण सृजनात्मक साहित्य भरा पड़ा है। इस इकाई में दिए गए 'संस्कृतियों का संगम' निबंध में भारतीय संस्कृति के संबंध में उनके मौलिक विचार देखने को मिलते हैं। उनकी दृष्टि में भारतीय संस्कृति समय के साथ विभिन्न संस्कृतियों के मेल से उत्पन्न हुई सतरंगी संस्कृति है।

mynotes.in

१०.२ निबन्ध : संस्कृतियों का संगम

१०.२.१ 'संस्कृतियों का संगम' निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

'संस्कृतियों का संगम' निबंध, प्राचीन काल से भारत की समेकित संस्कृति के विकास को हमारे सामने स्पष्ट करने वाला निबंध है। जैसा कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के बहुत से निबंधों में देखा जा सकता है कि भारतीय इतिहास और संस्कृति के विश्लेषण में उन्हें विशेष आनंद आता है। ये उनकी रुचि के विषय हैं। भारत में ब्रिटिश शासन की स्थापना के बाद भारतीय संस्कृति के संबंध में बहुत ही गलत धारणाओं का प्रचार और प्रसार हुआ। ब्रिटिश इतिहासकारों के द्वारा इस संबंध में किया गया विश्लेषण कहीं-कहीं एकांगी हो जाता है। यह हिंदी के विद्वानों के सामने एक तरह की चुनौती थी कि वे अपने इतिहास और संस्कृति के संबंध में सही और प्रामाणिक धारणाओं को विश्लेषण में स्थान दें। भारतीय इतिहास को विदेशी साहित्यकारों के द्वारा अत्यंत पिछड़ी जाति के इतिहास के रूप में दिखाया गया है। दरअसल उनमें यह धारणा इसलिए विकसित हुई क्योंकि इतिहास लेखन के प्रति भारतीयों में वैसा रुझान नहीं था जैसा पश्चिमी देशों में विकसित हुआ। जिसके चलते भारतीय इतिहास उस तरह के प्रामाणिक ढंग से प्राप्त नहीं होता, जिस तरह पश्चिमी देशों का इतिहास मिलता है और इसीलिए भारतीय इतिहास और संस्कृति के संबंध में तमाम ऐसी धारणाएं प्रचलित हो गयीं, जिनका वास्तविकता से कोई संबंध नहीं था। संभवतः इन्हीं स्थितियों के चलते आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की रुचि स्वाभाविक रूप से इस दिशा में विकसित हुई और जिसकी अभिव्यक्ति हम उनके निबंधों में पाते हैं।

'संस्कृतियों का संगम' निबंध भारतीय संस्कृति के क्रमबद्ध विकास को चिन्हित करने का आचार्य द्विवेदी का प्रयास है। सामान्य धारणा के अनुसार यह मान लिया जाता है कि वैदिक संस्कृति और भारतीय संस्कृति एक दूसरे के पर्याय हैं। परंतु वास्तव में यह धारणा अपने आप में एकांगी धारणा है। वैदिक संस्कृति, एक संस्कृति विशेष जाति से जुड़ा हुआ शब्दबन्ध है। जबकि भारतीय संस्कृति कई सांस्कृतिक प्रजातियों के सम्मिलन और उसके परिणाम स्वरूप विकसित हुए, लगातार बदलते हुए सांस्कृतिक स्वरूप का नाम है। यह धारणा निबंधकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की स्पष्ट धारणा है और इस धारणा को भी अपने कई निबंधों में व्यक्त भी कर चुके हैं। उनकी इस धारणा का आधार एकमात्र उनका कथन नहीं है बल्कि अपनी इस धारणा के सत्यापन के लिए उनके पास प्रमाणों की एक लंबी श्रृंखला है। उनके इस निबंध को पढ़कर जहां एक तरफ भारत के सांस्कृतिक विकास की गौरव गाथा को समझा जा सकता है, वहीं दूसरी तरफ भारतीय संस्कृति के संदर्भ में तमाम भ्रांतियों से भी बचा जा सकता है।

इस निबंध का आरंभ वे लाखो वर्ष पहले के महाद्वीपीय परिवर्तन के इतिहास की संभावित व्याख्या करते हुए करते हैं। वे लिखते हैं, "भौगोलिक-प्रत्न-तत्व के पंडितों का अनुमान है कि इस देश का मध्य और दक्षिणी भाग पुराना है, हिमालय और राजपूताना अपेक्षाकृत नए भूखंड हैं जिनमें एक भूगर्भ के आकस्मिक उत्पाद से समुद्र में से उन्नत हो आया और दूसरा प्रकृति के सहज क्रम में सूखकर मरूभूमि बन गया है। इस पर से यह समझा जा सकता है कि यदि इस देश में प्रथम मनुष्य का वास कहीं हुआ होगा तो वह विंध्यपर्वत के दक्षिण में ही कहीं रहा होगा। यह भूभाग कभी ऑस्ट्रेलिया के विशाल द्वीप के साथ स्थल मार्ग से संबंध

था और निकोबार और मलक्का के द्वीप भी इस भूभाग के ही संलग्न अंश थे। इस भूखंड में कभी मुंडा या कोल श्रेणी की जातियों की बस्ती थी। ये जातियां अब भी वर्तमान है और अपनी पुरानी परंपरा को कथंचित जिला रखने में समर्थ हैं।" इस तरह इस निबंध की शुरुआत वे अत्यंत प्राचीन भौगोलिक विकास संबंधी विश्लेषण से करते हैं, जिसका उद्देश्य यह दिखाना है कि किस प्रकार एक बड़े भू-भाग पर भौगोलिक विकास के कारण मनुष्य धीरेधीरे अलग- होता चला गया। आचार्य द्विवेदी के अनुसार पूर्व धारणा के अनुसार ऐसा माना जाता था कि कोल व मुंडा जातियों की संस्कृति का भारतीय संस्कृति के विकास में कोई योगदान नहीं है, जबकि ऐसा समझा जाना गलत है। इसके लिए वे प्रमाण के रूप में प्रोफेसर सिलवां लेवी एवं उनके शिष्य प्रोफ़ेसर ज्यूलुस्की के भाषा संबंधी अध्ययनों को आधार बनाते हैं और उन प्रामाणिक आधारों के द्वारा यह निष्कर्ष निकालते हैं। यह समझना गलत है कि यह जातियां हमारी सभ्यता में कुछ भी नहीं दे सकीं। उनके अनुसार अनेक वृक्षों के नाम, खेती-बाड़ी के औजारों और अन्य पारिभाषिक शब्दों के नाम इनकी भाषाओं में आए हैं। मुंडा एवं कोल जातियों से संभवतः वृक्ष-पूजा, लिंग पूजा या लांगुरधर देवता की पूजा आदि हिंदू धर्म में आयी।

भौगोलिक और भाषाई स्थितियों के आधार पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह मानते हैं कि हिंदू समाज के निचले स्तर में खेती-बाड़ी करने वाली बहुत सी जातियां, इन्हीं जातियों (कोल और मुंडा) का आर्यभाषी संस्करण हैं। इसीलिए इन जातियों की परंपरा के अध्ययन से भारतीय धर्म-जीवन की परंपरा के विस्तृत अध्ययन में काफी सहायता मिल सकती है। ऐसा उन्हें विश्वास है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने शोधपूर्ण निबंधों में इस तरह की जिज्ञासाएं और इस तरह के स्थल चिन्हित करते चलते हैं, जहां से कुछ नए निष्कर्ष और कुछ उपयोगी जानकारी मिल सकती है। जो हमारे ज्ञान के श्रीवृद्धि में सहायक हो सकती हैं। रामायण की कथा के आधार पर रामायण-काल के संदर्भ में भी उन्होंने यथार्थ ढंग से चिंतन किया है और मिथक की तरह प्रयोग किए गए रामायण के कुछ प्रसंगों के बारे में अत्यंत प्रामाणिक तर्कों के साथ उन्होंने कुछ बातें इस निबंध में कहीं हैं। रामायण की कथा के आधार पर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि श्रीराम को दक्षिण गमन के दौरान बहुत ही ऐसी जातियों का सहयोग मिला था, जिन्हें कृषि-कर्म की जानकारी नहीं थी। जिनके पास आर्य सभ्यता की तरह उन्नत अस्त्र और शस्त्र नहीं थे। इन्हें वानर कहा गया। रामायण से मिली इस जानकारी के आधार पर यह माना जा सकता है कि कोल, मुंडा आदि जातियों के अतिरिक्त वानर आदि जातियों की संस्कृति का प्रभाव भी निश्चित रूप से आर्य सभ्यता पर पड़ा और अंततः भारतीय संस्कृति के परिवर्तित या विकसित होने में इनका भी हाथ है।

इतिहास में निरंतर हो रही नई - नई खोजों के प्रति आचार्य द्विवेदी अत्यंत उत्सुक रहा करते थे। उन्हें इस तरह की जानकारियां अपने निष्कर्षों में प्रयोग करने में अत्यधिक आनंद आता था। हड़प्पा सभ्यता के बारे में जानकारी होने पर उन्होंने अपना ध्यान उधर भी केंद्रित किया। सन १९२४ में डॉ० राखालदास बनर्जी ने मोहनजोदड़ो में और पंडित दयाराम साहनी ने हड़प्पा में खुदाई के दौरान एक अत्यंत समृद्ध सभ्यता का पता लगाया, जो भारतीय भूखंड में आर्यों से पहले से निवास करती आ रही थी। खुदाई में अत्यंत विकसित भवन, रास्ते, अन्नागार, मुद्राएं और उत्कीर्ण लिपि भी मिली। यह लिपि यद्यपि अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है। इतिहास के और प्रमाणों से यह पता चलता है कि मोहनजोदड़ो-

हड़प्पा सभ्यता के दौरान मिली वस्तुएं, ईसा पूर्व तीसरी सहस्राब्दी में मौजूद सुमेरियन सभ्यता की वस्तुओं से बहुत मिलती-जुलती थीं। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हड़प्पा सभ्यता एवं सुमेरिया सभ्यता के बीच निश्चित रूप से संबंध रहे होंगे।

इतिहास के जो पंडित ईसा के जन्म के बाद ही समस्त विकास को आगे बढ़ा हुआ मानते हैं, उन्हें यह तथ्य जानकर आश्चर्य होगा की विभिन्न ऐतिहासिक प्रमाणों से यह पता चलता है कि ईसामसीह के हजारों वर्ष पहले ही हड़प्पा सभ्यता का मेसोपोटामिया, मिस्र, बेबिलोनिया आदि सभ्यताओं से अत्यंत घनिष्ट संबंध था। बलूचिस्तान में ब्राहुई नामक द्रविड़ भाषा का अनुसंधान भी इतिहासकारों के द्वारा किया जा चुका है। इस संबंध को प्रामाणिकता देते हुए आचार्य द्विवेदी लिखते हैं, "सुमेरियन लोगों की एक पौराणिक गाथा यह है कि औनस नामक मत्स्य रूपधारी पुरुष ईरान की खाड़ी तैरकर आया था और सुमेरियन लोगों को ज्ञान का उपदेश दिया था। इससे यह अनुमान पुष्ट होता है कि सिंधु उपत्यका के लोगों ने ही सभ्यता का संदेश सुमेरवासियों को सुनाया था। इस तरह आचार्य द्विवेदी के अनुसार इस तथ्य से यह प्रमाण मिलते हैं कि सिंधु घाटी के लोग ही समुद्र मार्ग से सुमेर की ओर गए थे और इन्होंने ही सुमेर के लोगों को सभ्यता का पाठ पढ़ाया।

अपने इन तथ्यों से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह प्रमाणित करना चाहते हैं कि भारतीय सभ्यता और संस्कृति का आरंभ आर्यों से ही नहीं हुआ है बल्कि उसके पहले भी एक अत्यंत समृद्ध द्रविड़ सभ्यता थी। वास्तव में आचार्य द्विवेदी जहां तक के संदर्भ में बात कह रहे हैं, उससे आगे की खोजों पर भी अगर हम बात करें तो हमें पता चलेगा कि जिसे आज हम हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की सभ्यता के नाम से जानते हैं, उसके बहुत से स्थल पाकिस्तान से लेकर महाराष्ट्र तक फैले हुए थे। इस तरह आज तक के शोध लगातार यह प्रमाणित करते जा रहे हैं कि भारत में आर्य सभ्यता के विकास के पहले से ही एक अत्यंत समृद्ध सभ्यता मौजूद थी और यह मानना कि श्रीरामचंद्र ने समूचे दक्षिण को सभ्य बनाया, बहुत तर्कसंगत नहीं जान पड़ता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का स्पष्ट मत है की ऐतिहासिक प्रमाण से पुष्ट जो तथ्य हैं, वे निश्चित रूप से हमारे इतिहास के सुनिश्चित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रखते हैं। परंतु हमारे देश का बहुतायत इतिहास साहित्यिक रूप में हमारे पास मौजूद है, भले ही पुरातात्विक साक्ष्य उसकी प्रामाणिकता को अभी तक पुष्ट नहीं कर पाए हैं, तो भी उसे पूरी तरह से छोड़ देना ठीक नहीं होगा। अंततः वह नई-नई खोज और शोध की प्रेरणा तो दे ही रहा है।

अपने इस निबंध में द्रविड़ जाति के संदर्भ में वे एक और भ्रान्ति का निराकरण करते दिखाई देते हैं। स्पष्ट रूप से वे यह प्रश्न करते हैं कि, द्रविड़ जाति कौन है ? दरअसल आरंभिक इतिहासकार आर्यों के अतिरिक्त अन्य सभी जातियों को भ्रमवश द्रविड़ की संज्ञा देते थे। जिनके अंतर्गत रावण, बाणासुर, प्रहलाद, बाली जैसे पौराणिक पात्र सम्मिलित थे। उनके अनुसार द्रविड़ जाति का प्रश्न अत्यंत उलझा हुआ प्रश्न है। वह कहते हैं, "द्रविड़ भाषाओं को बोलने वाली जातियों को भी द्रविड़ नहीं कहा जा सकता। रावण का जन्म जिस जाति में हुआ था, उसका आधुनिक नाम क्या है ? यह भी अनिश्चित ही है। कुछ लोगों ने गोंड जाति को उस जाति का आधुनिक जीवित रूप बताया है। गोंड राजाओं की प्रशस्तियों से भी पता चलता है कि वह अपने को पुलस्त्य वंशी समझते थे। गोंड शब्द के साथ संस्कृत के कोंडप (राक्षस) आदि शब्दों की समानता से भी इस तथ्य को पुष्ट करने का प्रयत्न किया गया है।

पौराणिक परंपरा इस विषय में बहुत उलझी हुई है। रावण को पुलस्त्य मुनि की संतान भी बताया गया है, यक्षपति कुबेर से उसका रिश्ता भी जोड़ा गया है और उसे स्पष्ट रूप में 'ब्राह्मण' भी कहा गया है। उसके आचार में शिव की पूजा भी है, वेद का पाठ भी है और मद्य-मांस का सेवन भी है।" इस तरह इस उदाहरण के द्वारा वे यह संकेत देना चाहते हैं कि हजारों वर्षों के क्रम में तथ्य पौराणिक साहित्य में कुछ इस कदर उलझ गए हैं कि उनसे कुछ निष्कर्ष निकाल पाना काफी कठिन प्रतीत होता है परंतु यह प्रमाण निरा कल्पना भी नहीं माने जा सकते। जब तक तथ्य पूरी तरह से प्रमाणित न हो जाए, तब तक कुछ भी कहना ठीक नहीं है। यह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की शोधपरक दृष्टि का एक अच्छा उदाहरण है। एक शोधकर्ता कभी भी अपनी उम्मीदें छोड़ता नहीं है, जब तक स्पष्ट रूप से तथ्य उसके सामने नहीं आ जाते वह उन्हें अपने प्रयोग की शाला में बनाए रखता है।

आचार्य जी के समय में हो रहे ऐतिहासिक शोध परिणामों के आधार पर वे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि, "वृक्ष-पूजा, नर-बलि, जीव-बलि, मद्य-मांस की बलि, प्रेत-पूजा आदि आचारों के मूल उत्स मुंडा या कोल जातियां हैं और मूर्ति-पूजा, ध्यान, जप, गुरु-पूजा, अवतारवाद आदि के मूल प्रेरणा-स्रोत ऐसी जातियां हैं जो इन कोल मुंडा आदि श्रेणी की जातियों से अधिक सभ्य और समृद्ध थीं। एक शब्द में इनका नाम द्रविड़ रख दिया गया है।" भारतीय संस्कृति के समेकित व्यवहार को समझते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इन निष्कर्षों और मान्यताओं को और आगे बढ़ाते हुए मानते हैं कि, "परवर्ती काल का वह तंत्रवाद, जिसमें स्त्री-तत्व की प्रधानता थी और शरीर को ही समस्त सिद्धियों का श्रेष्ठ साधन माना जाता था, यक्ष, गंधर्व आदि किरात जातियों की देन रहा होगा। इसके अतिरिक्त उत्तर से ही कापालिक और वाम मार्गों का आगमन हुआ होगा। बंगाल में इन लोगों के साथ द्रविड़ जातियों के मिश्रण से एक नई जाति का जन्म हुआ है। आगे चल आर्यरक्त का भी इस जाति में मिश्रण हुआ। वस्तुतः आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की शोधदृष्टि अत्यंत व्यापक है। उसमें इतिहास, पुरातत्व, संस्कृति, नृ-तत्वशास्त्र, भूगोल, भाषा विज्ञान आदि जैसे कितने ही विषय सम्मिलित हैं। उनका एकदम स्पष्ट दृष्टिकोण है कि जिस भी विषय से, जिस भी बात से शोध परिणामों को पुष्ट करने में सफलता मिले, उसे स्वीकार कर लेना चाहिए।

इन सभी के विश्लेषण के बाद आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह मानते हैं कि विभिन्न जातियों और प्रजातियों के इस महासमुद्र में सबसे अधिक प्रभावशाली जाति, आर्य-जाति है। जिनका वैदिक साहित्य अन्य सभी जातियों पर अपना जबरदस्त प्रभाव छोड़ सका। भारत में आर्य जाति का आगमन कैसे और कहां से हुआ, इसका विश्लेषण भी वह करते हैं और निर्विवाद रूप से यह बात स्वीकार करते हैं कि उत्तर पश्चिम की ओर से ही आर्यों का आगमन भारत में हुआ परंतु वे मूलतः किस स्थान से आए यह अवश्य तय नहीं है। परंतु इसके संबंध में भी वे कुछ प्रमाणों की चर्चा करते हैं। जैसे वे कहते हैं, "यूफ्रेट्स के उपरले हिस्से के मितानी राज्य ने १४२० ई० पूर्व में हिटाइट के राज्य से संधि करते समय उन देवताओं के नाम साक्षीरूप में लिए हैं जो भारतीय वैदिक साहित्य के विद्यार्थी के निकट अत्यधिक परिचित हैं। ये देवता हैं - मित्र, वरुण, इंद्र और नासत्य।" वस्तुतः अपनी इस खोजबीन की प्रवृत्ति के चलते निबंधकार इन तथ्यों के माध्यम से किसी एक निष्कर्ष तक पहुंचने का प्रयास करता दिखाई देता है। यह बात इतिहास के गहरे अंधकार में है कि आर्यों का प्रसार कहां से होना शुरू हुआ परंतु निबंधकार अनुमान लगाते हुए कहते हैं, "ऐसा जान पड़ता है कि मध्य एशिया के किसी स्थान से आर्य नाना दिशाओं में फैले थे। इनका एक

हिस्सा ईरान होकर भारत आया था और दूसरा खाल्दिया और एशिया माइनर की ओर चला गया था। जो हो, इन आर्यों का प्रभाव भारतवर्ष की विभिन्न जातियों पर बहुत अधिक पड़ा।"

संस्कृतियों का संगम निबंध की सारी खोजबीन और जांच-पड़ताल, सारी जद्दोजहद भारतीय संस्कृति के विकास को चिन्हित करने का काम करती है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध में भारत में आर्यों के आगमन के पूर्व के अनुमानों और प्रमाणों से इस संस्कृति के लगातार आगे विकसित होने के संबंध का तथ्यपूर्ण वर्णन किया है। पहले यह इतिहास कितना पीछे तक जाता है यह तो अब केवल अनुमान का विषय है। भविष्य में नई-नई खोजें होती रहेंगी और नए-नए निष्कर्ष आते रहेंगे परंतु वे अपना मूल्यांकन आर्य और आर्येत्तर जातियों के संबंध में करते दिखाई देते हैं और आर्यों के पहले की समृद्ध सभ्यता का विश्लेषण करते हुए यह मानते हैं कि आर्य सभ्यता, द्रविड़ सभ्यता एवं अन्य सभ्यताओं का भारतीय संस्कृति के विकास में बड़ा अहम और महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आज स्थिति यह है कि बहुत सारे विचार हमारे ग्रंथों में ऐसे हैं, जिनके बारे में प्रामाणिक ढंग से यह कहना बड़ा कठिन है कि यह विचार आर्य है या द्रविड़। यही समेकित भारतीय संस्कृति का सौंदर्य है। इन सभी के सम्मिलित प्रयासों से भारत की महान संस्कृति उत्पन्न हुई है। संस्कृति के इस स्वरूप को समझ कर तुच्छ हितों के लिए परस्पर टकराने वाले भारतीय समाज को यह समझना चाहिए कि साझा संस्कृति की हजारों वर्ष की भारतीय परंपरा में सब-कुछ सभी का है। एकता का एक विशिष्ट भाव पूरे भारतीय समाज के भीतर पैदा होना चाहिए। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस निबंध के माध्यम से इसी तरह की स्थापना करना चाहते हैं।

१०.२.२ संस्कृतियों का संगम निबन्ध का प्रतिपाद्य:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी मानवीय मूल्यों को समर्पित साहित्यकार हैं। उनके लेखन में भारतीय और भारतीयता की अपनी विशिष्ट समझ और व्याख्या है। भारतीय संस्कृति उनके लेखन के प्रिय विषयों में से एक रहा है। भारतीय इतिहास के प्रति उनकी समझ के सभी कायल हैं। उन्होंने अपने शोधपूर्ण उद्यम से हिंदी साहित्य को कई नवीन उद्भावनाओं से समृद्ध किया है। संस्कृतियों का संगम निबंध केवल मात्र संस्कृति के विश्लेषण तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसके लेखन के पीछे अपनी तरह के सामयिक कारण भी मौजूद हैं।

आधुनिक काल में विभिन्न कारणों के चलते भारतीय समाज में टूट-फूट और लगातार विभाजन दर्शित होता है। और यह विभिन्नता अपने दुराग्रही रूप में हम सभी को दिखाई देती है। यह निबंध वास्तव में हमें आईना दिखाने का काम करता है कि किस तरह से भारतीय संस्कृति का विकास हुआ है। वह एक समेकित संस्कृति है, जिसमें हर वर्ग, हर सभ्यता का विशिष्ट योगदान है। भारतीय संस्कृति, भारतीय समाज की एकता को अभिव्यक्त करने वाली संस्कृति है। अपने इन्हीं उद्देश्यों के लिए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भारतीय संस्कृति का ऐतिहासिक विश्लेषण करते दिखाई देते हैं और जिस भारतीय संस्कृति को आर्य संस्कृति के रूप में प्रचारित और प्रसारित किया जाता है, उसके बारे में तर्कपूर्ण ढंग से अपनी बात रखते हुए वे हमारी धारणाओं को संशोधित करने का काम करते हैं।

भारत बहुभाषी और विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों से समृद्ध देश है और इसका इतिहास हजारों वर्ष पुराना है । प्रत्येक संस्कृति में विकसित हुई प्रथाएं और परंपराएं हजारों वर्ष पुरानी हैं और इन सभी से मिलकर भारतीय संस्कृति का विकास हुआ है। आज तो हम यह बता पाने में भी सक्षम नहीं हैं कि कौन सी प्रथा या परंपरा किस विशिष्ट जातीय संस्कृति से उदभूत हैं । यही भारतीय समेकित संस्कृति का वास्तविक सौंदर्य भी है । इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भारतीय संस्कृति के आरंभिक विकास से अपनी बात आरंभ करते हुए क्रमश: उसमें जुड़ते गए विभिन्न सांस्कृतिक प्रभावों का शोधपूर्ण ढंग से विश्लेषण किया है । भारतीय संस्कृति के विकास में आर्य संस्कृति से पहले विद्यमान समृद्ध द्रविड़ संस्कृति का अस्तित्व था। इसके बाद भारत में आर्यों का आगमन हुआ । अपने विकसित हथियारों और तकनीकियों के चलते आर्यों ने संपूर्ण भारत पर धीरे-धीरे राजनीतिक विजय हासिल की । परंतु यहां उपस्थित अन्य जातियों और समूहों की संस्कृतियों का प्रभाव उनकी संस्कृति पर भी पड़ा। यह प्रभाव स्वाभाविक रूप से आर्य संस्कृति में सम्मिलित होते गए। मनुष्य अपनी आवश्यकता के अनुरूप इन्हें नियोजित करता चला गया। आर्यों के बाद उत्तर-पश्चिम की दिशा से ही अन्य बहुत सी जातियां भी भारत आती रहीं और अपने सांस्कृतिक प्रभावों से भारतीय संस्कृति को आगे बढ़ाने का काम करती रहीं। इसी क्रम में इस्लाम भी भारत में आया और उसकी विशिष्ट संस्कृति का प्रभाव भी भारतीय संस्कृति पर पड़ा। आगे चलकर यूरोपीय जातियां भी भारत में आयीं । अंग्रेज, फ्रांसीसी, डच, पुर्तगाली आदि कम या ज्यादा समय के लिए यहां रहे । अंग्रेज जहां सबसे बड़ी राजनीतिक शक्ति के रूप में भारत को लंबे समय तक प्रभावित करते रहे, वहीं पुर्तगाली ऐसी यूरोपीय जाति के रूप में जाने जाते हैं, जो सबसे पहले भारत आए और सबसे अंत में गए । इन सभी यूरोपीय जातियों में अंग्रेजी जाति का प्रभाव संपूर्ण भारत पर स्थाई रूप से पड़ा और लेन-देन की प्रक्रिया में भारतीय संस्कृति का रूप पुनः बदला। इस तरह भारतीय संस्कृति समय-समय पर इस देश में विभिन्न मानव प्रजातियों के मिलने और साथ रहने के कारण विकसित हुई विशिष्ट संस्कृति है ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने शोध और अध्ययन में इस तथ्य पर विशेष बल देते हैं और उनके इस आग्रह को सकारात्मक ढंग से हम समझ भी सकते हैं । दरअसल यह देश अलग-अलग जातियों और संस्कृतियों से मिलकर निर्मित हुआ है और उन सभी से मिलकर हमारी एक साझा संस्कृति विकसित हुई है । वे लिखते हैं, "जैसा कि रवींद्रनाथ ने कहा है, यह भारतवर्ष महामानव - समुद्र है। केवल आर्य, द्रविड़, कोल और मुंडा तथा किरात जातियां ही इसमें नहीं आयी हैं । कितनी ही ऐसी जातियां यहां आयी हैं जिन्हें निश्चित रूप से किसी खास श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। फिर उत्तर-पश्चिम से नाना जातियां राजनीतिक और आर्थिक कारणों से आती रही हैं। उन सबके सम्मिलित प्रयत्न से वह महिमाशालिनी संस्कृति उत्पन्न हुई है जिसे हम भारतीय संस्कृति कहते हैं ।" इस तरह वे भारतीय संस्कृति की सार्थक और सकारात्मक व्याख्या करते हैं ।

१०.३ सारांश

इस इकाई में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का 'संस्कृतियों का संगम' निबंध प्राचीन काल से भारतीय संस्कृति के विकास को स्पष्ट करता है । ब्रिटिश शासन के बाद भारतीय संस्कृति के

संबंध में गलत धारणाओं का प्रसार-प्रचार हुआ था। उसके क्रम बद्ध विकास को इस निबंध के माध्यम से स्पष्ट किया है।

१०.४ उदाहरण-व्याख्या

व्याख्या अंश (१):

आज केवल अनुमान के बल पर ही कहा जा सकता है कि अमुक प्रकार का आचार आर्य है, अमुक प्रकार का विचार द्रविड़ है। पर इसमें संदेह नहीं कि अनेक आर्य-अनार्य जातियों ने इस देश के धर्मविश्वास को नाना भाव से समृद्ध किया है। आज भी उन जातियों की थोड़ी-बहुत परंपरा बच रही है। उनके अध्ययन से हम निश्चित रूप से इस नतीजे पर पहुंच सकते हैं कि हमारे धर्मविश्वास को सभी जातियों ने किसी-न-किसी रूप में प्रभावित अवश्य किया है।

संदर्भ: प्रस्तुत अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' के निबंध संस्कृतियों का संगम से उद्धृत है।

प्रसंग: इस अवतरण में भारतीय संस्कृति के विकास में द्रविड़ संस्कृति, आर्य संस्कृति एवं अन्य जातियों की संस्कृतियों का किस तरह मिला-जुला योगदान है, इसे निबंधकार ने अभिव्यक्त किया है।

व्याख्या: इस अवतरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भारतीय संस्कृति के विकास में घुल-मिल गए विभिन्न तत्वों की चर्चा की है। भारत में आर्यों के आगमन से पहले मुंडा, कोल, द्रविड़ एवं अन्य जातियों का निवास था। मुंडा और कोल जातियां अति प्राचीन काल की हैं। जिसके बारे में वे कहते हैं कि "इस देश में प्रथम मनुष्य का वास कहीं हुआ होगा तो वह विंध्यपर्वत के दक्षिण में ही कहीं रहा होगा। यह भूभाग कभी ऑस्ट्रेलिया के विशाल द्वीप के साथ स्थल मार्ग से सम्बद्ध था और निकोबार और मलक्का के द्वीप भी इस भूभाग के ही संलग्न अंश थे। इस भूखंड में कभी मुंडा या कोल श्रेणी की जातियों की बस्ती थी।" इस तरह ज्ञात इतिहास में सबसे पहले मुंडा, कोल जैसी जातियों का प्रवास यहां स्वीकार किया जाता है। इसके बाद कभी द्रविड़ जाति का विकास हुआ। सन १९२४ में राखालदास बनर्जी एवं दयाराम साहनी के प्रयासों से हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो के पुरातात्विक स्थलों की खुदाई में बहुत सारे साक्ष्य ऐसे मिले, जिनका संबंध द्रविड़ जाति से था। यह दोनों ही स्थल अत्यंत विकसित अवस्था में मिले। द्रविड़ सभ्यता एक नगरीय सभ्यता थी, जबकि आर्य सभ्यता का संबंध ग्रामीण सभ्यता से था। निश्चित रूप से इन दोनों संस्कृतियों के मिलने से एक नई संस्कृति का उद्भव हुआ। मुंडा, कोल जैसी जातियां, द्रविड़ सभ्यता एवं अन्य गौड़, छोटी-छोटी जातियों की बहुत सी सांस्कृतिक विशेषताएं धीरे-धीरे भारतीय संस्कृति में इस कदर घुल-मिल गयीं कि आज उन्हें अलग-अलग कर पाना संभव नहीं है। यही भारतीय संस्कृति का समेकित विकास है। जिसका किसी एक जाति या धर्म से संबंध नहीं है, बल्कि वह विभिन्न जातियों के सांस्कृतिक विश्वासों का मिला-जुला रूप है।

विशेष:

१. भारतीय संस्कृति के विकास को चिन्हित किया है।

२. भारतीय संस्कृति में एकता के तत्वों का उल्लेख किया है।

व्याख्या अंश (२):

यहां प्रकृत विषय यह है कि आर्यों के आने के पहले इस देश में एक अत्यंत समृद्ध द्रविड़ सभ्यता थी। यह कहना कि श्री रामचंद्र ने समूचे दक्षिण को सभ्य बनाया, विशेष युक्तिसंगत नहीं जान पड़ता क्योंकि रावण और उसके राज्य के लोग रामायण की अपनी गवाही पर ही कम समृद्ध नहीं जान पड़ते। यह हो सकता है कि लोहे का परिचय द्रविड़ों को आर्यों से हुआ हो, पर यह इतने से अधिक और कुछ भी नहीं सिद्ध करता कि दक्षिण की पर्याप्त समृद्ध सभ्यता में लोहे का अभाव था। आर्यों के पास लोहे के अस्त्र थे जिससे वे विजयी हुए। एक दूसरी बात भी उनके विजय का कारण रही होगी – घोड़े।

संदर्भ: प्रस्तुत अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह के 'लताकल्प' निबंध संस्कृतियों का संगम से उद्धृत है।

प्रसंग: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भारतीय संस्कृति का विश्लेषण करते हुए रामायणकालीन इतिहास के संबंध में कुछ पूर्व धारणाओं का यहां विश्लेषण किया है और शोधपूर्ण तथ्यों के आधार पर एक निष्कर्ष तक पहुंचने का प्रयास किया है।

व्याख्या: यह एक सामान्य धारणा है कि भारत में संस्कृति का विकास आर्य सभ्यता के आगमन के पश्चात हुआ। वैदिक साहित्य में चार युगों का वर्णन है - सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग और कलयुग। श्रीराम का जन्म त्रेतायुग में माना जाता है। श्रीराम के चरित्र को महान रूप में प्रस्तुत करने का पहला श्रेय वाल्मीकि कृत रामायण ग्रंथ को है। रामायण से तत्कालीन भारतीय संस्कृति और उसके विकास के संदर्भ में बहुत से संकेत प्राप्त होते हैं। ऐसा माना जाता है कि श्रीराम को पिता राजा दशरथ के द्वारा वनवास दिए जाने के बाद राम ने अयोध्या त्याग दी और चित्रकूट होते हुए दक्षिण की ओर गमन किया। जहां नासिक में सीता हरण की घटना हुई और उसके बाद राम उनकी तलाश में धुर दक्षिण की ओर गए। अंततः श्रीलंका नरेश रावण से उनका युद्ध हुआ इस युद्ध में उनका साथ दक्षिण की कई जातियों ने दिया, जो सांस्कृतिक रूप से भिन्न थीं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इन्हें भिन्न माना है परंतु इनकी समृद्धता के विषय में उन्हें कोई संदेह नहीं है। इसीलिए वे मानते हैं कि रामायण के साक्ष्यों के आधार पर भी देखा जाए तो रावण जिस भी जाति से संबंध रखता था, वह संस्कृति अत्यंत समृद्ध थी। लंका को स्वर्ण निर्मित बताया गया है। पुष्पक विमान का जिक्र किया गया है। इसके अलावा और भी बहुत सी शक्तियां रावण के पास थीं। राम-रावण युद्ध में राम का सहयोग करने वाली वानर जाति थी। जो अपनी एक अलग सांस्कृतिक पहचान लिए विशिष्ट जाति थी। इससे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह निष्कर्ष निकालते हैं कि यह माना जाना कि राम के दक्षिण गमन के पश्चात ही वहां सभ्यता का विकास हुआ, ठीक नहीं है। उन जातियों की अपनी विशिष्ट संस्कृति थी और आर्य संस्कृति पर उनका पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इन समय के प्रभावों से ही आगे बढ़ते हुए आज की भारतीय संस्कृति विकसित हुयी। इस प्रकार भारतीय संस्कृति आर्य संस्कृति का पर्याय नहीं है बल्कि आर्य जाति के

अतिरिक्त, उनके भारत आगमन से पहले और बाद में यहां निवास करती अन्य दूसरी जातियों के आपसी संसर्ग और मेलजोल का समेकित परिणाम है।

विशेष:

१. रावण के सम्बंध में प्रामाणिक जानकारी मिलती है।

२. निबंधकार के विशेष इतिहास ज्ञान का परिचय मिलता है।

१०.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की लुप्त निधियों का आविष्कार निम्न में से कब हुआ ?

(क) १९२० (ख) १९२२

(ग) १९२४ (घ) १९२६

२. रावण को निम्न में से किस मुनि की संतान कहा गया है ?

(क) वशिष्ठ (ख) अगस्त्य

(ग) शुक्राचार्य (घ) पुलस्त्य

३. गोंड राजाओं ने अपनी प्रशस्तियों में अपने को किसका वंशज माना है ?

(क) पुलस्त्य (ख) शुक्राचार्य

(ग) गुरु बृहस्पति (घ) नारद

४. निम्न में से किसे विंध्य पर्वत को पार करके दक्षिण जाने वाला सर्वप्रथम मुनि माना जाता है ?

(क) पुलस्त्य (ख) अगस्त्य

(ग) वशिष्ठ (घ) विश्वामित्र

१०.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) द्रविड़ संस्कृति का परिचय दीजिए ?

२) प्राचीन सुमेरिया एवं भारत के संबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी क्या जानकारी देते हैं ?

३) मुंडा और कोल जातियां।

munotes.in

१०.७ बोध प्रश्न

१) 'भारतीय संस्कृति वस्तुतः कई जातियों के द्वारा विकसित समेकित संस्कृति है', कथन की समीक्षा कीजिए?

२) भारतीय संस्कृति के संबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की मान्यताओं का विश्लेषण कीजिए ?

३) निबंध के आधार पर भारतीय संस्कृति के क्रमबद्ध विकास को रेखांकित कीजिए ?

१०.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

१०.१

निबन्ध : समालोचक की डाक

इकाई की रूपरेखा

१०.१.० इकाई का उद्देश्य
१०.१.१ प्रस्तावना
१०.१.२ निबन्ध : समालोचक की डाक
१०.१.२.१ 'समालोचक की डाक' निबन्ध की अन्तर्वस्तु
१०.१.२.२ 'समालोचक की डाक' निबन्ध का प्रतिपाद्य
१०.१.३ सारांश
१०.१.४ उदाहरण-व्याख्या
१०.१.५ वैकल्पिक प्रश्न
१०.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न
१०.१.७ बोध प्रश्न
१०.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१०.१.० इकाई का उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई में छात्र 'समालोचक की डाक' निबंध की अन्तर्वस्तु को जानेंगे।
- 'समालोचक की डाक' निबंध के प्रतिपाद्य को छात्र समझ सकेंगे।

१०.१.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी एक समर्थ निबंधकार है। वे अनेक विषयों की अभिव्यक्ति निबंधो के माध्यम से प्रस्तुत करते है। ऐसे ही 'समालोचक की डाक' निबंध में उनकी सामाजिक सोच को दर्शाती है और साथ ही समाज के प्रति उनकी आस्थाओ को भी दर्शाती है। इसे निबंध के अन्तर्गत देखा जा सकता है।

१०.१.२ निबन्ध : समालोचक की डाक

१०.१.२.१ 'समालोचक की डाक' निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

'समालोचक की डाक' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के हास्य-बोध को स्पष्ट करने वाला उत्कृष्ट निबंध है। चिंतन और विचार के भार से मुक्त यह निबंध अपने समय की प्रेम-प्रवृत्ति पर आधारित काव्य की समीक्षा पर आधारित है। हिंदी कविता में या कह लें, संपूर्ण विश्व के काव्य में प्रेम एक ऐसा विषय रहा है जिस पर कवियों का ध्यान सबसे ज्यादा गया है। दरअसल यह रागात्मक-बोध जहां एक ओर किसी को भावनाओं के ज्वार की ओर ले जाता

munotes.in

है वहीं दूसरी ओर इस ज्वार को सृजनात्मक प्रवृत्ति के लोग काव्य के माध्यम से अभिव्यक्त करके संभवतः वे मुक्त हो जाना चाहते हैं। इसीलिए प्रेम की प्रवृत्ति संसार की सभी भाषाओं की कविता में सबसे ज्यादा तल्लीन होकर व्यक्त की गई है। यही कारण है कि हमारा निबंधकार भी अपने समय की इस प्रवृत्ति को दरकिनार नहीं कर पाता और अपने गुरु-गंभीर चिंतन से मुक्त होकर इस प्रवृत्ति के विश्लेषण में भी व्यस्त दिखाई देता है।

प्रत्येक नए पुराने कवि की एक लालसा होती है कि उसके सृजन को कोई सुधी आलोचक देखे, समझे और सराहे। इससे उसे अपनी रचना के प्रति एक विशेष संतोष मिलता है। यह निबंध आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तिगत अनुभव का विषय प्रतीत होता है। अपने लेखन के आरंभ से ही वे एक सुधी-समीक्षक के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुके थे। ऐसे में तमाम नए - पुराने साहित्यकार उनके पास अपनी रचनाओं को भेजते रहते थे और एक समीक्षक होने के नाते आचार्य द्विवेदी कभी नैतिक दबाव के कारण और कभी स्वत:स्फूर्त प्रेरणा के कारण इस तरह की समीक्षा की ओर प्रवृत्त हो जाते थे। परंतु आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की स्वाभाविक वृत्ति सामाजिक और लोक-कल्याणकारी विषयों की ओर अधिक रही है। ऐसे में लगातार प्रेमपरक-काव्यों की समीक्षा लिखना उनके लिए कितना बोझिल रहा होगा, यह समझा जा सकता है और यह भावना इस निबंध में स्पष्ट रूप से प्रकट भी होती है। जब हमारे पास कई अन्य तरह के सामाजिक दबाव और दायित्व मुंह बाए खड़े हों, ऐसे में प्रेम की व्यंजना का क्या और कितना अर्थ है ? आधुनिक साहित्य में इस निबंध के लिखे जाने के पूर्व ही भारतेंदु हरिश्चंद्र, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे संपादक-आलोचक-साहित्यकार नए युग के अनुरूप लेखकों से नए विषयों के चयन की बात कह चुके थे और यह अपने सामयिक समय में सत्य भी था। इसी अनुरूप आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की रुचियों का परिष्कार हुआ। उनके लिए सामाजिक प्रश्न, व्यक्तिगत प्रेम-व्यंजना से कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण थे।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की लेखन शैली गुरु-गंभीर और चिंतनपरक शैली है। इस विशेषता के साथ-साथ वे अपने निबंधों में व्यंग्यात्मकता और हास्यपरकता से एक हल्का-फुल्का रसमय वातावरण निर्मित किए रहते हैं, जो पाठक को गुदगुदाता भी रहता है। यह गुदगुदाहट पाठक को पुस्तक से अलग नहीं होने देती। उनके निबंधों में एक साथ विश्लेषण की गाम्भीर्यता और हास्य-प्रवणता के कारण उनके निबंध उनकी अपनी शैली के विशिष्ट निबंध बन जाते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने समय की इस कविता प्रवृत्ति का गंभीर विश्लेषण करते दिखाई देते हैं। साथ ही उन कवियों पर की गई उनकी टिप्पणियां अत्यंत सार्थक टिप्पणियां हैं, जो उन कवियों की विशेषताओं को प्रदर्शित करती हैं। इस निबंध में एक समालोचक के रूप में जिम्मेदारियों के साथ-साथ हास्यपूर्ण ढंग से उन खतरों की भी चर्चा करते आचार्य दिखाई पड़ते हैं, जिनका समालोचक को अपनी समीक्षा लिखते हुए सामना करना पड़ता है। निबंध के आरंभ से ही वे पाठक को भाषायी वैभव से गुदगुदाना आरंभ कर देते हैं। वे लिखते हैं, "समालोचक लिफाफा देखकर खत का मजमून भांपने लगता है। लाल और नीले रेशमी फीतों से बंधे हुए पैकेट में किसी युवक कवि की प्रेम-कथा बंधी हुई है। उसकी कल्पना-जगत की प्रेयसी निश्चय ही अप-टू-डेट फैशन की परिपाटीविहित सज्जा से सज्जित होगी, उसका मुख चांद-सा गोल और आंखें आम की फांक-सी बड़ी होंगी। काजल वह जरूर लगाती होगी, केश में एकाध फूल निश्चय ही रहते होंगे। - वे काल्पनिक रजनीगंधा के भी हो सकते हैं, जूही-चमेली के भी हो सकते हैं - और पुस्तक का

शिरोभाग जो साफ खुला हुआ दिख रहा है और उस सुंदर बंधाई के भीतर से लापरवाही से फटे हुए जो पन्ने दीख रहे हैं, वे इस बात के सबूत हैं कि उस कल्पित प्रेयसी के गुलाबी कपोलों पर उसके अस्त-व्यस्त चिकुर भी हिल रहे होंगे। कवि के प्रेम में उतावलापन नहीं है, धीरता से भरी हुई व्याकुलता है - यह बात तो सारा पैकेट ही कह रहा है।" तो इस शैली में निबंधकार अपनी बात आरम्भ करता है, जिसके शब्द-शब्द से हास्य की एक स्मित रेखा प्रकट होती दिखाई देती है।

इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' के काव्य-संग्रह 'मधूलिका', गिरीश जी के काव्य-संग्रह 'मंदार', भगवतीचरण वर्मा के 'प्रेम-संगीत', देवराज के 'प्रणय गीत', डॉ. नगेंद्र के 'वनमाला', उपेंद्रनाथ अश्क के 'प्रात-प्रदीप', आर.सी. प्रसाद सिंह का 'कलापी', होमवती देवी का 'अर्ध' आदि काव्य संग्रहों की चर्चा की है। यह चर्चा करते हुए निरंतर उनकी गंभीरता से कही जाने वाली बातें भी हास्य के पुट से मुक्त नहीं हो सकी हैं। दरअसल विषय का चयन करना कवि का अधिकार है। उसकी अपनी रुचि स्वाभाविक ढंग से किस ओर है, वह अपनी रचना किस विषय पर करना चाहता है, इस पर कोई बंधन नहीं हो सकता। परंतु निबंध पढ़ते हुए यह बार-बार प्रतीत होता है कि निबंधकार अपने सामयिक परिवेश को लेकर चिंतायुक्त है। ऐसा लगता है जैसे वह अपने समय के कवियों से यह कहना चाहता है कि अभी प्रेमदान करने का समय नहीं है। हमारे समय की समस्याएं और प्रश्न, गंभीर सामाजिक समस्याओं से जुड़े हुए प्रश्न हैं। अपनी कलम को उस ओर मोड़ देना हमारा सामाजिक दायित्व है। निबंध के अंत में लेखक अपने इस मंतव्य को स्पष्ट करता भी दिखाई देता है।

अपनी सामयिक चिंताओं को महसूस करते हुए भी निबंधकार इन प्रेम-काव्यों और कवियों के बारे में जो टिप्पणियां करता है, वे बड़ी सार्थक और अर्थवान टिप्पणियाँ हैं, जिनसे उन कवियों की विशेषताओं का पता चलता है। 'मधूलिका' और 'मंदार' के कवियों पर टिप्पणी करते हुए निबंधकार लिखता है, "मधूलिका' और 'मंदार' दोनों ही प्रेम-काव्य हैं। दोनों ही कल्पना के खेत में उपजे हैं; पर दोनों में एक मौलिक अंतर है। मधूलिका के कवि की इच्छा केवल प्रेमी बनने की है; पर मंदार का कवि प्रेमी भी बनना चाहता है और प्रिय भी। इसीलिए एक प्रेम-पात्र की ओर से लापरवाह होने के कारण अबाध भाव से अपना गान गाए जाता है, उसे अपनी मस्ती का ही भरोसा है, सुनने वाले ने सुन लिया तो ठीक है, न सुना तो उसी का नुकसान है।..... पर मंदार का कवि केवल लालसा की धारा में बह जाना नहीं चाहता। वह प्रतिदान भी चाहता है।" यह ऐसी टिप्पणियां करते हुए वे काव्य-संग्रह से उदाहरण भी देते चलते हैं। इसी तरह भगवतीचरण वर्मा और उनके काव्य-संग्रह 'प्रेम-संगीत' पर टिप्पणी करते हुए वे कहते हैं, "प्रेम-संगीत के कवि की मस्ती सचमुच की मस्ती है। वह दुनिया के किसी पदार्थ को स्थिर नहीं मानता, प्रेम को भी नहीं, घृणा को भी नहीं। इस क्षणभंगुरता के अटूट प्रवाह में वह केवल एक वस्तु को स्थिर समझता है - जैसे नदी की प्रत्येक चंचल बूंद के भीतर से उसका प्रवाह अव्याहत रहता है, उसी प्रकार। यह वस्तु जीवन नहीं है, जैसा कि वह समझना चाहता है। यह वस्तु है उसका अपना व्यक्तित्व। अनंत प्रवाह के भीतर बहती हुई भी उसकी सत्ता शाश्वत है। प्रेम-पात्र आते हैं और चले जाते हैं, कुछ हंस जाते हैं, कुछ हंसा जाते हैं। कुछ रो जाते हैं, कुछ रुला जाते हैं, और मस्त व्यक्तित्व आगे बढ़ता है।..... इसी को वह जीवन कहता है।" आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की इस तरह की टिप्पणियां

निबंध के हास्यपरक प्रवृत्ति के चलते व्यंग की तरह लेना ठीक नहीं होगा। यह अत्यंत गुरु-गंभीर टिप्पणियां हैं, जिनसे उन कवियों के काव्य व्यक्तित्व का पता चलता है।

इसी तरह की सार्थक टिप्पणियां आचार्य जी ने डॉ. नगेंद्र, उपेंद्रनाथ अश्क और आरसीप्रसाद सिंह के बारे में भी की हैं, जिनमें उनके कवि व्यक्तित्व का अंकन दिखाई देता है। डॉ. नगेंद्र पर की गई उनकी टिप्पणी अत्यंत सार्थक टिप्पणी है, जिसमें आचार्य द्विवेदी की सूक्ष्म-दृष्टि और गहन विश्लेषण देखने को मिलता है। वे लिखते हैं, "वनमाला का कवि निराला प्रेमी है। प्रेम उसकी दृष्टि है, दृष्टव्य भी नहीं, दृष्टा भी नहीं। इसीलिए उसकी दृष्टि संसार को इतना कोमल, इतना मंजुल देख सकी है। पर शायद कवि को अभी टकराना बाकी है। कहते हैं, प्रेम अंधा होता है। वनमाला के कवि का प्रेम अंधा नहीं है, पर श्री नगेंद्र की तरह वह 'क्रिटिक' नहीं है, इतना तो निश्चित है। संसार की युद्धस्थल की कल्पना करके क्रिटिक लोग जिस मतवाद-महासमर का मजा लिया करते हैं, वह वनमाला में स्पष्ट नहीं हुआ है। कवि जितना ही सामंजस्यप्रवण होता है, क्रिटिक उतना ही विश्लेषणप्रवण। नगेन्द्र दोनों हैं।" इस तरह अपनी इस टिप्पणी में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने डॉ. नगेंद्र के कवि और आलोचक व्यक्तित्व का सार्थक अंकन किया है। डॉ. नगेंद्र की दो अलग-अलग सृजनात्मक क्षमताओं का यह सार्थक विश्लेषण है।

'समालोचक की डाक' निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने प्रेम-काव्य-संग्रहों के बहाने इसी तरह की टिप्पणियों से उपेंद्रनाथ अश्क, आरसी प्रसाद सिंह और होमवती देवी - इन सभी का विश्लेषण किया है। निबंधकार जब इस तरह की टिप्पणियां लिखता है तो उसका समीक्षक रूप प्रभावशाली ढंग से दिखाई देता है। वहीं दूसरी तरफ निबंध के अन्य हिस्सों में उनका स्वत:स्फूर्त हास्य से परिपूर्ण व्यक्तित्व देखने को मिलता है। जैसा कि पूर्व में ही कह चुके हैं कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की आस्थाएँ सामाजिक दायित्व की ओर अधिक थीं। ऐसे में प्रेम-व्यंजना से परिपूर्ण काव्य और वह भी लगभग ज्यादातर कवियों के द्वारा लिखा जाना और फिर समीक्षा के लिए उन तक भेजा जाना, उन्हें एक बोझिल कार्य की तरह लगने लगा। इसी बात से व्यथित होकर वे व्यंग्यपूर्ण ढंग से लिखते हैं कि, "प्रेम का यह बीहड़ अब भी पार नहीं हुआ। 'मधूलिका' के अपरिग्रहेत्सु प्रेमी, 'मंदार' के प्रिय बनने में सयत्न प्रेमिक, 'वनबाला' के प्रेम की आंखों से देखने वाले प्रेमिक, 'प्रात प्रदीप' के अनुभवी और लापरवाह प्रेमिक, 'कलापी' के अज्ञात लोक के मादक और अज्ञेय प्रेमिक और 'अर्ध' के शांताकांक्ष प्रेमिक की चर्चा करने के बाद कोई समालोचक विराम ग्रहण करने की सोच सकता है। केवल प्रेम की बातों का कोई कहां तक विवेचन करे। प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्थिति के अनुसार प्रेम का दांव-पेच बदलता रहता है। समालोचक विश्लेषण करके कहां तक सिर खपावे।" उनके इस कथन से सहज ही हम यह अंदाजा लगा सकते हैं कि यह उनके लिए कितना बोझिल हो चुका था। सही मायनों में वे ऐसे काव्य की अप्रासंगिकता को समझ रहे थे।

दरअसल अपने युगीन संदर्भों से टकराना हर लेखक का धर्म और दायित्व है। अपने समय से आंखें चुराकर कभी भी बड़ा साहित्यकार-कवि-लेखक नहीं बना जा सकता। प्रेम और वह भी व्यक्तिगत प्रेम, कभी भी उदात्त भावनाओं का वाहक नहीं हो सकता। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की आस्था सामाजिक प्रश्नों को हल करने में थी। अपने समय के साहित्यिक वातावरण की इस दशा के बावजूद हम जानते हैं कि वे आशावाद से परिपूर्ण लेखक हैं।

विपरीत से विपरीत स्थितियों में भी वे अपने आशावाद की लौ धीमी नहीं पड़ने देते हैं। यह हमें उनके कई निबंधों में देखने को मिलता है। इस निबंध में भी वे इसी आशा के साथ प्रस्थान करते हैं। नए कवियों की भावनापरक विवशता को समझते भी हैं। इसीलिए लिखते हैं कि, "प्रेम का बीहड़ ! ठीक है, प्रेम के ये काव्य अनन्त शक्ति के प्रतीक हैं, जिसे मानव अपनी युवावस्था में संचित कर रहा है। प्रौढ़ होते ही जवानी का यह खेल काम में, कल्पना बुद्धि में, कला उद्योग में, आशावाद समत्ववाद में, साहस दूरदर्शिता में, उद्दंडता मर्यादा में बदल जाएंगे - यह निश्चित है। ऐसा ही होता है। जहां ऐसा नहीं होता, वहीं सोचने की बात है।" इस तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इसी आशावाद के साथ कि युवावस्था का भावनात्मक ज्वार जब विराम ले लेगा, तब नए कवि और लेखक जीवन और समाज के अनुभवों से प्रेरित होकर अपने सामाजिक दायित्वों को समझते हुए, रचना के प्रारूप को बदलेंगे। उनकी संवेदना में परिवर्तन होगा। जीवन के कठोर धरातल से टकराकर उनकी संवेदना बदलेगी।

१०.१.२.२ 'समालोचक की डाक' निबन्ध का प्रतिपाद्य:

'समालोचक की डाक' निबंध आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का व्यंग्यपूर्ण निबंध है। इस निबंध में उन्होंने अपने समय के साहित्य की प्रवृत्तियों की चर्चा करते हुए उसका मूल्यांकन किया है। इस निबंध को पढ़ते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की रचनात्मक प्रतिबद्धताओं का परिचय भी मिलता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को एक उदार परंपरावादी बौद्धिक, इतिहास-प्रेमी, संस्कृति-ज्ञाता और सही अर्थों में मानवतावादी के रूप में जाना जाता है। उनके निबंध अलग-अलग प्रसंगों में इन्हीं प्रवृत्तियों को दर्शाते दिखाई देते हैं। उनकी साहित्यिक प्रतिबद्धताएँ स्पष्ट रूप से इस निबंध में उनकी सामाजिक सोच को दर्शाती हैं, समाज के प्रति उनकी आस्थाओं को दर्शाती हैं।

यह निबंध इस तथ्य का स्पष्ट रूप से विश्लेषित करता दिखाई देता है कि साहित्य का वास्तविक उद्देश्य क्या है ? आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अन्य निबंधों और समीक्षाओं में यह बात भली-भांति स्पष्ट है कि साहित्य का अंतिम उद्देश्य है - लोक कल्याण और इन्हीं अर्थों में वे साहित्य में संवेदना के प्रवेश को उचित या अनुचित समझते हैं। हिंदी कविता के इतिहास में छायावाद के अंतिम चरण एवं उत्तर छायावादी युग में कविता में व्यक्तिगत संवेदना के अभिव्यक्त करने का चलन तेजी से बढ़ा। इसमें भी प्रेम की पृष्ठभूमि पर कविता लिखने की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ी क्योंकि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी आरंभ से ही एक समीक्षक के रूप में समाप्त हो चुके थे। अतः इन कवियों की यह लालसा होती थी कि कोई बड़ा समीक्षाक या आलोचक उनकी कविता की समीक्षा करे। वह समीक्षा पत्र-पत्रिकाओं में छपती है, जिससे उन्हें भी आदर - सम्मान का संतोष प्राप्त हो सके। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी सृजनात्मकता का मान रखते हुए ऐसी समीक्षाएं लिख भी देते रहे होंगे, पर उन्हें अपने इस कृत्य से संतोष नहीं प्राप्त होता था। कहीं न कहीं वैयक्तिक प्रेम की अभिव्यक्ति को वे साहित्य में सम्मानपूर्ण दृष्टि से नहीं देखते थे। इसीलिए इस निबंध में उन्होंने एक विवश-विद्रोह भी दर्शाया है।

आचार्य द्विवेदी जीवन के वृहत्तर जगत को साहित्य के अंतर्गत रूपायित होते देखना चाहते थे। ऐसे साहित्य को पढ़ना, उसका मूल्यांकन करना, इसमें उनकी रूचि बैठती थी। नए या

पुराने कवियों के आग्रह को टाल न सकने की स्थिति में वे प्रेमाभिव्यक्तिपरक काव्य की समीक्षाएं लिख तो देते थे, परंतु उन्हें लगता था कि साहित्यकारों को अपने सामाजिक दायित्व को समझना चाहिए। अपने युगीन सामाजिक - राजनीतिक प्रश्नों को देखना चाहिए। साहित्य का उद्देश्य यदि मानव-कल्याण है तो उन्हें साहित्य की रचना में ऐसे विषयों का चयन करना चाहिए, जिनसे समाज और मानवता को अपने अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तर मिल सके। इसीलिए वे वैयक्तिक भावनाओं की अभिव्यक्ति करने वाले काव्य की रचना को विनम्रतापूर्वक हतोत्साहित करने का प्रयास करते हैं और इन कवियों की प्रतिभा को सही दिशा और दृष्टि देने की शुभकामना व्यक्त करते हैं। यह निबंध साहित्य के उद्देश्यों को सही अर्थों में हमारे सामने प्रकट करता है।

१०.१.३ सारांश

प्रस्तुत निबंध में आ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने हास्य-बोध को स्पष्ट किया है। इस व्यंगपूर्ण निबंध में अपने समय के साहित्य की प्रवृत्तियों की चर्चा की है। और इसमें रचनात्मक प्रतिबद्धताओं का परिचय भी मिलता है।

१०.१.४ उदाहरण-व्याख्या

व्याख्या अंश (१):

प्रेम का बीहड़ ! ठीक है, प्रेम के ये काव्य अनन्त शक्ति के प्रतीक हैं, जिसे मानव अपनी युवावस्था में संचित कर रहा है। प्रौढ़ होते ही जवानी का यह खेल काम में कल्पना बुद्धि में कला उद्योग में, आशावाद समत्ववाद में, साहस दूरदर्शिता में उद्दंडता मर्यादा में बदल जाएंगे - यह निश्चित है। ऐसा ही होता है। जहां ऐसा नहीं होता, वहीं सोचने की बात है। 'मधूलिका', 'मंदार' और 'कलापी' में जो खेल है, जो कल्पना है, जो वाग्मिता है; 'प्रणय गीत' में जो चिंतनात्मक आशावाद है; 'वनबाला' में जो मंजुल कल्पना है; 'प्रात प्रदीप' में जो साहस और स्पष्टता है, वह दुर्दमनीय युवाशक्ति का परिचायक है। वे भविष्य में केवल कल्पना के शून्य में नहीं घूम सकेंगे। जब वे धरती पर जमकर खड़े होंगे, जब वे समाज की समस्याओं के आमने - सामने खड़े होंगे, तो समालोचक को कुछ भी पछताना नहीं पड़ेगा।

संदर्भ: प्रस्तुत अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह के निबंध 'कल्पलता' समालोचक की डाक' से उद्धृत है।

प्रसंग: उक्त में" निबंधकार साहित्य की प्रवृत्तियों की प्रासंगिकता पर अपनी बात कह रहे हैं प्रेम की अभिव्यक्ति सामाजिक यथार्थ का चित्रण आदि साहित्य प्रवृत्तियों में कौन सी प्रवृत्ति प्रासंगिक है और कौन सी अप्रासंगिक इस संदर्भ में विचार पूर्ण ढंग से निबंधकार अपनी बात रख रहे हैं

व्याख्या: समालोचक की डाक निबंध हास्यपरक शैली में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया रोचक निबंध है। इस निबंध की शैली हास्यपरक अवश्य है परंतु निबंधकार ने इस संदर्भ में अत्यंत गंभीर विषय पर चिंतन किया है। वास्तव में तत्कालीन समय के उत्तर-छायावादी युग में प्रेम और मस्ती के काव्य की एक लहर सी चल पड़ी थी और बहुत

से कवि प्रेम की अलग-अलग व्यंजनाएँ अपने काव्य संग्रहों में प्रस्तुत कर रहे थे। आधुनिक साहित्य गहरे सामाजिक सरोकारों से संबंधित साहित्य है। उसी समय प्रगतिशील काव्य सामाजिक पक्षधरता को लेकर अलग तरह से सामाजिक यथार्थ को सबके सामने रख रहा था।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्वयं सामाजिक प्रतिबद्धता से जुड़े रचनाकार हैं। उन्होंने अपने निबंधों में व्यापक मानवीय सरोकारों को पाठकों के सामने रखा है। इस निबंध में उन्होंने अपने समय के कई प्रेम - प्रवृत्ति मूलक काव्य-संग्रहों की चर्चा करते हुए इस बात पर क्षोभ प्रकट किया है कि प्रेम की कितनी तरह की व्यंजनाएं की जाएंगी और इन पर कितनी समीक्षा लिखी जाएगी ? कविता की सार्थकता, प्रेम की अभिव्यक्ति से कहीं ज्यादा अपने समय के यथार्थ की अभिव्यक्ति में है। कवियों को सामाजिक यथार्थ को अपनी कविता का विषय बनाना चाहिए, जिससे कविता लोक कल्याण का एक महत्वपूर्ण उपकरण बनकर समाज सेवा का कार्य कर सके। इस अवतरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी आशावादी स्वर में यह उम्मीद व्यक्त कर रहे हैं कि युवा-मन प्रेम की अभिव्यक्ति से जब थक जाएगा, अनुभव उसे कुछ परिपक्व बनाएगा, तब यह कवि अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को समझेंगे और इनकी कविता का स्वर बदल जाएगा।

विशेष:

१. निबंधकार ने प्रेम-प्रवृत्ति मूलक काव्य की व्यर्थता को चिन्हित किया है।

२. निबंधकार ने कवि के उत्तरदायित्व को गहरे सामाजिक सरोकारों से जोड़ कर दिखाया है।

१०.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. "अश्क की रचनाओं में आंसू की बूंदों में भी वाणी आ गई है।" यह किसका कथन है ?

(क) रामकुमार वर्मा (ख) गिरीश

(ग) हजारीप्रसाद द्विवेदी (घ) होमवती देवी

२. 'प्रात प्रदीप' निम्न में से किसका काव्य-संग्रह है ?

(क) गिरीश (ख) आरसी प्रसाद

(ग) उपेंद्रनाथ अश्क (घ) डॉ. नगेन्द्र

३. 'वनबाला' का कवि किस कवि का प्रेमी है ?

(क) अंचल (ख) निराला

(ग) गिरीश (घ) हेमवती देवी

munotes.in

४. निम्न में से कौन सा काव्य-संग्रह रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' के द्वारा रचा गया है ?

(क) प्रणय गीत (ख) कलापी

(ग) मंदार (घ) मधूलिका

१०.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) 'मधूलिका' और 'मंदार' काव्य में क्या अंतर है ?

२) डॉ नगेंद्र की काव्य विशेषताएँ।

३) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपेंद्रनाथ अश्क के संबंध में क्या कहा है ?

१०.१.७ बोध प्रश्न

१) 'समालोचक' की डाक निबंध के माध्यम से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने क्या संदेश प्रेषित करने का प्रयास किया है

२) 'समालोचक की डाक' निबंध की विषयवस्तु का विश्लेषण कीजिए ?

३) 'समालोचक की डाक' निबंध के आधार पर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के चिंतन का मूल्यांकन कीजिए ?

१०.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

११

निबन्ध : महिलाओं की लिखी कहानियाँ

इकाई की रूपरेखा

११.० इकाई का उद्देश्य

११.१ प्रस्तावना

११.२ निबन्ध : महिलाओं की लिखी कहानियाँ

 ११.२.१ महिलाओं की लिखी कहानियाँ निबन्ध की अन्तर्वस्तु

 ११.२.२ महिलाओं की लिखी कहानियाँ निबन्ध का प्रतिपाद्य

११.३ सारांश

११.४ उदाहरण-व्याख्या

११.५ वैकल्पिक प्रश्न

११.६ लघुत्तरीय प्रश्न

११.७ बोध प्रश्न

११.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

११.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'महिलाओं की लिखी कहानियां' निबन्ध का वस्तुगत विश्लेषण किया गया है। 'महिलाओं की लिखी कहानियां' तत्कालीन समय की महिला लेखिकाओं की कहानियों का वस्तुगत मूल्यांकन है एवं इसमें लेखिकाओं के दूरगामी उद्देश्यों की भी जांच-पड़ताल निबंधकार के द्वारा की गई है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी बहुविषयी लेखक के रूप में जाने जाते हैं। उनके निबंधों में उन्होंने जिन भी विषयों को उठाया है, उनविषयों की प्रकृति अत्यंत व्यापक है। देश, समाज, शास्त्र, संस्कृति, इतिहास, समसामयिक प्रश्न आदि सभी कुछ उनके निबंधों में समाविष्ट है। कठिन से कठिन विषय को अत्यंत व्यावहारिक शैली में उन्होंने पाठकों के सामने रखा है।

११.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जटिल क्षमताओं से युक्त सरल साहित्यकार हैं। ऐसे साहित्यकार हिंदी में बहुत ही कम हुए हैं। उनका साहित्य हमारी साहित्यिक विरासत को समृद्धि प्रदान करता है। उनके विषय छोटे से लेकर राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय जगत के व्यापक प्रसारयुक्त परिदृश्य को अपने में समेटे हुए हैं। उन्होंने जिस भी विषय को उठाया है, उसका व्यवस्थित चित्रण किया है। यह चित्रण शैली आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की अपनी तरह की मौलिक शैली है, जिसमें गुरुता, गंभीरता, हास्यपरकता सभी कुछ एक साथ सम्मिलित

mlnotes.in

मिल जाता है। साधारण से साधारण पाठक भी उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए कठिन से कठिन विषय को अत्यंत सहजता से समझ सकता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि अपने समय के हर विषय को आवृत किए रहती थी। इस इकाई में उनके द्वारा लिखा गया निबंध 'महिलाओं की लिखी कहानियां' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि उन्होंने अपने समय में स्त्री-लेखन को कितनी सूक्ष्मदृष्टि से देखा और विश्लेषित किया था। स्त्री-लेखन की सही दिशाएं क्या होनी चाहिए ? उन्होंने अपने निबंध में इसकी भी व्यापक चर्चा की है। यह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की विशेषता है कि वह बोझिल से बोझिल विषय को भी अत्यंत रुचिकर बना देते हैं। पाठक की जिज्ञासा को जगाकर उसमें रुचि उत्पन्न कर देते हैं। फिर पाठक उस विषय में सहज ही संलग्न दिखाई पड़ता है। इन्हीं दृष्टियों से इस इकाई में सम्मिलित निबन्ध का अध्ययन किया गया है।

११.२ निबन्ध : 'महिलाओं की लिखी कहानियाँ'

११.२.१ 'महिलाओं की लिखी कहानियाँ' निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

एक निबंधकार के रूप में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की अपनी रुचियां जितनी इतिहास और संस्कृति से जुड़ती हैं, उससे कम अपने समसामयिक संदर्भों से भी नहीं जुड़ती हैं। उनके व्यक्तित्व में परंपरा बोध के साथ आधुनिकता का अत्यंत उत्कृष्ट समन्वय है। उनकी दूरदर्शी दृष्टि अपने समय के महत्वपूर्ण संदर्भों को पहचानने में सदा सक्षम रही है। युगीन संदर्भों और समस्याओं को अपने निबंधों में उन्होंने जिस ढंग से सामने रखा है उसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि आचार्य द्विवेदी बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार थे। समसामयिक संदर्भों को लेकर उनकी चेतना गजब बलवती थी। सांप्रदायिकता, राजनीति आदि के विविध संदर्भ जिस ढंग से उनके निबंधों में आए हैं, उससे उनकी स्वच्छ धवल दृष्टि और मानवीय मूल्यों के प्रति अगाध आस्था का परिचय मिलता है। समकालीन संदर्भों में महिला लेखन की स्थिति पर भी उन्होंने कुछ इसी दृष्टि से विचार किया है। जैसा कि हम जानते हैं, 'कल्पलता' संग्रह का प्रकाशन सन १९५१-५२ में हुआ था। 'महिलाओं की लिखी कहानियां' निबन्ध इसी संग्रहमें प्रकाशित महत्वपूर्ण निबंध है। हिंदी ने जब व्यापक रूप में स्त्री लेखन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया और हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण अवधारणा के रूप में उभरी, यह इस निबंध की रचना के काफी बाद की घटना है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दूरदर्शिता इसी से भांपी जा सकती है कि उन्होंने अपने इस निबंध में विशुद्ध इसी दृष्टि से कुछ महत्वपूर्ण लेखिकाओं का मूल्यांकन किया है।

समकालीन दौर में हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श जैसे और भी कितने ही विमर्श भाव और विचार-विमर्श की दृष्टि से अपने संदर्भों के प्रति अत्यंत केंद्रीभूत रहे। हिंदी को स्त्री लेखिकाओं के रूप में सन १९७५ के बाद के दौर में मन्नू भंडारी, नासिरा शर्मा, अनामिका, कात्यायनी, प्रभा खेतान, मृदुला गर्ग, मृणाल पांडे, मैत्रेयी पुष्पा जैसी सशक्त लेखिकाएँ मिलीं। इसी प्रकार दलित विमर्श से गहरा सरोकार रखने वाली लेखिकाओं में कौशल्या वैसन्त्री, सुशीला टाकभौरे जैसी महत्वपूर्ण साहित्यकार भी आयीं और अपनी विशिष्ट पहचान बनायी। इनमें से कई लेखिकाएँ ऐसी हैं जिनकी दृष्टि कुछ आक्रामक है, और कुछ की दृष्टि बेहद संतुलित है। निबंध 'महिलाओं पर लिखी कहानियां'

क्योंकि महिला लेखिकाओं पर केंद्रित है अतः इन्हीं संदर्भों में आगे की चर्चा होगी । इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने तत्कालीन महिला लेखिकाओं के रचना कर्म को आधार बनाया है और अत्यंत संतुलित दृष्टि से उनके सृजन कर्म का मूल्यांकन किया है। और इस क्रम में अपनी मेधा के अनुसार उन्होंने इस रचना कर्म का उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन किया है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का विश्वास समायोजन की प्रवृत्ति पर है। वह अपने निबंध की शुरुआत इस मान्यता के खंडन से करते हैं कि एक स्त्री को स्त्री ही ठीक से समझ सकती है और स्त्री संवेदना को वही ठीक से अभिव्यक्त भी कर सकती है। हिंदी साहित्य ही नहीं वरन समस्त वैश्विक साहित्य में जहां-जहां स्त्री विमर्श की प्रक्रिया जारी है, वहां यह धारणा मूल धारणा के रूप में स्थापित है कि एक स्त्री ही स्त्री को ठीक से समझ और अभिव्यक्त कर सकती है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस स्थापित धारणा के प्रति अपना समर्थन नहीं देते। उनका मानना है कि, "यह विचार कि स्त्री ही स्त्री को समझ सकती है और पुरुष स्त्री को नहीं समझ सकता, किसी बहके दिमाग की कल्पनामात्र है। वस्तु स्थिति कुछ और है। उसका कारण पुरुष और स्त्री के सहयोग के विकास से समझा जा सकता है।" इस तरह स्त्री संदर्भों को अन्य सामाजिक संदर्भों से अलग करके देखना वे ठीक नहीं समझते। यह सृष्टि स्त्री और पुरुष के संतुलित दृष्टिकोण और समायोजन पर आधारित है और इसी प्रक्रिया को वे समग्र संदर्भों के अनुरूप देखना पसंद करते हैं।

इस निबंध में स्त्री लेखिकाओं पर चर्चा करने के पूर्व वे इस अवधारणा की पृष्ठभूमि और सिद्धांत पर भी कुछ विचार रखते हैं। सृष्टि के विकास में स्त्रियों के महत्व की वास्तविकता को समझते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी इस बात की चर्चा करते हैं कि संभवतः सभ्यता का आरंभ स्त्री ने किया था। मनुष्य का यायावर जीवन समाप्त करने में उसकी बड़ी भूमिका थी। उसी ने पुरुषों को बंधन में बांधकर सामाजिक जीवन आरंभ किया। झोपड़ी उसने बनाई, अग्नि का आविष्कार भी उसने किया, कृषि आरंभ भी उसने किया और इस क्रम में स्त्री पुरुष को गृह की ओर खींचने का प्रयत्न करती रही और पुरुष बंधन तोड़कर भागने का प्रयत्न करता रहा। इसी अनुरूप सृष्टि चलती रही। इसी क्रम में स्त्री का स्वरूप रहस्य आवृत होता गया। आधुनिक काल का आरंभ औद्योगिक और व्यावसायिक क्रांति से हुआ। कृषि-मूलक सभ्यता पिछड़ती चली गई। भारी सामाजिक परिवर्तन दिखाई दिए। परिवार और वर्ग की भावना पिछड़ने लगी। नगर बढ़ने लगे और व्यक्तिवाद की प्रवृत्ति जोर मारने लगी। इन परिस्थितियों में सब कुछ अनावृत होने लगा। स्त्री भी इसका अपवाद नहीं रही। अपने रहस्यावरण को हटाने के लिए स्वयं स्त्री आगे बढ़ी और इस क्रम में जहां एक तरफ पुरुषों ने स्त्रियों को समझने का प्रयास किया वहीं दूसरी तरफ स्त्री ने भी अपने को अनावृत कर पुरुषों को सहयोग किया और इन सब स्थितियों का असर साहित्य और संस्कृति पर स्पष्ट रूप से दिखाई दिया। स्त्री विमर्श की पृष्ठभूमि में यह समस्त स्थितियां अपनी तरह से योगदान करती हैं।

इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने पृष्ठभूमि की चर्चा करते हुए स्त्रियों के महती योगदान पर भी प्रकाश डाला है। सृष्टि के लिए उनका योगदान कितना संबंध हितकारी रहा है। इसे उनके इस कथन से समझा जा सकता है, "पुरुष लेखक में जब वैयक्तिकता का जोर पूरी मात्रा में होता है तब वह दूसरी प्रवृत्ति को बुरी तरह मसल देता है पर स्त्री सदा संयत

रही है। स्त्री-साहित्य का सबसे बड़ा दान आधुनिक साहित्य में यही है। उसने वैयक्तिकता के मुंहजोर घोड़े को सामाजिकता की कठोर लगाम से संयत किया है।"आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, स्त्री जीवन की समस्याओं पर भी एक नवीन दृष्टि रखते हैं। उनके अनुसार स्त्री साहित्यकारों के द्वाराचित्रित स्त्री जीवन का दुख, हताशा और निराशा यह सभी कुछ उनके अपने कारणों से संभव नहीं है बल्कि उसकी स्थिति का कारण वाह्य कारक हैं। इन वाह्य कारकों में महत्वपूर्ण ढंग से हमारी अपनी सामाजिक व्यवस्था है, जिसने स्त्री के द्वारा सृजित समस्त व्यवस्था को न केवल हस्तगत कर लिया बल्कि उसे दासी मात्र बना कर छोड़ दिया। इसीलिए उनका मानना है कि यदि लेखिकाओं की कल्पना किसी और सामाजिक व्यवस्था का सर्जन कर सके तो निश्चित है कि स्त्री पात्र कभी दुखी नहीं होंगे। इस तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी उन संदर्भों की पृष्ठभूमि पर बात करने के पश्चात तत्कालीन समय की कुछ लेखिकाओं की कहानियों का मूल्यांकन करने की ओर प्रवृत्त होते हैं।

तत्कालीन स्त्री-लेखिकाओं के लेखन पर दृष्टिपात करने के क्रम में वे शिवरानी देवी, सुभद्रा देवी, कमला देवी एवं होमवती देवी की कहानियों पर अपना विश्लेषण देते हुए अपनी बात कहते हैं। अपने अध्ययन का आधार उन्होंने सुभद्रा देवी के 'बिखरे मोती', शिवरानी देवी की 'कौमुदी', कमला देवी के 'पिकनिक' और होमवती देवी के 'निसर्ग' कहानी-संग्रहों को आधार रूप में सामने रखा है। सभी लेखिकाओं में वे शिवरानी देवी के लेखन को बेहद संतुलित लेखन के रूप में स्वीकार करते हैं। सुभद्रा देवी की कहानियों को केंद्र में रखते हुए वे यह निष्कर्ष निकालते हैं, कि इनकी कहानियों में सास, जेठानी और पति के अत्याचार; स्त्री की पराधीनता, उसे पढ़ने-लिखने एवं दूसरों से बात करने में बाधा आदि बातें ही नाना-भावों और नाना-रूपों में कही गई हैं। और इन सभी कहानियों में चरित्र के भीतरी विकास को ध्यान में उतना नहीं रखा गया जितना कि सामाजिक व परिस्थितियों के चित्रण को महत्व दिया गया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी यह तो मानते हैं कि सुभद्रा देवी ने किताबी ज्ञान के आधार पर या सुनी-सुनायी बातों के आधार पर कहानियां नहीं लिखी बल्कि अपने अनुभवों को ही कहानी में रूपांतरित किया है और उन्होंने समाज व्यवस्था के प्रति एक नकारात्मक घृणा को व्यक्त किया है पर क्या इतने भर से किसी लेखक का दायित्व समाप्त हो जाता है। यहीं आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपनी मंशा दर्ज कराते हुए कहते हैं कि "उनकी कहानियों में समाज व्यवस्था के प्रति एक नकारात्मक घृणा ही व्यंग्य होती है। पाठक यह तो सोचता रहता है कि समाज युवतियों के प्रति कितना निर्णय और कठोर है पर उनके चरित्र में ऐसी भीतरी शक्ति या विद्रोह भावना नहीं पायी जाती है जो समाज की इस निर्दयतापूर्ण व्यवस्था को अस्वीकार कर सके। उनके पाठक-पाठिकाएँ इस कुचक्र से छूटने का कोई रास्ता नहीं पाती।..... सुभद्रा जी के पात्रों की सहज बुद्धि विहार की अपेक्षा परिहार की ओर, जूझने की अपेक्षा भागने की ओर, क्रिया की अपेक्षा निष्क्रियता की ओर अधिक झुकी हुई हैं।" सुभद्रा देवी के लेखन में इस पलायन प्रवृत्ति को आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भली-भांति लक्षित किया और इस पलायन से ही उन्हें गुरेज भी है।

शिवरानी देवी की कहानियों के प्रति निबंधकार थोड़ा आश्वस्त है, क्योंकि वे एक प्रतिरोध भावना से आक्रांत हैं। उनकी कहानियों और पात्रों में संघर्ष क्षमता कहीं अधिक है जो अपेक्षित बदलाव को लाने की दिशा में बढ़ती है। शिवरानी देवी की कहानियां और उनके पात्र परिस्थितियों से समझौता करके पलायन करने वाले या चुप होकर बैठ जाने वाले पात्र

नहीं हैं। वे विकल्पों की तलाश करते हैं, नए रास्ते ढूंढते हैं और बजाए की दुखपूर्ण ढंग से जीवन को नियति के हाथों छोड़ें, वे अपने मार्ग पर आगे बढ़ जाते हैं। अपनी बात को उदाहरण के साथ प्रस्तुत करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि, "आंसू की दो बूंदे' एक टिपिकल उदाहरण है। सुरेश की बेवफाई कनक के विनाश का कारण नहीं हो जाती। वह अपने लिए दूसरा रास्ता खोज निकलती है। वह रास्ता सेवा का है। अगर उसका प्रेम नकारात्मक होता अर्थात उसमें लोभ की जगह है विराग होता, क्रोध के स्थान पर भय का प्रादुर्भाव होता, आश्चर्य की जगह संदेह का उदय होता, सामाजिकता की अपेक्षा एकांत-निष्ठा का प्राबल्य होता। संगमेच्छा की जगह ब्रीड़ा का प्राबल्य होता तो शायद आत्मघातकर लेती। स्पष्ट ही भारतीय स्त्री नामक पदार्थ उसमें कम है। भारतीय स्त्री आदर्श के अनुकूल चरित्र में वही गुण होने चाहिए जो कनक में नहीं पाए जाते। इसलिए कनक भारतीय स्त्री समाज की प्रतिनिधि हो या नहो, उस आधुनिक आदर्श की प्रतिनिधि जरूर है, जो व्यक्ति-स्वाधीनता और सामाजिक-मंगलबोध के सामंजस्य में से अपना रास्ता निकालता है।" इस तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के इस कथन से हम उनकी मंशा को भलीभांति समझ सकते हैं। दरअसल इस संदर्भ में वे किसी भी तरह का यथा स्थितिवाद ठीक नहीं समझते। साहित्य, समय के अनुकूल प्रेरणा देने का काम करता है। साहित्य का धर्म है कि वह जीवन के प्रति कोई राह तो सुझाए ही और यदि वह ऐसा कर पाने में सक्षम नहीं है तो फिर उसका कोई सामाजिक मूल्य भी नहीं है। सुभद्रा देवी की कहानियों में जहां आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को पलायन और पराजय की प्रवृत्ति दिखती है, वहीं शिवरानी देवी की कहानियां उन्हें विद्रोह और संघर्ष की कहानियां दिखाई पड़ती हैं। वस्तुतः किसी भी तरह की पृष्ठभूमि में संघर्ष की भूमिका एक आशावाद को रचती है, जो आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लेखन की महत्वपूर्ण विशेषता है।

लेखिकाओं की चर्चा करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, सुभद्रा देवी एवं शिवरानी देवी का विश्लेषण करने के बाद कमला देवी और होमवती देवी की कहानियों का मूल्यांकन भी प्रस्तुत करते हैं। इन्हें वे सुभद्रा देवी की संवेदना शैली और शिवरानी देवी की संवेदना शैली के बीच की चीज मानते हैं। इनके लेखन की विशेषताओं पर बात करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं, "कमला देवी अपने चरित्रों, उनकी क्रियाओं और उनकी परिणति और जितनी सयत्न हैं उतनी उन रूढ़विधियों की ओर नहीं जो इन चरित्रों, क्रियाओं और परिणतियों का नियमन करती हैं। 'निसर्ग' में होमवती देवी इस ओर अधिक झुकी हैं। इसलिए कमलादेवी में जहां वैयक्तिक स्वाधीनता के प्रति पक्षाघात का स्वर प्रधान हो उठा है वहां होमवती देवी में रूढ़ियों की प्रधानता का स्वर। शायद यही कारण है कि कमलादेवी अपने चरित्रों में अनुभव के द्वारा काट-छांट (विश्लेषण) करती हैं और होमवती देवी कल्पना के द्वारा उन्हें मांसल करने की चेष्टा करती हैं।" इस तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने समय की चार स्त्री-लेखिकाओं की कहानियों का मूल्यांकन अपने इस निबंध में पाठकों के सामने रखा है। कहानियों पर चर्चा करने के बाद वे उन युक्तियों पर भी अपनी बात रखते हैं, जो इन कहानियों के मूल्य को कम या ज्यादा करती है।

इन चारों ही लेखिकाओं में शिवरानी देवी के लेखन और प्रेषणीयता के प्रति लेखक कुछ ज्यादा आश्वस्त है। शिवरानी देवी की कहानियां एक विकल्प उपस्थित करने वाली कहानियां हैं। दरअसल आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी साहित्य को विकल्पहीन स्थिति देने वाला नहीं मानते हैं। साहित्य का सही मायनों में महत्वपूर्ण दायित्व, समाज को, व्यक्ति को

विकल्प के साथ एक रास्ता सुझाता है, उसका मार्गदर्शन करता है। इन अर्थों में अन्य लेखिकाओं की कहानियाँ जहां विकल्पहीन स्थिति में बनी रहती हैं, वही शिवरानी देवी विद्रोह और संघर्ष के द्वारा चरित्रों को नए पथ की ओर ढकेलती दिखाई देती हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं, कि "कौमुदी में मनुष्य के व्यक्तित्व की प्रधानता स्वीकार की गई है। यह व्यक्तित्व परिस्थितियों को आत्मसमर्पण नहीं करता। प्रतिकूल परिस्थितियों में अपना रास्ता निकाल लेता है। काल और समाज के प्रभाव से प्रतिहत नहीं होता। इस प्रकार इस विशेष दृष्टिकोण की प्रबलता के कारण शिवरानी देवी की कहानियों में सामाजिक और पारिवारिक अवस्था के कारण जो लोग जीवन को सदा क्लान्त-क्लिष्ट देखते हैं उनका प्रतिवाद बड़े कौशल से हो गया है।" इन विशेषताओं को चिन्हित करने के अतिरिक्त आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने एक महत्वपूर्ण कमी की ओर भी ध्यान आकर्षित किया है जिसे पुष्ट करते हुए वे लिखते हैं, "आधुनिक सभ्यता का सर्वाधिक कठोर वज्रपात स्त्री पर हुआ है। उसने स्त्री को न केवल स्थानच्युत किया है, उसको केंद्र से दूर फेंक दिया है बल्कि उसमें विकट मानसिक द्वंद्व भी ला दिया है। हमारी आलोच्य कहानियों में केंद्रच्युति की ओर से कोई शिकायत नहीं की गई है, स्पष्ट ही हमारी देवियों ने इस महान अनर्थ को महसूस नहीं किया है।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने इस निबंध में स्त्री लेखन के भटके हुए सरोकारों को सार्थक दिशा देने का प्रयास किया है। इस मूल्यांकन में उन्होंने उन विसंगतियों पर बात की है, जिसके कारण स्त्री-लेखन एक लीक का शिकार होता जा रहा है। उसे इस मार्ग से निकालकर सार्थक दिशा की ओर धकेलना होगा, इसका विश्लेषण भी वे अपने इस निबंध में करते हैं। उनका मानना है कि सही मायनों में स्त्री जो कि इस बंधनयुक्त समाज की जन्मदाता है - ने समाज निर्माण कर इसकी लगाम पुरुषों के हाथ में दे दी और उसे इस समाज के विधायक के रुप में स्वीकार कर लिया। परंतु आत्मकेंद्रित पुरुष निरंतर शक्तिपूजा में लीन रहा। वह समय के साथ स्त्री-जाति को दबाता रहा और जिस समाज का निर्माण स्त्री ने ही किया था, उसी समाज के मकड़जाल में वह निरंतर उसे जकड़ता चला गया। इस स्थिति में स्त्री एक द्वंद्व का शिकार होती चली गयी। एक तरफ वह इस मकड़जाल से मुक्त भी होना चाहती है और दूसरी तरफ वह समाज को टूटने भी नहीं देना चाहती। इन स्थितियों में स्त्री की अपेक्षाएं यह हैं कि वह वर्तमान परिस्थितियों के साथ समाज का सामंजस्य चाहती है, इस मकड़जाल को तोड़ना चाहती है। वह इस समाज को एक नए रूप में ढलते हुए देखना चाहती है। जो स्त्री की महत्वाकांक्षा का विरोधी न हो। इस संवेदना को निबंधकार अपने समय की स्त्री लेखिकाओं के लेखन में नहीं देख पाता, जिससे उसे निराशा होती है। अतः आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मानना है कि स्त्री लेखिकाओं के लेखन के द्वारा इसी संवेदना को आगे बढ़ाने की जरूरत है। इसी में स्त्री-लेखन की सार्थकता है।

११.२.२ महिलाओं की लिखी कहानियाँ निबन्ध का प्रतिपाद्य:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंधकार रूप जितना मौजीला है, उतना ही गंभीर भी है। उनके निबंध लेखन में एक साथ ही कई प्रवृत्तियों का घालमेल देखने को मिलता है। भले ही हास-परिहास के मूड में हों परंतु गंभीर विषयों पर लेखन के दौरान उनकी सहज बुद्धि जिस मार्ग की ओर बढ़ती है, वहसचमुच अनंतिम होता है। निबंध 'महिलाओं की लिखी कहानियां' आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखा गया ऐसा निबंध है, जिसमें वे निबंधकार के

साथ-साथ अपने समय के उत्तरदायित्व को निभाने वाले एक समीक्षककेरूपमें भी दिखाई देते हैं। इस निबंध में उन्होंने अपने समय के स्त्री लेखन और उसके सरोकारों पर दृष्टि डालते हुए न केवल संवेदनात्मक दृष्टि से इनका मूल्यांकन किया है बल्कि लेखन में दिख रही विसंगतियों की ओर भी ध्यान आकर्षित करते हुए नए विकल्प भी लेखिकाओं के सामने रखे हैं। जिससे स्त्री-लेखन और सार्थक तथा व्यापक बन सके।

अपने समय की चार लेखिकाओं के लेखन को उन्होंने अपने इस निबंध की सामग्री बनाया है। शिवरानी देवी, कमला देवी, सुभद्रा देवी और होमवती देवी उनके समय की चार महत्वपूर्ण कथा-लेखिकाएँ हैं । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लिए साहित्य का अंतिम उद्देश्य है - समाज को सुंदर बनाना। समाज में जो कुछ भी असंगत और कुरूप है, उसे ठीक किया जा सकता है, ऐसी उनकी धारणा है। समाज को नष्ट करना या सदियों में विकसित हुई विधियों को तिलांजलि दे देना, वे ठीक नहीं समझते । रोग को ठीक करना उनकी दृष्टि में सही तरीका है बजाय के रोगी को नष्ट करना। इसी दृष्टि से उन्होंने इन कहानीकारों की संवेदना का मूल्यांकन किया है। शिवरानी देवी के अतिरिक्त अन्य सभी कथा-लेखिकाएँ दुखपूर्ण संवेदना का चित्रण करती हैं और कोई भी मार्ग विधि-निषेध के रास्ते ही सुझा पाती हैं। उनके पात्र संघर्षशील पात्र नहीं है । या तो स्वयं पर घात करते हैं, या पलायन करते हैं। पर उन चरित्रों में इतनी शक्ति नहीं है कि वे संघर्ष के माध्यम से स्थितियों को अपने पक्ष में कर लें। पलायन का साहित्य अंततः पलायन की ही प्रेरणा देगा, ऐसा उनका मानना है। इसीलिए वे शिवरानी देवी के कथा-लेखन को उस समय की कथा लेखिकाओं में सर्वाधिक उपयुक्त मानते हैं।

शिवरानी देवी के कथा-संग्रह 'कौमुदी' को उन्होंने अपने मूल्यांकन में स्थान दिया है। कौमुदी के चरित्रों पर लिखते हुए निबंधकार कहता है, "कौमुदी में मनुष्य के व्यक्तित्व की प्रधानता स्वीकार की गई है। यह व्यक्तित्व परिस्थितियों को आत्मसमर्पण नहीं करता, प्रतिकूल परिस्थितियों में अपना रास्ता निकाल लेता है, काल और समाज के प्रभाव से प्रतिहत नहीं होता। इस प्रकार इस विशेष दृष्टिकोण की प्रबलता के कारण शिवरानी देवी की कहानियों में सामाजिक और पारिवारिक अवस्था के कारण जो लोग जीवन को सदा क्लान्त-क्लिष्ट देखते हैं। उनका प्रतिवाद बड़े कौशल से हो गया है।" इस कथन से सहज अंदाजा लगाया जा सकता है कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी स्त्री-लेखन में किन सरोकारों की तलाश कर रहे थे और इनको वे वहां आवश्यक क्यों समझते थे । साहित्य बदलाव की प्रेरणा देने का काम करता है। साहित्य न तो पलायन की भूमिका उपस्थित करता है और न आत्मघाती। बल्कि साहित्य, संघर्ष के माध्यम से बदलाव की प्रेरणा देने की भूमिका उपस्थित करता है और यह सार्थक बात उन्हें शिवरानी देवी की कहानियों और चरित्रों में दिखाई देती है।

इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने समय के स्त्री लेखन का सूक्ष्म दृष्टि से मूल्यांकन किया है । यह मूल्यांकन आवश्यक भी था । साहित्य केवल भावनाओं के ज्वार का ही नाम नहीं है बल्कि बदलाव की सार्थक भूमिका उपस्थित करना उसका उत्तरदायित्व है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को अपने समय के स्त्री-लेखन में यह विसंगति स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ी, इसीलिए उन्होंने इस निबंध के माध्यम से अपनी बात कही । स्त्री लेखिकाओं को इस भूमिका को समझते हुए ही लेखन को आगे बढ़ाना होगा, तभी सही मायनों में स्त्री अपने अस्मिता-संघर्ष को सफल बना सकेगी।

११.३ सारांश

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत 'महिलाओं की लिखी कहानियाँ' निबंध का विश्लेषण किया गया है। 'महिलाओं की लिखी कहानियाँ' निबंध में जहां तत्कालीन समय के महिला लेखन पर एक सकारात्मक दृष्टि डाली गई है और उसका दूरगामी उद्देश्यों की दृष्टि से मूल्यांकन किया गया है। अपने समय के स्त्री लेखन पर बात करते हुए भी वे इसे केवल संवेदनात्मक वेदना के चित्रण तक ही सीमित नहीं रखना चाहते बल्कि स्त्री लेखन को वे ऐसी साहित्य धारा के रूप में देखना चाहते हैं जो संपूर्ण स्त्री जाति को नए विकल्पों की ओर ले जाने का काम करे। उसे समस्याओं में फंसा हुआ दिखाने के बजाय समस्याओं के प्रति विद्रोह करते हुए दिखाए और यह विरोध केवल अंत तक ही सीमित न हो बल्कि विद्रोह के बाद की सार्थक सृजनात्मक राह भी नजर आए। इस निबंध में उन्होंने इसी ढंग की आशा व्यक्त करते हुए अपने समय की चार महत्वपूर्ण कथा लेखिकाओं- शिवरानी देवी, सुभद्रा देवी, कमला देवी और होमवती देवी की कहानियों का मूल्यांकन किया है।

११.४ उदाहरण-व्याख्या

व्याख्या-अंश (१):

समाज को स्त्री ने जन्म दिया था। दलबद्ध भाव से रहने के प्रति निष्ठा होने के कारण वह उसी (समाज) की अनुचरी हो गयी। पुरुष यहां भी आगे निकल गया। वह समाज से भागना चाहता था। स्त्री ने अपना हक त्यागकर उसे समाज में रखा, उसके हाथ में समाज की नकेल दे दी। पुरुष समाज का विधायक हो गया। इतिहास उलट गया। जमाने के साथ गलतियों की मात्रा बढ़ती गयी; पुरुष अकड़ता गया। स्त्री दबती गयी। आज वह देखती है कि उसी के बुने हुए जाल ने उसे बुरी तरह जकड़ डाला है। वह उसे प्यार भी करती है, वह उससे मुक्त भी होना चाहती है। यही द्वंद्व है। यही तपस्या है। यही विरोधाभास है। वह फिर एक बार इसे अपने हाथों खोलकर फिर से बुनेगी ? उचित तो यही था, पर हमारी देवियां इस विषय में मौन हैं।

संदर्भ: उक्त अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' के निबंध 'महिलाओं की लिखी कहानियां' से लिया गया है।

प्रसंग: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपर्युक्त अवतरण में स्त्री की ऐतिहासिक स्थिति को दर्शित किया है। किस प्रकार से स्त्री समाज की जन्मदाता होकर भी पुरुष वर्चस्व का शिकार होती गई, इसका संकेत यहां पर किया गया है। आज पुनः स्त्री को उसी सृजनात्मकता की आवश्यकता है, जिससे वह अपने अस्तित्व और आत्मसम्मान को प्राप्त कर सके।

व्याख्या: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने युग में हो रहे स्त्री-लेखन को आधार बनाकर निबंध 'महिलाओं की लिखी कहानियां' की रचना की थी। इस निबंध में उन्होंने शिवरानी देवी, सुभद्रा देवी, कमला देवी और होमवती देवी के कहानी-संग्रह को अपने निबंध का आधार बनाया था। उन्होंने इन लेखिकाओं की कहानियों की संवेदना को व्यापक ढंग से देखा और उसकी समीक्षा की। इस अवतरण में उन्होंने जैसे पूरे इतिहास में स्त्री के साथ हुए

व्यवहार को साक्षात कर दिया है। भावपूर्ण ढंग से यह स्वीकार करते हैं कि इस समाज का वास्तविक जन्मदाता स्त्री ही है। स्त्री का मूल स्वभाव है- बांधना और उसने समूह में रहने की इच्छाशक्ति के कारण समाज को जन्म दिया। पुरुष जो कि उच्छृंखल प्रकृति का था और स्वतंत्र रहना उसकी प्रवृत्ति थी, स्त्री ने उसे न केवल समाज के दायरे में बांधने का काम किया बल्कि समाज को व्यवस्थित करने, सहेजने और संभालने की जिम्मेदारी का उत्तरदायित्व पुरुषों को ही सौंप दिया। इस तरह पुरुष ने स्त्री से सामाजिक संगठन दान में पाया। परंतु आगे चलकर यही पुरुष स्त्रियों पर सामाजिक बंधनों की लगाम कसता चला गया। स्त्री समाज को बांधे रहने की आशा में दबती चली गई और समाज को बनाए रखने की जिजीविषा के कारण उसने पुरुष वर्चस्ववादी मानसिकता को अपने स्वाभिमान का दमन करते रहने दिया। हजारों वर्षों की यह मानसिक गुलामी आधुनिक काल में स्वातंत्र्य चेतना के कारण विद्रोह में परिवर्तित हो गई और स्त्री-लेखन का जन्म हुआ, जिसमें स्त्री लेखिकाओं ने अपने-अपने संवेदना बोध के अनुरूप स्त्री के जीवन की विसंगतियों और विडंबनाओं को चित्रित किया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी सहानुभूति की दृष्टि से नहीं वरन बेहद व्यावहारिक दृष्टि से इन कहानियों का मूल्यांकन करते हैं। इन कहानियों को पढ़ते हुए उन्हें बार-बार लगता है कि दुख की विभिन्न स्थितियों के चित्रण के साथ-साथ जोकि, इन कहानियों की प्रमुख संवेदना है, कहानी लेखिकाओं को परिवर्तन की भूमिका प्रस्तुत करने की ओर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। यथास्थिति का वर्णन कर देना मात्र ही उद्देश्यों की पूर्ति संभव नहीं करेगा बल्कि लेखिकाओं को एक विकल्प भी देना होगा। जिस पर समाज सोचने और बदलने को विवश हो। जिस समाज को स्त्री ने एक बार निर्मित किया है, वह दोबारा उसमें परिवर्तन की भूमिका भी उपस्थित कर सकती है। सही मायनों में जब स्त्री लेखिकाएँ ऐसा करेंगी, तभी स्त्री लेखन का वास्तविक उद्देश्य पूरा होगा। इस तरह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी अपने समय के स्त्री लेखन का मूल्यांकन करते हैं और यह अपेक्षा करते हैं कि वह एक परिवर्तनकारी उपकरण के रूप में तब्दील हो। इसी में उसकी सार्थकता है।

विशेष:

१. स्त्री लेखन के मूल सरोकारों पर सार्थक सुझाव दिए हैं।

२. समाज में स्त्री के महत्व को रेखांकित किया है।

व्याख्या: अंश (२):

प्रायः सभी कहानियों में जीवन को समझने का प्रयत्न किया गया है, पर रास्ता सर्वत्र प्रायः एक ही है। यह रास्ता सामाजिक विधि-निषेधों के भीतर से होकर निकाला गया है। प्रत्येक चरित्र की परिणति और प्रत्येक घटना का सूत्रपात किसी सामाजिक विधि-निषेध के भीतर से होता दिखाया गया है। संभवतः यही हमारी बहनों का विशेष दृष्टिकोण हो। परंतु उपहासच्छल से, आनुषंगिक रूप से या प्रतिषेध्य रूप में भी जीवन तक पहुंचने की तत्तद विभिन्न दृष्टियों की कोई चर्चा होने से यह संदेह हो सकता है कि उन्होंने या तो जान-बूझकर या अनजान में जीवन को सांगोपांग रूप में और सब पहलुओं से देखने की उपेक्षा की है। इस विशेष बात में भी शिवरानी देवी की कौमुदी कुछ-कुछ अपवाद है।

संदर्भ: उक्त अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' के निबंध 'महिलाओं की लिखी कहानियां' से लिया गया है।

प्रसंग: उक्त अवतरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने समय के स्त्री लेखन का सूक्ष्म मूल्यांकन करते हुए यह मत व्यक्त किया है कि अधिकतर स्त्री लेखिकाएँ अपने चित्रण में विधि-निषेध को दर्शित करके ही कोई रास्ता निकालने में सक्षम हो पाती हैं। उनके द्वारा विधि-निषेध को दिए जा रहे महत्व के प्रति वे अपनी चिंता और कहानी संवेदना की एकांगिता को व्यक्त करते हैं और सही विकल्प की ओर बढ़ने का सुझाव देते हैं।

व्याख्या: आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखा गया 'महिलाओं की लिखी कहानियां' निबंध महिला लेखन पर एक सार्थक टिप्पणी है। यह निबंध स्त्री लेखन में अभिव्यक्त स्त्री संवेदना का आलोचनात्मक दृष्टि से किया गया मूल्यांकन है। अपने दौर की चार स्त्री कथाकार - शिवरानी देवी, सुभद्रा देवी, कमला देवी और होमवती देवी की कहानियों का मूल्यांकन करते हुए निबंधकार उन कहानियों में अभिव्यक्त संवेदना का इस दृष्टि से मूल्यांकन करता है कि उनमें प्रतिरोध शक्ति कितनी है। या वे जिस समस्या का संवेदनात्मक चित्रण कर रही हैं, वह समस्या एकांगी रूप में तो नहीं प्रस्तुत की गई है। जीवन, घटनाओं की एक पूरी लड़ी है और उसे समझने के लिए संपूर्णता में समझने की आवश्यकता भी है। इस अवतरण में निबंधकार ने इसी बात पर बल दिया है कि तत्कालीन स्त्री लेखिकाएँ, जो भी लिख रही है और अपने लेखन के माध्यम से स्त्री जगत को जो विकल्प सुझा रही हैं, वह विद्रोह दरअसल विधि निषेध को वैधता देता दिखाई देता है। जिस समाज की जन्मदाता स्त्री है, उसी समाज की विधियों का हरण उसी के द्वारा किया जाए, यह निबंधकार को उपयुक्त बात नहीं जान पड़ती है। इसीलिए निबंधकार इस लेखन को सर्जनात्मक या वास्तविकता रचनात्मकता की ओर मोड़ते हुए यह सुझाव देता है कि स्त्री लेखन को मात्र विसंगतियों के चित्रण तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए बल्कि उन्हें विधिवत कोई विकल्प भी सामने रखना चाहिए। समस्याओं को जीवन से अलग करके देखना ठीक दृष्टि नहीं है। संपूर्ण जीवन के संदर्भ में ही किसी समस्या का मूल्यांकन होना चाहिए। जिस समाज की रचनाकार स्वयं स्त्री है, उस समाज को बनाए रखने की जिम्मेदारी आज भी उसी की है। अपने समय की चारों कहानीकारों पर बात करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को यह विशेषता शिवरानी देवी की कहानियों में विशेष रूप से दिखाई देती है। इस अवतरण में निबंधकार ने इसी मंतव्य को व्यक्त किया है।

विशेष:

१. अपने समय के स्त्री लेखन का सूक्ष्म दृष्टि से मूल्यांकन किया है।

२. स्त्री लेखन की कमियों को उजागर किया है।

११.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. कहानी संग्रह 'कौमुदी' के रचनाकार हैं ?

(क) सुभद्रादेवी (ख) होमवतीदेवी

(ग) कमलादेवी (घ) शिवरानी देवी

२. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार समाज को किसने जन्म दिया था ?

(क) पुरुष (ख) स्त्री

(ग) ब्रह्मा (घ) विष्णु

३. निम्न में से कौन सा कहानी संग्रह कहानीकार सुभद्रा देवी के द्वारा लिखा गया है ?

(क) बिखरे मोती (ख) निसर्ग

(ग) पिकनिक (घ) कौमुदी

११.६ लघुत्तरीय प्रश्न

१) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार तत्कालीन महिला लेखन की कमजोरियां।

२) शिवरानी देवी की लेखन कुशलता।

३) सुभद्रा देवी की कहानियों की संवेदना।

११.७ बोध प्रश्न

१) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने समय के स्त्री-कहानी-लेखन को किस दृष्टि से देखा है ? विस्तार से मूल्यांकन कीजिए।

२) महिलाओं पर लिखी कहानियां निबंध की अंतर्वस्तु का विश्लेषण कीजिए ?

३) महिलाओं पर लिखी कहानियां निबंध के प्रतिपाद्य का वर्णन कीजिए ?

११.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

११.१

निबन्ध : केतुदर्शन

इकाई की रूपरेखा

११.१.० इकाई का उद्देश्य

११.१.१ प्रस्तावना

११.१.२ निबन्ध : केतुदर्शन

    ११.१.२.१ 'केतुदर्शन' निबन्ध की अन्तर्वस्तु

    ११.१.२.२ 'केतुदर्शन' निबन्ध का प्रतिपाद्य

११.१.३ सारांश

११.१.४ उदाहरण-व्याख्या

११.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

११.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

११.१.७ बोध प्रश्न

११.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

११.१.० इकाई का उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'केतुदर्शन' निबन्ध का वस्तुगत विश्लेषण किया गया है। 'केतुदर्शन', खगोलशास्त्र एवं ज्योतिष पर आधारित निबंध है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी बहुविषयी लेखक के रूप में जाने जाते हैं। उनके निबंध में उन्होंने जिन भी विषयों को उठाया है, उन विषयों की प्रकृति अत्यंत व्यापक है। देश, समाज, शास्त्र, संस्कृति, इतिहास, समसामयिक प्रश्न आदि सभी कुछ उनके निबंधों में समाविष्ट है। कठिन से कठिन विषय को अत्यंत व्यावहारिक शैली में उन्होंने पाठकों के सामने रखा है। 'केतुदर्शन' निबंध खगोलशास्त्र एवं ज्योतिष जैसे जटिल विषयों पर आधारित होने के बावजूद उन्होंने अत्यंत ही व्यवहारिक ढंग से पाठकों को ध्यान में रखते हुए लिखा है। इस इकाई के अंतर्गत 'केतुदर्शन' निबंध की अंतर्वस्तु और उसके प्रतिपाद्य का विश्लेषण सम्मिलित है।

११.१.१ प्रस्तावना

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जटिल क्षमताओं से युक्त सरल साहित्यकार हैं । ऐसे साहित्यकार हिंदी में बहुत ही कम हुए हैं। उनका साहित्य हमारी साहित्यिक विरासत को समृद्धि प्रदान करता है। उनके विषय छोटे से लेकर राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय जगत के व्यापक प्रसार युक्त परिदृश्य को अपने में समेटे हुए हैं। उन्होंने जिस भी विषय को उठाया है, उसका व्यवस्थित चित्रण किया है । यह चित्रण शैली आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की अपनी तरह की मौलिक शैली है, जिसमें गुरुता, गंभीरता, हास्यपरकता सभी कुछ एक साथ सम्मिलित

munotes.in

मिल जाता है। साधारण से साधारण पाठक भी उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए कठिन से कठिन विषय को अत्यंत सहजता से समझ सकता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की दृष्टि अपने समय के हर विषय को आवृत किए रहती थी। इस इकाई में उनके द्वारा लिखा गया निबंध 'केतुदर्शन' नामक निबंध खगोल विज्ञान एवं ज्योतिष के प्रति उनकी रुचि और व्यापक समझ को हमारे सामने रखता है। इस कठिन विषय को भी उन्होंने अत्यंत सरल, सहज और प्रफुल्लित रूप में पाठकों के सामने रखा है। यह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की विशेषता है कि वह बोझिल से बोझिल विषय को भी अत्यंत रुचिकर बना देते हैं। पाठक की जिज्ञासा को जगाकर उसमें रुचि उत्पन्न कर देते हैं। फिर पाठक उस विषय में सहज ही संलग्न दिखाई पड़ता है।

११.१.२ निबन्ध : केतुदर्शन

११.१.२.१ 'केतुदर्शन' निबन्ध की अन्तर्वस्तु:

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी रुचि-वैविध्यता से संपन्न साहित्यकार थे। उन्होंने जो निबंध लिखे हैं, उनकी विषयवस्तु देखते हुए हम सहज ही अंदाजा लगा सकते हैं कि उनकी रूचि कितनी व्यापक और विस्तृत थी। ज्ञान-विज्ञान और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से जुड़ा हुआ विषय उनकी जिज्ञासा में सम्मिलित होता था। आधुनिक विषयों के अतिरिक्त ज्योतिष जैसे गूढ़ विषयों की भी उन्हें गहरी जानकारी थी। ज्योतिष और खगोल विज्ञान में गहरा संबंध है। ज्योतिष में अपनी रुचियों के चलते वे आधुनिक खगोल विज्ञान में भी काफी रूचि लेते थे। निबंध 'केतुदर्शन' उनकी इसी अभिरुचि का दर्शन कराने वाला निबंध है। ज्ञानप्राप्ति की ऐसी पिपासा जल्द किसी और में मिलना दुर्लभ है। ऐसा लगता है, जैसे वह दिन और रात बस इसी एक उद्यम में लगे रहते थे। इन कठिन विषयों को वे जिस अधिकार भाव से सहज शैली में लिखते हैं, उससे इन विषयों पर उनके अधिकार का पता चलता है। इस निबंध में भी उनका स्वयं का व्यक्तित्व उभर कर सामने आता है। एक विषय से दूसरे विषय में छलांग लगाने कीप्रवृत्ति, संदर्भ अनुकूल हास्यपरक भाषा और चलते-चलते अपने समसामयिक जीवन की समस्याओं पर भी चोट करते जाना - उनकी अभिव्यक्ति शैली के प्रमुख लक्षण हैं। और इस निबंध में भी इन लक्षणों को अत्यंत आसानी से लक्षित किया जा सकता है।

हमारे ब्रह्मांड जगत में जाने-अनजाने कई पिंड ऐसे हैं जो अनियंत्रित रूप से अनिश्चित कक्षाओं में विचरण कर रहे हैं। इन्हें हम पुच्छल तारा, धूमकेतु आदि कई नामों से जानते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध में ऐसी ही एक घटना का विवरण दिया है। परंतु यह विवरण एक वर्णन मात्र नहीं है, इसके साथ-साथ उन्होंने ब्रह्मांडीय जगत की कई महत्वपूर्ण सूचनाएं भी पाठकों तक प्रेषित की हैं। यह सूचनाएं जहां आधुनिक खगोल विज्ञान से गहरा तादात्म्य रखती हैं, वही प्राचीन भारतीय ज्योतिष एवं खगोल विज्ञान की अवधारणा को भी आश्चर्यजनक ढंग से पाठकों तक पहुंचाती हैं। अपनी शैली के अनुरूप संवाद करते-करते कब वे इनजटिल विषयों को बताते चले जाते हैं, पता भी नहीं चलता। निबंध के आरंभ में ही वे कहते हैं, "आज नए धूमकेतु आए हैं, परिव्राजक जाति के पिण्ड हैं, कौन जाने फिर कभी पधारेंगे या नहीं, देख ही लेना चाहिए। पुराने जमाने के धुरंधर ज्योतिषी वाराहमिहिर ने साफ शब्दों में इन लोगों की चाल-ढाल का पता लगाने में अपनी

हार मान ली थी। वृहत्संहिता में कह गए हैं, इन भले मानसों की गति और उदय-अस्त का पता गणित विधि से नहीं चलता।..... आधुनिक ज्योतिषी इतना नहीं कहते, मगर उनके भी कहने का कुछ अर्थ इसी के आस-पास पहुंचता है। सो केतुदर्शन दुर्लभ सौभाग्य है।" इस निबंध में इस तरह के विवरण स्थान-स्थान पर दिए गए हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने प्राचीन शास्त्रीय प्रमाण तो दिए ही हैं, साथ ही आधुनिक खगोल विज्ञान की अवधारणाओं और तत्वों का भी यथास्थान वर्णन किया है। जैसे आकाशीय पिंडों की दूरियों को लेकर उनके मन में एक आश्चर्य का भाव है। इस संबंध में वे लिखते हैं, "विराट शून्य को अगर समुद्र समझें तो उसमें कोटि-कोटि नक्षत्र पुंज कई द्वीप-पुंजों के समान हैं। हमारा यह नक्षत्र जगत एक द्वीपपुंज है। दूसरा जो हमारे सबसे निकट का पड़ोसी द्वीपपुंज है वह भरणी नक्षत्र के समीपवर्ती इस एंड्रोमीडा के ही पास की एक नीहारिका है। इस विराट ब्रह्मांड के अरायजनवीश - ज्योतिषी - लोगों ने हिसाब लगाकर बताया है कि इस पड़ोसी नक्षत्रपुंज का, जो हमारा सबसे निकटवर्ती नक्षत्र है, उसका प्रकाश पृथ्वी तक सिर्फ नौलाख वर्षों में ही पहुंच जाता है, और जो हमसे बहुत दूर है, उसके प्रकाश के आने में कुछ ज्यादा समय जरूर लग जाता है - सिर्फ तीन अरब वर्ष।" इस तरह वे जब इस तरह के वर्णन देते हैं, तो इस ब्रह्मांड की विराटता और प्रकृति की अजेयता के प्रति एक विश्वास उनकी वाणी में दिखाई देता है। प्रकृति के इस अद्भुत सौंदर्य पर उनका मन सदा अभिभूत रहता है।

निबंधकार जिस धूमकेतु को देखना चाहता था, रात्रि में हीउसे देखने के लिए वह निकल पड़ता है। रात्रि का अद्भुत सौंदर्य उसे आकर्षित करता है। जैसे-जैसे सभ्यता आगे बढ़ती गई है, वैसे-वैसे लोग प्रकृति से दूर होते चले गए हैं। आज के शहरी जीवन में कृत्रिमता का समावेश लगातार बढ़ता जा रहा है। व्यक्ति प्रकृति से दूर होकर अपने आत्मिक सुख को खोता जा रहा है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस निबंध में कई स्थलों पर प्रकृति से स्वयं के गहरे जुड़ाव को प्रदर्शित किया है। सुबह आकाश में भोर के तारे का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं, "पूर्वी आकाश का मुख उज्जवल हो गया जैसे प्राची दिग्वधू ने हंस दिया हो। शुक्र देवता या वीनस देवी- यवन देवियों में सर्वाधिक सुंदरी - उदय होने वाली हैं।"या एक स्थल पर रात्रि सौंदर्य के आकर्षण से मुग्ध होकर वे कहते हैं, "जो लोग दीवारों में घिरे और छत से ढके कमरों में रात काटने के अभ्यस्त हैं, उनसे यदि कहूं कि रात जीवन्त वस्तु है, तो न जाने क्या कहेंगे। लेकिन जो कोई भी आंख-कान रखने वाला भला आदमी तारा-खचित आसमान के नीचे घंटे-आधघंटे के लिए आखड़ा होगा, वह अनुभव करेगा कि रात सचमुच ही जीवन्त पदार्थ है। वह सांस लेती हुई जान पड़ती है, उसके अंग-अंग में कंपन होता रहता है, वह प्रसन्न होती है, उदास होती है, धुन्धुआ जाती है, खिल उठती है। धीरे-धीरे, लेकिन निसंदेह, वह करवट बदलती रहती है, सो जाती है, जाग उठती है। हर किसान रात के बिहंसने का अनुभव किए होता है। "निबंध में बीच-बीच में इस तरह के प्रकृति के रागमय चित्रण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की प्रकृति के प्रति आस्था को प्रकट करते हैं। यही उनकी शैली की विशेषता है कि मनकी झोंक के मुताबिक वे शांत, स्निग्ध हवा की तरह इधर-उधर विचरण करने लगते हैं।

निबंध में उन्होंने धूमकेतु की संरचना और उसकी वैज्ञानिक अवधारणा का संक्षिप्त परंतु सांगोपांग चित्रण किया है और साथ ही इस संदर्भ में लोक में प्रचलित विश्वास भी वर्णन में चले आए हैं। धूमकेतु के उदय का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं, "सो धीरे-धीरे हस्त नक्षत्र के

पास धूमकेतु का उदय हुआ। आहा, क्या सुंदर पताका (केतु) है। श्वेतपताका शांति का संदेश वाहक है। कम लोग जानते होंगे कि धूमकेतु कभी-कभी शुभ फल भी देते हैं । "ज्ञान का अथाह भंडार लिए होने के साथ-साथ आचार्य लोक की आत्मा में भी पैठे हुए हैं । इसीलिए उनके वर्णन इतने सरस और मनोहर हो जाते हैं । प्रत्यक्ष-ज्ञान, लोक-विश्वास और विज्ञान का अनोखा और अद्भुत तालमेल उनके लेखन में दिखायी देता है । बात करते-करते धूमकेतु के संबंध में वैज्ञानिक धारणाओं की चर्चा भी आरंभ हो जाती है। वे लिखते हैं, "यह हस्त नक्षत्र उदित हुआ। पांचों अंगुलियां साफ दिख रही हैं । इसके पास ही कुहासे-सा दिखायी दिया। धूमकेतु की यह पूँछ थी । हिंदी में इसे पुच्छल तारा कहा जाता है। इसीलिए मैं भी इस झाड़ूनुमा पताका को पूँछ कह रहा हूँ। असल में यह पूँछ नहीं है । प्राचीन आचार्यों ने 'पुच्छलतारा' को केतु (पताका), धूमकेतु (धुएँ की पताका) और शिखी (चोटीवाला) कहा है। यही उचित भी है क्योंकि आधुनिक शोधों से प्रमाणित हो गया है कि जिसे पूँछ कहा जाता है वह वास्तव में शिखाया छोटी है । जब धूमकेतु सूर्य के पास पहुंचता है, तो उसके भीतर के लघुभार गैसीय पदार्थ सूर्य की ओर उसी प्रकार आकृष्ट होते हैं, जिस प्रकार धारायंत्र (फव्वारे) से उर्ध्वमुख धाराएं निकलती हैं।" इस तरह उनका वर्णन एक साथ प्रत्यक्ष-ज्ञान, पौराणिकता, प्राचीन भारतीय शास्त्र, आधुनिक विज्ञान और लोक विश्वासों के धरातल पर विचरण करता है ।

विषय कैसा भी हो, उसे जीवन और जगत से जोड़ने की जैसी सामर्थ्य आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के लेखन और उनके निबंधों में है, वैसी सामर्थ्य जल्दी अन्यत्र कहीं दिखती नहीं है । धूमकेतु की प्रवृत्ति पर बात करते हुए जब वे बताते हैं कि पहले के ज्योतिषी लोग धूमकेतुओं को तीन जाति का मानते थे अर्थात तीन प्रकार का मानते थे- दिव्य, अंतरिक्ष और भौम। उसी अनुरूप आज के ज्योतिषी भी तीन प्रकार के धूमकेतु ही मानते हैं- दीर्घवृत्त में घूमने वाले, परवलय में भी विचरने वाले और अतिपरवलय मार्ग में रहने वाले। इसी संदर्भ में वह धूमकेतु की चर्चा करते हुए लिखते हैं, "सुना है कि ज्योतिषियों ने अपना मत बदल दिया है । वे मानने लगे हैं कि वस्तुतः सभी केतु दीर्घवृत्त में ही घूमते हैं। कोई देर आता है, कोई सवेर, लेकिन आते सब हैं।सब माया में फंसे हैं, बैरागी कोई नहीं ।" भाषा और अभिव्यक्ति का ऐसा उदाहरण दुर्लभ है। मनुष्य की प्रवृत्ति से धूमकेतु की प्रवृत्ति की तुलना के द्वारा कितनी सहजता से वे अपने मंतव्य को पाठकों तक पहुंचा देते हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की अभिव्यक्ति शैली की विशेषता कठिन-से-कठिन विषय को अतिसरल रूप में संप्रेषित करती है ।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को इतिहास से विशेष प्रेम है। वे निबंध किसी भी विषय पर लिख रहे हों, अनिवार्य रूप से इतिहास में प्रवेश करने की कला उन्हें विषय में इतिहास को सम्मिलित होने से रोक नहीं पाती । उनके लगभग सभी निबंधों में यह बात देखी जा सकती है । वे जब आधुनिक समस्याओं पर बात करते हैं (नाखून क्यों बढ़ते हैं), सांप्रदायिकता पर बात करते हैं (ठाकुर जी की बटोर), संस्कृति पर बात करते हैं (संस्कृतियों का संगम), या देश की समसामयिक स्थितियों पर बात करते हैं (भगवान महाकाल का कुंठनृत्य) - इतिहास अनिवार्य रूप से हर जगह सम्मिलित हो जाता है। दरअसल इतिहास के संबंध में उनकी स्पष्ट धारणा है कि इतिहास भविष्य की राह दिखाने वाला विषय है । इतिहास से मनुष्य बहुत कुछ सीख सकता है । सबसे बड़ी बात तो यह है कि हम पिछली घटनाओं से सबक

लेकर कम से कम आगे उस तरह की गलतियां तो नहीं दोहराएंगे। इस व्यवहारिक उपयोग के अलावा अपनी परंपरा और विरासत को समझने के लिए भी इतिहास को समझना अत्यंत आवश्यक है। उनका लेखन इस बात का गवाह है कि उन्होंने भारत के संपूर्ण इतिहास को एक परंपरा के रूप में वर्णित किया है। इतिहास को देखने की यही सूक्ष्म दृष्टि उनके लेखन की विशेषता है।इस निबंध में भी वे नक्षत्र और धूमकेतु की चर्चा करते-करते इतिहास में प्रविष्ट हो जाते हैं। लोक विश्वास है कि 'हस्त नक्षत्र वाला केतु दंडकारण्य के राजा का नाश कर डालता है' - बस यहीं वे इतिहास में प्रविष्ट होने का अवसर खोज लेते हैं और कुछ पंक्तियां दंडकारण्य की पहचान को समर्पित कर देते हैं, "यह दंडकारण्य कहां है ? भंडारकर ने बताया था कि नागपुर समेत समूचा महाराष्ट्र ही दंडकारण्य है। पार्जिटर ने कहा था कि बुंदेलखंड से लेकर कृष्णा नदी के तट का सारा देश दंडकारण्य कहा जाता था।..... मुझे आशंका हुई कि दंडकारण्य कहीं हैदराबाद की रियासत तो नहीं है। बुरा मैं किसी का नहीं सोचना चाहता। भगवान करें, दंडकारण्य भूलोक में कहीं हो ही नहीं।" यही उनकी विशिष्ट शैली है। इस उदाहरण में एक साथ हम देख सकते हैं कि कैसे वे इतिहास में विचरण करते हुए अपनी समसामयिक स्थितियों पर भी आ जाते हैं और एक खास तरह की वक्रता उनकी भाषा में पैदा हो जाती है, जो अपने व्यंग से पाठकों को अभिभूत भी करती है।

अपने समसामयिक संदर्भों और सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों को कभी भी वे अपनी नजर से दूर नहीं रखते। उनके हर निबंध में हमें इस तरह के उदाहरण मिल ही जाते हैं, जिनसे उनकी सचेतता का प्रमाण मिलता है। इस निबंध में भी प्रसंगश: बहाने से उन्होंने हैदराबाद के निजाम का जिक्र किया है। १९४७ के बाद भारत में स्वत: सम्मिलित हुई रियासतों में यह रियासत सम्मिलित नहीं थी। सरदार वल्लभ भाई पटेल के कड़े निर्णय के बाद हैदराबाद के निजाम को विवश होकर अपना विलय भारत में स्वीकार करना पड़ा था। यहां प्रसंग को किस तरह से उन्होंने गूंथकर सामान्य विषय की तरह बना दिया, यह उन्हीं के लेखन के बस की बात है। इसी तरह एक अन्य स्थल पर बार-बार यह आशंका जताई जाती है कि पृथ्वी से यदि कभी कोई धूमकेतु टकरा गया तो जीवन नष्ट होने की संभावना भी है। पुरातत्वशास्त्री कई करोड़ वर्ष पहले धरती से डायनासोर के लुप्त होने का कारण इसी घटना को मानते हैं। तो एक संभावना बनती है कि अगर पृथ्वी पर दोबारा ऐसा कुछ घटता है तो संभवतः यह पृथ्वी एक बड़े श्मशान में तब्दील हो जाएगी और मानव सभ्यता नष्ट हो जाएगी। इसी संदर्भ में वे लिखते हैं कि, "१९१० ई. में पृथ्वी बच गई, और उम्मीद की जानी चाहिए कि १९८६ ई. भी बच ही जाएगी। अगर नहीं बच सकी तो उसका कारण धूमकेतु नहीं होगा, मनुष्य के बनाए हुए मरणास्त्र होंगे।"

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की मनुष्य की बौद्धिक शक्ति पर गहरी आस्था है। समाज में नकारात्मकता के बावजूद उनका आशावाद उन्हें एक ऐसे साहित्यकार में बदल देता है, जो मनुष्य को इस धरा पर विजेता के रूप में देखना चाहता है। उनकी कल्पना का मनुष्य मानवतावाद से परिपूर्ण मनुष्य है, जो समानता और सामाजिक न्याय के आदर्शों पर चलते हुए इस धरा को सुंदर बनाने का काम कर रहा है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अपने संपूर्ण जीवन में दो महायुद्ध लंबे समय तक चले, राष्ट्रीय आंदोलन, सांप्रदायिक दंगे, ब्रिटिश सरकार का भीषण दमन और न जाने क्या-क्या उन्होंने अपने समय में देखा था परंतु इतनी विकटता भी मानवतावाद पर उनकी आस्था को डिगा नहीं सकी। उनका विश्वास है की

अंतिम विजय मानवतावाद की ही होगी। उन्हें अपनी परम शक्ति पर विश्वास है। यह विश्वास उनके प्रत्येक निबंध में व्यक्त होते हुए हम देख सकते हैं। धूमकेतु, जिसे मनुष्य अनजाने में आपदा की तरह लेकर बार-बार भयभीत होता है, इसके संदर्भ में लिखते हुए वे पुनः अपना आशावाद अभिव्यक्त करते हैं। वे कहते हैं, "मैं इस प्रभातकल्पा शर्वरी के उपान्त्यभाग में आश्चर्य के साथ धूमकेतु को देख रहा हूँ। मनुष्य कितना जानता है। इस विपुल ब्रह्मांड निकाय में वह कैसा क्षुद्र जीव है, फिर भी कितनी शक्ति का स्रोत है वह। वह धूमकेतु से पहले डरा था। फिर घबराया था, लेकिन अब उसने इसका भी रहस्य बहुत कुछ जान लिया है, और भी जानने के लिए हाथ-पैर मार रहा है। मनुष्य हारेगा नहीं। निराश होने की कोई बात नहीं है। जो लोग केतु को देखकर ही घबरा गए हैं, उन्हें समझना चाहिए कि मनुष्य की बुद्धि को जिस शक्ति ने इतनी महिमा दी है, वह उसे केतु से हारने नहीं देगी।" इस तरह मानवतावाद, मनुष्य की संघर्षशीलता और जीवटता की प्रेरणा देते हुए इस निबंध को वे समाप्त कर देते हैं।

११.१.२.२ केतुदर्शन निबन्ध का प्रतिपाद्य:

केतु दर्शन निबंध ज्योतिष और खगोल विज्ञान विषय पर आधारित निबंध है। यह विषय भी आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कि रुचि का विषय है। जिस तरह उन्होंने इतिहास, संस्कृति और प्राचीन भारतीय वैदिक एवं पौराणिक साहित्य को आधार बनाकर कई निबंध लिखे हैं, उसी तरह इस विषय पर भी उन्होंने कई निबंधों की रचना की है। उन्हीं में से एक निबंध है- 'केतुदर्शन', जिसमें उन्होंने धूमकेतु के संबंध में विस्तृत जानकारी देते हुए कई तरह की जिज्ञासाओं का संबंध किया है। इस निबंध को पढ़ते हुए हम आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के संतुलित व्यक्तित्व को सहज ही लक्षित कर लेते हैं। किस तरह से वे प्राचीन ज्ञानराशि का समन्वय आधुनिक विज्ञान से करते हैं, यह इस निबंध की विशिष्ट बात है। साथ ही वे हर विषय को जीवन- जगत के महत्वपूर्ण प्रश्नों से जोड़कर उसका मूल्यांकन करते हैं, यह भी इस निबंध की विशिष्टता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी सैद्धांतिक और व्यावहारिक जीवन के किसी भी क्षेत्र को ज्ञान की दृष्टि से उपेक्षित नहीं समझते हैं। जितना वे अपने विश्लेषण और निष्कर्षों में शास्त्र आदि का आश्रय लेते हैं, उतना ही वे लोकविश्वासों का भी मूल्यांकन करते हुए उनका सहज उपयोग कर लेते हैं। उनका परंपरा आश्रित आधुनिकतावादी दृष्टिकोण उनके अलग ही व्यक्तित्व का निर्माण करता है। इस निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी धूमकेतु के संबंध में शास्त्रों, लोकविश्वासों और आधुनिक विज्ञान का सहारा लेते हुए कई तरह की अवधारणाओं का वर्णन और विश्लेषण करते हुए आगे बढ़ते हैं और एक निष्कर्ष तक पहुंचने का प्रयास करते हैं।

उनकी शैली की यह अद्भुत विशेषता है कि नितांत सैद्धांतिक प्रश्नों पर विचार करते हुए भी वे उनका प्रयोग व्यावहारिक और समसामयिक जीवन के संदर्भ में करते हुए उससे गहरा संबंध जोड़ देते हैं। इस निबंध में भी सहज ही धूमकेतुओं की चर्चा करते-करते कभी वे इतिहास के माध्यम से दंडकारण्य के प्रश्न को हल करने की चेष्टा करते दिखाई देते हैं और कभी धूमकेतुओं से भी ज्यादा खतरनाक मानव के द्वारा विकसित किए जा रहे मरणास्त्रों पर व्यंग करते दिखाई देते हैं। आज के समय में मनुष्य के लिए धूमकेतु से इतना खतरा नहीं है,

जितना कि मनुष्य की अपनी महत्वाकांक्षाओं से है। अपने समय में जिस तरह का दावानल उन्होंने देखा था, उससे उनका आशावाद हिला तो नहीं परंतु मनुष्य की नकारात्मकता से वे भलीभांति परिचित हो गए हैं। तत्कालीन विश्व में विकास का अर्थ घातक अस्त्रों-शस्त्रों के निर्माण और शक्ति के दुरुपयोग पर आधारित हो गया था। समस्त विश्व दो ध्रुवों में बंट चुका था और मनुष्य शक्तिपूजा में लीन था।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की यह विशेषता है कि वे न तो मानवतावाद पर अपनी आस्था को नष्ट होने देते हैं और नही मनुष्य की प्रगति का उनका अटल विश्वास आहत होता है। वे आशावाद से परिपूर्ण रचनाकार हैं और उनका मानना है कि जिस प्रकार मनुष्य अपने जीवन में आने वाले जटिल से जटिल प्रश्नों को हल कर लेता है, उसी तरह वह मनुष्यता की राह में आने वाले खतरों को भी समाप्त कर लेगा। मनुष्य की यह दुर्जेय शक्ति उसे कभी नष्ट नहीं होने देगी। यह आशावाद आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के संपूर्ण साहित्य की प्राणशक्ति है और इस निबंध में भी वे इस आशा को पूरी आस्था से व्यक्त करते दिखाई देते हैं। यह निबंध जहां एक तरफ प्राचीन संचित ज्ञानराशि से परिचित कराता है, वहीं धूमकेतु के संबंध में आधुनिक वैज्ञानिक अवधारणाओं की भी जानकारी देता है। और साथ-ही-साथ जीवन-जगत के प्रति एक आशावादी दृष्टिकोण का निर्माण करता है। यह इस निबंध की सबसे बड़ी देन है।

११.१.३ सारांश

प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत 'केतुदर्शन' निबंधों का विश्लेषण किया गया है। निबंध केतुदर्शन, बिल्कुल भिन्न संवेदना पर आधारित निबंध है। यह निबंध खगोलशास्त्रीय एवं ज्योतिषीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाने वाले धूमकेतु पर आधारित है। इस निबंध में आचार्य जी ने प्राचीन भारतीय शास्त्रों एवं आधुनिक वैज्ञानिक अवधारणाओं के अनुसार धूमकेतुओं का सरल और सहज चित्रण किया है। उनके बारे में बहुत से महत्वपूर्ण तथ्य और आंकड़े इस निबंध में उन्होंने रखे हैं। धूमकेतु के संदर्भ में कई तरह के लोकविश्वासों की भी चर्चा उन्होंने की है। इस मुख्य विषय वस्तु के अतिरिक्त उन्होंने जीवन और जगत से जुड़े हुए प्रश्नों की चर्चा भी प्रसंगवश की है।

११.१.४ उदाहरण-व्याख्या

व्याख्या अंश १:

एक हैली धूमकेतु है, जो सन १९१० ईस्वी में अंतिम बार दिखा था। हैली नाम के ज्योतिषी ने पहले-पहल हिसाब लगाकर देखा था कि यह ७६ वर्ष में लौटता है, और इसका मार्ग दीर्घवृत्ताकार है। तब से यह कई बार देखा गया है और इसका नाम ही 'हैली धूमकेतु' पड़ गया है। १९१० ईस्वी की १९वीं मई को यह सूर्य और पृथ्वी के बीच में आ गया था। २० मई को तो यह पृथ्वी के बहुत नजदीक आ गया। सूर्य के सामने आने पर यह और भी तेजस्वी बना। इसकी पूँछ- अर्थात शिखा - उदयगिरि से अस्तगिरि तक पहुंचती थी। उसचौड़ी उज्जवल शिखा को देखकर एक कवि ने आकाश सुंदरी की उज्जवल सीमांत रेखा का सौंदर्य अनुभव किया था। एक दिन तो हमारी यह पृथ्वी उसकी पूँछ के भीतर से

निकल गयी। पढ़े-लिखे - अर्थात समझदार समझे जाने वाले - लोग घबरा गए थे। प्रतिक्षण कुछ घट-पड़ने की आशंका थी। त्राहि-त्राहि मच गई थी। लेकिन बाद में मालूम हुआ कि विधाता ने पृथ्वी को काफी मजबूत बनाया है, धूमकेतु इसका कुछ बिगाड़ नहीं सकते - उनकी पूँछ तो बिल्कुल नहीं। १९१० ईस्वी में पृथ्वी बच गई, और उम्मीद की जानी चाहिए कि १९८६ ईस्वी भी बच ही जाएगी। अगर नहीं बच सकी, तो उसका कारण धूमकेतु नहीं होगा, मनुष्य के बनाए हुए मरणास्त्र होंगे। खैर।

संदर्भ: उक्त अवतरण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध संग्रह 'कल्पलता' के केतुदर्शन निबंध से लिया गया है।

प्रसंग: इस अवतरण में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने धूमकेतु के संदर्भ में प्रचलित विभिन्न लोकविश्वासों और वैज्ञानिक कल्पनाओं का वर्णन किया है, जिनके अनुसार धूमकेतु के कारण पृथ्वी नष्ट हो जाएगी। उन्होंने यह विश्वास जताया है कि पृथ्वी धूमकेतु के कारण नष्ट हो या न हो, परंतु मनुष्य के द्वारा बनाए जा रहे अस्त्रों और शस्त्रों से जरूर नष्ट हो जाएगी। धूमकेतुओं के बहाने वे इस अवतरण में अपनी समसामयिक समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट कराते दिखाई देते हैं।

व्याख्या: हैली धूमकेतु एक ऐसा धूमकेतु है, जिसके बारे में हमारे पास अब सारी प्रामाणिक जानकारी है। इस धूमकेतु का पता हैली नामक खगोलशास्त्री ने लगाया था। हैली का पूरा नाम एडमंड हैली था। और वे प्रसिद्ध गणितज्ञ और भौतिकशास्त्री न्यूटन के समकालीन थे। उनकी खगोलशास्त्र में गहरी जिज्ञासा थी और इसी जिज्ञासा के चलते वे लगातार अध्ययन भी करते रहते थे। हैली धूमकेतु के बारे में पहली बार प्रामाणिक जानकारी उन्होंने ही दी थी। उनका कहना था कि जो धूमकेतु सन १६८२ में दिखाई दिया था, यह वही धूमकेतु है, जो सन १५३१, १६०७ तथा संभवतः सन १४६५ में भी दिखाई पड़ा था। उन्होंने गणना द्वारा भविष्यवाणी की कि यह सन १७५८ के अंत के समय पुनः दिखाई देगा और ऐसा हुआ भी। तब से इस धूमकेतु का नाम हेली धूमकेतु पड़ गया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इन्हीं संदर्भों की चर्चा करते हुए इस धूमकेतु के १९१० ईस्वी में दिखाई देने के समय का वर्णन किया है। जिन स्थितियों में यह धूमकेतु पृथ्वी से गुजरा था, उसमें सभी लोग काफी घबरा गए थे और सभी को कुछ अनिष्ट घटने की आशंका थी परंतु जब यह घटना बीत गई और पृथ्वी सुरक्षित रही, तब लोग संयत हुए। इसी संदर्भ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पृथ्वी की अजेयता के प्रति आश्वस्त करते हुए यह मानते हैं कि ऐसे धूमकेतुओं से पृथ्वी नष्ट नहीं हो सकती परंतु ऐसी संभावनाओं से इनकार भी नहीं किया जा सकता। मनुष्य और पृथ्वी की अजेयता को लेकर पूरा विश्वास व्यक्त करते हैं कि १९८६ में जब यह धूमकेतु पुनः दिखाई देगा तो भी पृथ्वी बच जाएगी। पर इसी संदर्भ का आश्रय लेते हुए वे हमारा ध्यान मानवता की हिंसक प्रवृत्ति की ओर दिलाते हुए यह संकेत करते हैं कि जिस तरह की अस्त्रों-शस्त्रों की होड़ इस समय पूरे विश्व को आक्रांत किए हुए हैं, ऐसे में पृथ्वी, धूमकेतु के कारण नष्ट हो या न हो परंतु महाशक्तियों की महत्वाकांक्षा के कारण अवश्य नष्ट हो जाएगी। इस तरह वे यह संदेश देना चाहते हैं कि मनुष्य को अपनी हिंसक वृत्ति पर लगाम लगाना होगा।

विशेष:

१. हेली धूमकेतु के बारे में प्रमाणिक जानकारी मिलती है।

२. मनुष्य की दुर्जेय शक्ति का परिचय मिलता है।

११.१.५ वैकल्पिक प्रश्न

१. गर्ग ने केतुओं की संख्या कितनी बताई थी?

(क) १०१ (ख) २०१

(ग) ३०१ (घ) ४०१

२. पराशर नामक ज्योतिषी ने हेली धूमकेतु को क्या नाम दिया था ?

(क) तारा (ख) चलकेतु

(ग) धूमकेतु (घ) निर्धूम

३. वैज्ञानिकों के अनुसार हेली धूमकेतु कितने वर्षों के बाद लौटता है ?

(क) ४६ वर्ष (ख) ५६ वर्ष

(ग) ६६ वर्ष (घ) ७६ वर्ष

४. निम्न में से किसके अनुसार बुंदेलखंड से लेकर कृष्णा नदी के तट का सारा देश दंडकारण्य कहा जाता था ?

(क) विलियम (ख) जोंस

(ग) पार्जिटर (घ) क्लाइव

११.१.६ लघुत्तरीय प्रश्न

निम्न पर टिप्पणी लिखिए:

१) हेली धूमकेतु।

२) दंडकारण्य।

११.१.७ बोध प्रश्न

१) केतुदर्शन निबंध की अंतर्वस्तु का विश्लेषण कीजिए ?

munotes.in

२) केतुदर्शन निबंध में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने किन शास्त्रीय मान्यताओं का उल्लेख किया है। विस्तार से लिखिए?

३) 'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध प्राचीन और आधुनिक ज्ञान का सुंदर समिश्रण हैं।' केतुदर्शन निबंध के माध्यम से कथन की समीक्षा कीजिए?

११.१.८ अध्ययन हेतु सहयोगी पुस्तकें

१) कल्पलता - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

*****

munotes.in

१२

कथा मंजरी - सं. महेंद्र कुलश्रेष्ठ
कफन - प्रेमचंद

इकाई की रूपरेखा

१२.० इकाई का उद्देश्य
१२.१ प्रस्तावना
१२.२ कथानक
१२.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण
१२.४ कफन का उद्देश्य
१२.५ सारांश
१२.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न
१२.७ लघुत्तरी प्रश्न
१२.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१२.० इकाई का उद्देश्य

- इस इकाई के माध्यम से हम 'कफन' कहानी के कथानक को समझ पाएँगे।
- इस इकाई के माध्यम से हम 'कफन' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण का अध्ययन करेंगे।
- इस इकाई के माध्यम से हम 'कफन' कहानी के उद्देश्य को भी आसानी से समझ पाएँगे।

१२.१ प्रस्तावना

'कफन' कहानी सिर्फ मुंशी प्रेमचंद की ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य की भी चर्चित कहानी है। सन् १९३६ में रची गई यह कहानी हिन्दी साहित्य की ऐसी पहली रचना है, जो अपने केन्द्रीय पात्रों को न तो औदात्य प्रदान करती है, और न ही अतिरिक्त संवेदना। निश्चित रूप से प्रेमचंद जी की यह कहानी लेखकीय तटस्थता का उत्कृष्ट उदाहरण है। जहाँ लेखकीय हस्तक्षेप और पूर्वाग्रहों को दर-किनार करते हुए पात्रों को उनकी स्वाभाविक किन्तु संश्लिष्ट रंग रेखाओं में ही रचा गया है। दरअसल यही वह बिन्दु भी है जहाँ इस कहानी का विरोध भी हुआ है, और इसे दलित विरोधी रचना कहकर खारिज करने का प्रयास भी किया है।

'कफन' कहानी का शीर्षक इतिवृत्तात्मक न होकर सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करने वाला है। इसमें केवल बुधिया के कफन पर ही व्यंग्य नहीं किया गया है, बल्कि मानव की मूलप्रवृत्ति की असहायता पर भी तीखा व्यंग्य किया गया है। बुधिया घर पर मृतक पड़ी है,

munotes.in

उसके कफन के लिए एकत्र किए गए पैसे की शराब पी ली जाती है, क्योंकि दु:ख सहते-सहते घीसू और माधव में उचितानुचित का विवेक नष्ट हो गया हैं। वे बुधिया का कफन नहीं, अपना ही कफन मानो तैयार करते हैं। राजेन्द्र यादव के शब्दों में कफन अपने गहन अर्थों में बुधिया के कफन की कहानी नहीं, मानवता और मृत नैतिक बोध के कफन की कहानी है। यह उस हताशा की कहानी है, जो मनुष्य के आदित्य को आदिम स्तर पर ले जाती है, जहाँ पर अच्छे-बुरे का लोप हो जाता है।

१२.२ कथानक

मुंशी प्रेमचंद की आरंभिक कहानियों के कथानक लम्बे और इतिवृत्तात्मक होते थे, पर उत्कर्ष काल की कहानियों के कथानक और इसलिए 'कफन' का कथानक कलात्मक, संक्षिप्तता पर सुगठित है। इनके ये कथानक या तो किसी व्यक्ति या समस्या के एक पक्ष का निरूपण करते हैं, अथवा किसी मनोवैज्ञानिक अनुभूति पर आधारित होते हैं। इस कफन कहानी का कथानक संक्षिप्त तो है किन्तु सुगठित भी है। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल का कथन है कि इस कहानी में जैसे कोई मनोवैज्ञानिक बिन्दु ही कहानी भर में कथानक के नाम पर सूक्ष्म रेखा बन गई हो। कफन कहानी में सर्वहारा वर्ग के दो व्यक्ति घीसू और माधव के द्वारा नैतिक पतन का बोध कराया गया है। दुख सहते-सहते बाप-बेटे दोनों ही पूर्ण रूप से अकर्मण्य बन गए हैं। इसीलिए वे मेहनती न होकर उपजीवी हो गए हैं। घर पर माधव की पत्नी बुधिया प्रसव पीड़ा से छटपटाकर मरी पड़ी है, पर उन दोनों को ही उसकी कोई चिनता नहीं, कफन के लिए एकत्र किए गए रूपयों से पहले वे पूरी-कचौड़ी खाते हैं, फिर उन्हीं पैसों से शराब भी पीते हैं। जीवन में पहली बार मिलने वाली तृप्ति को वे बिल्कुल भी छोड़ नहीं पाते हैं, अत: वे सब कुछ भूलकर वर्तमान में ही रमते हुए जीवन जीने की कोशिश करते हैं।

इसलिए मुंशी प्रेमचंद कहानी को उसकी चरम सीमा पर पहुँचाकर वहीं उसका अन्त भी कर देते हैं। इससे करूणा का और साथ ही उसके मार्मिक जीवन का सहज ही स्पष्ट चित्र कफन कहानी के माध्यम से अंकित हो जाता है। कफन प्रथम दृष्टया घीसू, माधव, पिता पुत्र की संवेदनहीनता और भावनात्मक क्रूरता की कहानी कही जा सकती है। जाड़े की रात की घनघोर निस्तबधता में अकेले अपने झोपड़े में प्रसव वेदना से छटपटाती बुधिया के समानान्तर उसके घर के दोनों पुरूष सदस्य पति एवं श्वसुर उसके कष्ट से बेपरवाह आग में आलू भूनकर खा रहे हैं। कहानी के आरम्भ में ही इस ह्रदय विदारक दृश्य की नियोजना कर प्रेमचन्द मानों पाठकों से संवेदनशील ढंग से विचार क्षेत्र में उतरने की माँग करते हैं। उन्हें यह अपेक्षा है कि पाठक उनकी अन्य कहानियों की तरह यहाँ भावना और कर्तव्य परायणता के बीच आदर्श और यथार्थ की मुठभेड़ के माध्यम से चरित्र-चित्रण के पारंपारिक सूत्रों की उम्मीद न करें। बल्कि एक ऐसी क्रूर सच्चाई के साक्षात्कार के लिए प्रस्तुत रहें, जो भावनाएँ कर्तव्य और तर्क की हर धार काटकर अपने इर्द-गिर्द निविड़तम अंधकार की ही सृष्टि करती है।

ऊपरी तौर पर यह कहानी अति संक्षिप्त है, बुधिया की दर्दनाक मौत के बाद घीसू-माधव द्वारा कफन के लिए अनुनय-विनय से जमा किए गए पाँच रूपयों को शराब और पूड़ी, कचौड़ी में उड़ा देने की योजना बनती है। लेकिन भीतरी तहों में संश्लिष्ट से संश्लिष्टतर

होती चलती यह कहानी पात्रों के मनोविज्ञान, अध्ययन से आगे के समाज, व्यवस्था के विश्लेषण का आधार बन जाती है। भारतीय सामंती समाज की मनोरचना से परिचित पाठक यह जानता है कि संपन्न वर्ग जिस अधिकार से हाशिए की अस्मिताओं का शोषण करता है, उतने ही कृपा भाव से खैरात रूप में कुछ सिक्के भी उनकी ओर उछाल देता है। यह कृपा दर्याद्र होकर उनकी स्थिति सुधारने की चेतना का परिणाम नहीं, बल्कि अपनी प्रजा को उतना भर देने की सुनियोजित युक्ति है, जिससे वे दुसाध्य कर्म करने के लिए जिन्दा रह सकें। व्यक्तिगत तौर पर अपनी जिन्दगी का सुख न भोग पाएँ। इसलिए पाठक भी घीसू, माधव की तरह अन्तस से निकली गहरी इच्छा की व्यर्थता समझता है, क्योंकि वह जानता है कि जीवित बुधिया के इलाज के लिए कोई भी धनकुबेर अपनी दानवीरता का प्रदर्शन नहीं करता है।

साँझ के धुँधलके में पिता-पुत्र के पैर जब मदिरालय की ओर खिंचे चले जाते हैं, तब वह सतही तौर पर भले ही उनकी गैर जिम्मेदारी पर क्षुब्ध होता हो, वह भली-भाँति जानता है कि, वे दोनों इस समय भीतर ही भीतर आक्रोश की आग में कैसे झुलस रहे हैं। चमार स्वभावत: वैसे भी आलसी एवं अकर्मण्य होते हैं, घीसू तथा माधव तो उसमें भी सरनाम थे। घीसू एक दिन काम करता था तो तीन दिन आराम। माधव, घीसू का जो लड़का था वह भी इतना कामचोर कि आधे घंटे काम करता, और घण्टा भर बैठकर चिलम पीता। इसलिए उसे कहीं मजदूरी नहीं मिलती थी। गाँव में काम की तो कमी नहीं थी, पर कामचोरों को काम कौन दे? उसे कोई काम तभी देता था, जब किसी को मजदूर नहीं मिलता था। वे दूसरों के खेतों से मटर आलू चुराकर लाते और उसे भूनकर खाते थे। घीसू ने तो अपने जीवन के साठ वर्ष इसी तरह गुजार दिए थे और माधव भी अपने पिता के ही कदमों पर चल रहा था। या यों भी कहा जा सकता है कि माधव, घीसू का नाम और भी अधिक उजागर कर रहा था। उसका विवाह भी न जाने कैसे हो गया, लड़की भली थी उसने उस खानदान की व्यवस्था की, पिसाई करके या घास छीलकर वह दो जून की रोटी के लिए आटे का जुगाड़ करती और उन दोनों के पेट भरती थी। तब से वे दोनों और भी अधिक आराम तलब हो गए थे, कहीं वे काम पर ही नहीं जाते थे।

साल भर बाद माधव की पत्नी बुधिया प्रसव वेदना से कराहने लगी। एक दिन उसे प्रसव की अपार वेदना हो रही थी, पर उनमें इतना आलस्य भरा हुआ था कि वे उसे देखने भी नहीं गए, दाई आदि का प्रबंध तो दूर, लेटे-लेटे ही वे बुधिया के प्रसव पीड़ा की कराह सुनते रहे। न बाप उठा न बेटा। दोनों कहीं से आलू चुराकर लाए थे और उन्हें आग में भून रहे थे। माधव का भय था कि अगर वह उठकर बुधिया को देखने गया तो उसका बाप घीसू काफी अधिक आलू अकेले ही खा जाएगा। उन्हें यह भी उम्मीद थी कि वेदना से कहीं वह मर न जाए, पर इसकी भी उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। यदि एक और खाने वाला आ गया तो क्या होगा, इससे तो अच्छा है कि दोनों ही मर जाएँ। आलू खा कर दोनों ने पानी पीया और वहीं अलाव के पास अपनी धोतियाँ ओढ़कर पाँव पेट में ड़ाले सो गए। बुधिया के कराहने की ओर उन्होंने ध्यान ही नहीं दिया, और इसी प्रसव वेदना में तड़पते हुए उसके प्राण भी निकल गए।

सुबह देखा तो यह पाया कि बुधिया के मुँह पर मक्खी भिनक रही थी, और बच्चा तो उसके पेट में ही मर गया था। सारा शरीर लहू से सना हुआ था। माधव और घीसू दोनों हाय-हाय

कर छाती पीटने लगे। पड़ोसियों ने सुना तो दौड़कर आए और उन दोनों को समझाने लगे और तब वे दोनों बुधिया के कफन और लकड़ी के बारे में सोचने लगे। घर में एक पैसा भी न था, दोनों जमींदार के पास गए, हालाँकि वह उनसे घृणा करता था, पर दीनता, रोना और गिड़गिड़ाना देखकर दो रूपए उनकी ओर फेंक दिए, फिर तो दोनों ने जमींदार के नाम की दुहाई दे कर गाँव के बनिए महाजनों से भी कुछ पैसे ले लिए। जब जमींदार साहब ने पैसे दिए तो भला वे कैसे मना कर सकते थे? थोड़ी ही देर में घीसू और माधव की जेब में पाँच रूपए इकट्ठा हो गए, कहीं से अनाज मिला तो कहीं से लकड़ी।

दोपहर को दोनों बाजार से कफन लाने चल दिए, परन्तु बाजार पहुँचकर घीसू की नीयत बदल गई। उसने अपने बेटे माधव को सुझाव दिया कि, जो मर गया उस पर अच्छा कफन ड़ालने से क्या फायदा? इसलिए कोई घटिया सा कपड़ा ही देख लिया जाए। पर शाम तक घूमते-टहलते रहने के बाद भी उन्हें कुछ पसंद न आया। वास्तव में वे दोनों रूपए हजम कर जाना चाहते थे, और इसी प्रेरणा से वे एक शराब की दुकान के सामने जा खड़े हुए। घीसू ने हट्टी के सामने जा कर एक बोतल शराब का ऑर्डर दिया। थोड़ी देर बाद चिखौना भी आया, तली हुई मछलियाँ आई, दोनों कुज्जियों में डाल-डालकर शराब पीने लगे और जोश में आकर बकने भी लगे। मृतक बुधिया को आशीर्वाद देते हुए कहने लगे कि आज उसी के कारण यह खाना मिला है, इसलिए उसे भी स्वर्ग मिलेगा। वह बड़ी पुण्यात्मा है, लेकिन फिर उसके सामने चिंता थी कि लोगों से क्या कहेंगे कि कफन क्यों नहीं लाए? सारे पैसे तो समाप्त हो गए थे।

माधव की बात पर घीसू बड़ी ही बेकार हँसी हँसा, और उसने ही सुझाया कि कह देंगे पैसे जेब से खिसक गए। उन्हीं को खोजने में इतनी देर भी लग गई। उसकी यह तरकीब सुनकर माधव भी दिल खोलकर खूब हँसा, उसने सोचा कि बुधिया तो मर गई, पर उसी के बहाने आज खाने को भी खूब मिला। आधी बोतल समाप्त हो जाने पर माधव सामने की दुकान से गरमा गरम पूरियाँ, चटनी, आचार और कचौडियाँ ले आया, दोनों दो सेर पूरियाँ खा गए। उन्होंने सोच लिया था कि पड़ोसी कफन का प्रबंध तो करेंगे ही, हाँ पर अब उन्हें पैसे नहीं मिलेंगे। मरे को कौन ऐसे छोड़ देता है भला? भरपेट खाकर माधव ने बची हुई पूरियों की पत्हल उठाकर एक भिखारी को दे दी, जो काफी देर से वहीं खड़ा उसकी ओर भूखी आँखों से देख रहा था। उसने इस देने का आनन्द और उल्लास का अनुभव जीवन में पहली बार ही किया।

खा-पीकर दोनों खूब बकने लगे, घीसू तो दार्शनिकों जैसी बाते करने लगा। प्रलाप और उन्माद दोनों ही उन पर छा रहे थे। पहले तो बुधिया की दयालुता और सहृदयता का वर्णन करते हूए उसे सीधे वैकुण्ठ को पहुँचाते रहे और नशे की हालत में उसके दुख की कल्पना करके दोनों आँखों पर हाथ रखकर रोने का अभनिय कर रहे थे।

१२.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

'कफन' कहानी में मुंशी प्रेमचंद ने मानवीय दुर्बलताओं का सफल एवं बड़ा ही यथार्थ चित्रण किया है। इसके सभी पात्र स्वाभाविक हैं, और उनका आधार मनोवैज्ञानिक है। घीसू और माधव समाज की आर्थिक विषमता में शोषित वर्ग के प्रतिनिधि हैं। उनके चरित्रों में शोषित

वर्ग की विपन्नता और उपजीविता साकार हो उठी है। इसमें तीन प्रमुख और उपयोगी पात्र हैं – बुधिया, माधव और घीसू | इनमें से घीसू का चरित्र ही अधिक महत्वपूर्ण है। बुधिया, घीसू और माधव का चरित्र विकसित करने के लिए ही कहानी में प्रस्तुत किया गया है। क्योंकि बुधिया के निधन से ही उनके चरित्र का निखार होता है। प्रेमचंद ने इन दोनों का चरित्र व्याख्यात्मक शैली में न देकर ध्वन्यात्मक रूप में देने का प्रयास किया है। दोनों ही कफन के लिए मिले रूपयों से पहले पेट भर खाना चाहते हैं, पर एक दूसरे से कह भी नहीं सकते हैं। इसकी चित्र कुशलता इस तरह से व्यक्त की गई है -

'माधव बोला-लकड़ी तो बहुत है, अब कफन लेना चाहिए।

तो चलो कोई हलका सा कफन ले लें।

हाँ और क्या? लाश ढोते-ढोते रात हो जाएगी रात को कफन कौन देखता है।

कैसा बुरा रिवाज है कि जिसे जीते जी तन ढँकने को चीथड़ा भी न मिले, उसे मरने पर नया कफन चाहिए।'

दोनों ही एक-दूसरे के मन की बात ताड़ रहे थे, बाजार में इधर-उधर घूमते रहे। कभी इस बजाज की दुकान पर गए, कभी उस बजाज की दुकान पर, मगर कुछ जँचा नहीं, यहाँ तक कि शाम हो गई, दोनों न जाने किस प्रेरणा से एक मधुशाला के सामने जा पहुँचे और जैसे किसी पूर्व निश्चित योजना से अन्दर चले गए। पात्रों के इस मन: स्थिति की सूक्ष्म विवेचना प्रेमचन्द के कुशल लेखन कला का सर्वोत्तम परिचायक है। कफन कहानी के पात्रों के मध्य संवाद एक लड़ी की भाँति हैं, जो पात्रों की मन:स्थिति का बोध कराने के साथ-साथ कथानक को भी गति प्रदान करते हैं। पाठकों में उत्साह और उत्सुकता उत्पन्न करते हैं। और कहानीकार प्रेमचंद की कलात्मकता, वाक्पटुता, सूक्ष्मता तथा सम्बद्धता का भी परिचय देते हैं।

'कफन' कहानी के संवाद, पात्रों की मानसिक स्थिति और उनके आंतरिक विचारों का सम्यक परिचय देते हैं। यह चित्रण भी केवल संवादों के माध्यम से ही हो सकता है। घीसू और माधव की मनोव्यथा और अकर्मण्यता पर प्रकाश ड़ालने वाले संवाद कुछ इस तरह से हैं -

'घीसू ने कहा मालूम होता है, बचेगी नहीं। सारा दिन दौड़ते हो गया। जा देख तो आ।

माधव चिढ़कर बोला-मरना ही है तो जल्दी मर क्यों नहीं जाती, देखकर क्या करूँ ?

'तू बड़ा बेदर्द है बे। साल भर जिसके साथ सुख, चैन से रहा उसी के साथ इतनी बेवफाई।'

'तो मुझसे तो उसका तड़पना, हाथ-पाँव पटकना नहीं देखा जाता।'

इस कहानी के संवादों में पात्रों का व्यक्तित्व भी है, और चरित्र चित्रण के माध्यम से कथानक की गति भी।

१२.४ 'कफन' कहानी का उद्देश्य

'कफन' कहानी मुंशी प्रेमचंद की एक यथार्थवादी कहानी है, मनोवैज्ञानिक यथार्थ की रचना होने के कारण इसका उद्देश्य है, शोषण और गरीबी से उत्पन्न अकर्मण्यता और लापरवाही - उपजीविका का वास्तविक चित्रण। प्रेमचन्द यहाँ शोषण और अन्याय के विरूद्ध हैं। वे कहते है कि – 'जितने धनी हैं, वे सबके सब लुटेरे हैं, पक्के लुटेरे डाकू। कल मेरे पास रूपए हो जाएँ और मैं एक धर्मशाला बनवा दूँ, तो देखिए मेरी कितनी वाहवाही होती है। कौन पूछता है कि मुझे दौलत कहाँ से मिली? मानवता का यही शाश्वत प्रश्न 'कफन' कहानी में व्यक्त हुआ है।

१२.५ सारांश

'कफन' कहानी प्रेमचंद की कहानी कला का उत्कृष्ट नमूना होते हुए भी कुछ सवाल मन में उठाती है, विशेषकर कहानी की बुनियादी घटना को लेकर कि सच में क्या कोई व्यक्ति इतना संवेदनहीन हो सकता है कि घर की गाड़ी खींचने वाली स्त्री अथवा किसी भी प्राणी की दर्दनाक मौत को यूँ ही निर्विकार होकर देखता रहे ?, दूसरे भारतीय परिवारों और समाज की जैसी संरचना है, उसमें सामुदायिक भावना की प्रबलता है। परिवार में स्त्रियाँ न हों तो आस-पड़ोस की स्त्रियाँ बीमारी या प्रसूति में बिना बुलाए ही मदद को आ जाती है। ऐसे में इस कहानी में बुधिया का अकेले तड़प-तड़प कर दम तोड़ना, नितांत अविश्वसनीय लगता है। अपनी आतंरिक संरचना में यह एक लाश को कफन मुहैया कराने की कहानी भर नहीं है, बल्कि इस कटु सत्य की ओर हमारी बेपरवाही का संकेत करती है कि हमारी समाज व्यवस्था मर कर भी सड़ाँध फैला रही है, और अपने ही ख्यालों में जीते हुए हम न उसकी मौत के वस्तु सत्य को स्वीकार कर पा रहे हैं, और न उसके अंतिम संस्कार की व्यवस्था कर रहे हैं, और नहीं उनके स्थान पर किसी बेहतर वैकल्पिक व्यवस्था पर विचार ही कर रहे हैं? इस प्रकार यह कहानी अपनी परिधि का विस्तार करते हुए किसी एक व्यक्ति की मौत की कहानी नहीं, व्यवस्था की मौत का खतरनाक अफसाना बन जाती है।

१२.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

i. 'कफन' कहानी के कथानक को स्पष्ट कीजिए।

ii. 'कफन' कहानी के पात्र-योजना को विस्तारपूर्वक समझाइए।

iii. 'कफन' कहानी की संवाद-योजना को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

१२.७ लघुत्तरी प्रश्न

i. घीसू का चरित्र-चित्रण कीजिए।

ii. माधव का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iii. बुधिया के चरित्र की विशेषताएँ लिखिए।

iv. 'कफन' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

muhotes.in

१२.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. कफ़न कहानी के रचनकार कौन हैं?

ii. कफ़न कहानी के प्रमुख पात्र कौन-कौन से हैं?

iii. कफ़न कहानी में किस समाज का चित्रण किया गया है?

iv. घीसू और माधव कफ़न के पैसों का क्या करते है?

v. बुधिया और माधव के बीच क्या रिश्ता है?

*****

munotes.in

१२.१

पुरस्कार - जयशंकर प्रसाद

इकाई की रूपरेखा

१२.१.० इकाई का उद्देश्य
१२.१.१ प्रस्तावना
१२.१.२ कथानक
१२.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण
१२.१.४ 'पुरस्कार' कहानी का उद्देश्य
१२.१.५ सारांश
१२.१.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न
१२.१.७ लघुत्तरी प्रश्न
१२.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१२.१.० इकाई का उद्देश्य

- इस इकाई के माध्यम से हम 'पुरस्कार' कहानी के कथानक को समझ पाएँगे।
- इस इकाई के माध्यम से हम 'पुरस्कार' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण का अध्ययन करेंगे।
- इस इकाई के माध्यम से हम 'पुरस्कार' कहानी के उद्देश्य को भी आसानी से समझ पाएँगे।

१२.१.१ प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद की कहानी कला उनकी प्रकृति की सहचरी है, जो सदैव उनके साथ समरसता की स्थिति में बनी है। इसीलिए प्रसाद के कहानियों की कला में एकरूपता और समरसता पाई जाती है। प्रसाद के कहानी की विशेषता यह भी है कि उनकी कहानियाँ प्राय: ऐतिहासिक वातावरण की सृष्टि में ही रची गई हैं। इनकी कहानियाँ अतीत की पुकार भी हैं। वे अपनी 'पुरस्कार' शीर्षक कहानी में जिस युग का चित्र खींचना चाहते हैं, उसकी साकार तस्वीर हमारी आँखों के सामने स्वत: खिंच जाती है। प्रसाद की ऐतिहासिक चेतना भी अद्भुत है। इस कला में उनकी बराबरी करने वाला कोई अन्य लेखक नजर नहीं आता। इस युग के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा वैयक्तिक जीवन मूर्त चित्र आँकने में उन्हें आशातीत सफलता मिली है। प्रसाद जी की 'पुरस्कार' शीर्षक कहानी व्यक्ति चरित्र के मानसिक द्वन्द्वों की अवधारणा भी है। उनकी इस कहानी के पात्र या कथानक किसी समाज या वर्ग का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। उनके मात्र सिर्फ मानव हैं जो आन्तरिक अभाव से पीड़ित रहते हैं। उनमें राग-विराग, पाप-पुण्य, सुख-दुख का घात-प्रतिघात होता रहता है।

munotes.in

उनके अन्तर्द्वन्द्व भी स्वाभाविक ही है। जीवन की कठोर परिस्थितियाँ उन्हें उत्तेजित करती हैं।

१२.१.२ कथानक

'पुरस्कार' कहानी कथाकार जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखी गई प्रसिद्ध कहानियों में से एक है। इस कहानी में लेखक ने मधूलिका के अन्तर्द्वन्द्व का बड़ा ही सुन्दर और यथार्थ चित्रण किया है। महाराज की सवारी आ रही है। सारी जनता उनके स्वागत के लिए खड़ी है। महाराज हाथी पर से उतरते हैं, जनता ने उनका स्वागत किया। वह दिन कोशल के प्रसिद्ध उत्सव का दिन था। इस उत्सव में महाराज को एक दिन के लिए कृषक बनना पड़ता था| इंद्र की पूजा की जाती तथा नगर निवासी खूब आनन्द मनाते थे। हर साल यह उत्सव मनाया जाता था। अनेक राज्यों के राजकुमार भी इस उत्सव में भाग लेते थे। आज इस उत्सव के लिए मधूलिका भी चुनी गई थी। मधूलिका बीजों का एक थाल लेकर महाराज के साथ-साथ चल रही थी। महाराज उसी थाल में से बीज लेकर खेत में ड़ाल रहे थे। मगध का एक राजकुमार अरूण भी अपने रथ पर सवार होकर यह दृश्य देख रहा था। उत्सव समाप्त होने के पश्चात महाराज ने मधूलिका को कुछ स्वर्ण मुद्राएँ पुरस्कार के रूप में दीं। रिवाज के अनुसार मधूलिका की भूमि अब राजा की हो चुकी थी, परन्तु मधूलिका ने राजा पर न्यौछावर करके वे स्वर्ण मुद्राएँ दान कर दीं। यह देखकर राजा को क्रोध आ गया। तभी मधूलिका ने कहा कि यह मेरे पूर्वजों की भूमि है, मैं इसे बेच नहीं सकती। तभी मंत्रियों ने महाराज को बताया कि मधूलिका वाराणसी युद्ध के अन्यतम वीर सिंहमित्र की एकमात्र कन्या है। उसके पिता ने मगध के विरूद्ध उस युद्ध में कोशल को विजय दिलाई थी। भूमि तो अब महाराज की हो ही चुकी थी। महाराज चुपचाप वहाँ से चले गए। मधूलिका ने फिर उत्सव में भाग नहीं लिया। वह अपने खेत की सीमा पर मधूक वृक्ष के नीचे चुपचाप बैठी रही।

राजकुमार अरूण ने भी रात के उत्सव में भाग नहीं लिया। उसे नींद भी नहीं आ रही थी। अपने घोड़े पर सवार होकर वह नगर द्वार की ओर चल पड़ा। नगर में प्रवेश करने के पश्चात वह इधर-उधर घूमता रहा और अन्त में उसी मधूक वृक्ष के नीचे जा पहुँचा, जहाँ मधूलिका सो रही थी। तभी कोयल के बोलने से मधूलिका की नींद खुल गई और अपने सामने एक अपरिचित युवक को देखकर उठ गई।

प्रस्तुत कहानी का कथानक कुछ-कुछ ऐतिहासिक लगता है। परन्तु इस में कल्पना का अधिक मिश्रण है। यही जयशंकर प्रसाद की निजी विशेषता है। इस कहानी में कोशल के वीर देशभक्त सिंहमित्र की पुत्री मधूलिका और दूसरे राज्य मगध के राजकुमार अरूण की प्रेमकथा का वर्णन है। मधूलिका राजकुमार अरूण के प्रणय निमंत्रण स्वीकार करके उसकी इच्छानुसार अपने राज्य के विरूद्ध एक बार तो भागीदार हो जाती है, परन्तु उसकी अन्तर्मात्मा उसे धिक्कारती है। और अन्तत: वह षड़यंत्र का उद्घाटन करके राज्य की रक्षा करती है। जब राजा उसे पुरस्कार माँगने की बात करते हैं, तो वह प्राणदण्ड पाने वाले राजकुमार के साथ, अपने लिए भी प्राणदण्ड की ही माँग करती है। यहाँ लेखक ने प्रेम पर कर्तव्य की विजय का बड़ा ही मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी वर्णन किया है। कहानी का अंत तो बड़ा ही नाटकीय बन गया है। इस कहानी का कथानक (कथावस्तु) संक्षिप्त होते हुए भी भावपूर्ण एवं सरल है। इस कथानक के माध्यम से लेखक जयशंकर प्रसाद ने प्रेम एवं कर्तव्य

के द्वन्द्व को दिखाकर अंतत: प्रेम पर कर्तव्य की विजय को उद्घोषित किया है। सुगठितता, संभाव्यता, रोचकता, भावुकता, स्वाभाविकता तथा काव्यमयता ही इस कथानक के उल्लेखनीय गुण हैं। कथानक का अंत तो बड़ा ही प्रसादात्मक है। मधूलिका का कथन 'तो मुझे भी प्राणदण्ड मिले।' काफी देर तक पाठकों के हृदय पटल पर गूँजता रहता है।

१२.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

प्रस्तुत कहानी 'पुरस्कार' वीर बाला मधूलिका की कहानी है । कहानीकार ने उसके चारित्रिक मार्मिक द्वंद्व का मार्मिक उदघाटन किया है| मधूलिका ही इस कहानी की नायिका है। वह देश-भक्ति एवं सच्चे प्रेम की साक्षात प्रतिमूर्ति है। उसमें जहाँ एक तरफ प्रेमिका का कोमल हृदय धडकता है, वहीं दूसरी तरफ देशप्रेम की भावना भी उसके भीतर बलवती हुई है। अपनी जन्मभूमि कोशल की रक्षा में वीरगति प्राप्त करने वाले अपने पिता सिंहमित्र के उच्च मानवीय संस्कार भी मधूलिका को प्राप्त हैं। कर्तव्य और प्रेम से उत्पन्न अंतर्द्वन्द्व में मधूलिका का विराट व्यक्तित्व और चरित्र विकसित होता है। उसके महिमामयी चरित्र की यह सबसे महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय विशेषता है। वह एक स्वप्रेरित एवं स्वत: संचालित चरित्र भी है। कहानी का नायक अरूण है जो कि मगधराज्य का राजकुमार है। उसे भी यहाँ एक सच्चे प्रेमी के रूप में चित्रित किया गया है । एक प्रकार से 'पुरस्कार' कहानी चरित्र प्रधान कहानी भी है। इनके अतिरिक्त कोशल के महाराजा तथा मंत्रियों के चरित्र गौण होने पर भी बड़े ही प्रभावशाली जान पड़ते हैं।

मधूलिका:

'पुरस्कार' कहानी का केन्द्रीय नारी पात्र मधूलिका ही है। उसी के चरित्र के चारो तरफ सम्पूर्ण कथानक चक्कर लगाता रहता है। कहानीकार प्रसाद ने मधूलिका के चरित्र के माध्यम से अपने उद्देश्य को भी व्यंजित किया है। यद्यपि इस कहानी में मधूलिका के खेत को ही महा कृषि महोत्सव के लिए चुना गया है। परन्तु वह अपनी भूमि से अलग नहीं होना चाहती। महाराज ने स्वर्ण मुद्राओं से भरा हुआ एक थाल खेत के पुरस्कार के रूप में दिया था। मधूलिका ने थाल को सिर से लगाया और स्वर्ण मुद्राओं को महाराज पर न्यौछावर करके विखेर दिया। महाराज को क्रोध भी आया, परन्तु मधूलिका ने निवेदन किया, 'देव', यह मेरे पितृ-पितामहों की भूमि है। इसे बेचना अपराध है, इसीलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य से बाहर है। अन्तत: वह भूमि का मूल्य स्वीकार नहीं करती है।

इस कहानी में मधूलिका के चरित्र के माध्यम से प्रेम और कर्तव्य के विचित्र अंतर्द्वंद्व को चित्रित किया गया है। मधूलिका के मन में एक ओर मगध के राजकुमार अरूण के प्रति प्रेम है, वह उसे हृदय से चाहती है । राजकुमार भी उसे अपनी महारानी बनाना चाहता है, राजकुमार अरुण जब उसे आश्वासन देता है तो वह उसके षड़ंयत्र में भागीदार बनने को तैयार हो जाती है, परन्तु कर्तव्य भावना अचानक उसे झकझोरती है और वह सेनापति को षड़यत्र से अवगत कराती है। वह बहुत लम्बे समय तक द्वन्द्वग्रस्त रहती है। अन्तत: वह देश के प्रति कर्तव्य भावना पर विजय प्राप्त करती है।

अरूण:

अरूण 'पुरस्कार' कहानी का प्रमुख पुरूष पात्र है। वह मगध राज्य का राजकुमार है, और कोशल राज्य में पूजा उत्सव देखने आया था। वह प्रथम दृष्टि में ही मधूलिका के अपूर्व सौन्दर्य के प्रति आकर्षित हो जाता है। वह उसे अपनी महारानी बनाने के सपने भी देखने लगता है| अरुण प्रेम के प्रति संपूर्ण रूप से समर्पित है। वह एक किसान बाला को अपनी जीवनसंगिनी बनाना चाहता है| वह अपने प्यार की रक्षा हेतु अपने प्राणों की बाजी भी लगा सकता है। अरूण एक साहसी तथा निडर युवक भी है, उसे अपने युद्ध कौशल और शक्ति का पूरा भरोसा है। वह मधूलिका से कहता भी है कि तुम मेरी खड्ग का आतंक युद्ध में देखना। अरूण एक महत्वाकांक्षी युवक भी है। उसे मगध से विद्रोही घोषित करके निकाल दिया गया था, वह कोशल में मधूलिका की शरण लेता है और कोशल का सम्राट बनने की आकांशा रखता है तथा उसके लिए प्रयास भी करता है, किन्तु इसमें वह असफल हो जाता है।

वैसे तो राजकुमार अरूण सच्चा प्रेमी और वीर पुरूष भी है, किन्तु वह षड्यंत्र रचकर कोशल के नरेश को पराजित करना चाहता है। इसमें वह मधूलिका से सहायता चाहता है। वह कोशल नरेश के दूर चले जाने पर षड्यंत्र करना चाहता है, किन्तु उसका यह षड्यंत्र मधूलिका समझ जाती है, और उसे पकड़वाकर स्वयं को देश प्रेमी भी सिद्ध करती है।

१२.१.४ 'पुरस्कार' कहानी का उद्देश्य

महाकवि जयशंकर प्रसाद प्राय: अतीत के वर्णनों द्वारा वर्तमान का भी चित्रण बड़े ही उद्देश्य परक ढंग से करते हैं। प्रस्तुत कहानी के उद्देश्य के सन्दर्भ में कोशल और मगध के पुराने इतिहास को कहानी का आधार बनाया गया है। इस कहानी का प्रमुख उद्देश्य प्रेम और कर्तव्य के अंतर्द्वंद्व को चित्रित करते हुए देशभक्ति के प्रति अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करता रहा है। कहानीकार प्रसाद ने इस कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण के माध्यम से अपने उद्देश्यों को भी व्यंजित किया है। प्रसाद जी की कहानियाँ ऐतिहासिकता लिए हुए प्राय: भावना प्रधान होती है। उनकी पृष्ठभूमि प्रागैतिहासिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक या विशाल भारत के निर्माण पर भी आधारित होती हैं। भावों को कहानी के रूप में ढालने के लिए वे विराट कथा का ही आश्रय लेते हैं। पुन: अपनी उस कल्पना को साहित्यिक रूप प्रदान करने हेतु प्रचुर अभिव्यंजना एवं विन्यास शक्ति प्रयोग भी किया है। पुरस्कार कहानी वैसे तो घटना प्रधान है, परंतु इस कहानी का प्रमुख उद्देश्य प्रेम और कर्तव्य का द्वन्द्व दिखलाकर अंतत: प्रेम पर कर्तव्य की विजय का दिग्दर्शन करना ही है।

१२.१.५ सारांश

जयशंकर प्रसाद की 'पुरस्कार' कहानी के सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि इसमें कथाकार/रचनाकार जयशंकर प्रसाद जी ने व्यक्ति-चरित्रों के मानसिक द्वन्द्वों की अवधारणा को व्यक्त किया है। उनकी इस कहानी का कोई भी पात्र किसी समाज या सम्प्रदाय या वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। प्रसाद जी पहले कवि थे और बाद में कहानीकार, इसलिए उनकी 'पुरस्कार' शीर्षक कहानी में कहीं-कहीं भाव प्रवणता भी दिखाई देती है।

काव्य का कल्पना एवं भावुकता का प्रयोग भी प्रसाद की इस चर्चित कहानी में दिखाई देता है। जहाँ-जहाँ लेखक ने भावुकता तथा कल्पना को व्यावहारिक रूप दिया है, वहाँ का गद्य स्निग्ध और काव्यमय है, इससे जयशंकर प्रसाद की प्रतिभा की गहराई का भी स्पष्ट पता चलता है। इसमें कहानीकार जयशंकर प्रसाद ने सरल, सहज और प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग किया है। लेकिन उनकी यह भाषा संस्कृतनिष्ठ साहित्यिक हिन्दी भाषा है | इसे काव्यमयी भाषा भी कहा जा सकता है। तत्सम शब्दों की अधिकता के कारण कुछ स्थलों पर कहानी क्लिष्ट हो गई है, फिर भी कहानीकार ने सहजता और सरलता को बनाए रखा है। कुछ जगहों पर उर्दू तथा फारसी के शब्दों का भी सार्थक प्रयोग हुआ है। इस कहानी में वर्णनात्मक संवाद तथा अलंकृत शैलियों का प्रयोग भी दिखाई देता है।

१२.१.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

i. 'पुरस्कार' कहानी के कथानक को स्पष्ट कीजिए।

ii. कहानी के तत्वों के आधार पर पुरस्कार कहानी की विवेचना कीजिए।

iii. पुरस्कार कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

iv. पुरस्कार कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

१२.१.७ लघुत्तरी प्रश्न

i. मधूलिका का चरित्र-चित्रण कीजिए।

ii. अरूण का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iii. पुरस्कार कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

१२.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. पुरस्कार किसकी कहानी है?

ii. कहानी का नायक अरुण किस देश का राजकुमार है?

iii. पुरस्कार कहानी किस विषय पर केन्द्रित है?

iv. मधुलिका किस कहानी की नायिका है?

v. मधुलिका के पिता किस राज्य के सम्राट थे?

*****

munotes.in

१३

सच बोलने की भूल - यशपाल

इकाई की रूपरेखा

१३.० इकाई का उद्देश्य
१३.१ प्रस्तावना
१३.२ कथानक
१३.३ पात्र एवं चरित्र चित्रण
१३.४ 'सच बोलने की भूल' कहानी का उद्देश्य
१३.५ सारांश
१३.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न
१३.७ लघुत्तरी प्रश्न
१३.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१३.० इकाई का उद्देश्य

- इस इकाई के माध्यम से हम यशपाल की कहानी 'सच बोलने की भूल' को समझ पाएँगे।
- इसके माध्यम से कहानी के कथानक को भी अच्छी तरह समझा जा सकता है।
- इस इकाई के माध्यम से ही 'सच बोलने की भूल' कहानी में आए उत्कृष्ट पात्रों एवं उनके चरित्र चित्रण को भी देखा समझा जा सकता है।

१३.१ प्रस्तावना

यशपाल के लेखकीय सरोकारों का उत्स सामाजिक परिवर्तन की उनकी आकांक्षा, वैचारिक प्रतिबद्धता और परिष्कृत न्याय बुद्धि भी है। यह आधारभूत प्रस्थान बिन्दु उनकी रचनाओं में जितनी स्पष्टता के साथ अभिव्यक्त हुए हैं, उसकी अपेक्षा उनकी कहानियों में वह ज्यादा तरल रूप में, ज्यादा गहराई के साथ कथानक की शिल्प और शैली में व्यक्त होकर आते हैं। उनकी कहानियों का रचनाकाल चालीस वर्षों में फैला हुआ है। प्रेमचन्द के जीवनकाल में ही वे अपनी कथा यात्रा को आरम्भ कर चुके थे, यह अलग बात है कि उनकी कहानियों का प्रकाशन थोड़ा देरी से हुआ।

एक कहानीकार के रूप में कथाकार यशपाल की विशिष्टता यह है कि उन्होंने प्रेमचन्द के प्रभाव से मुक्त और अछूते रहते हुए अपनी कहानी कला का विकास किया | उनकी कहानियों में संस्कारगत जड़ता और नए विचारों का द्वन्द्व जितनी प्रखरता के साथ उभरकर आता है, उसने आने वाली पीढ़ी के कथाकारों के लिए एक नई राह बनाई है, जो आज तक चली आ रही है। वैचारिक निष्ठा, निषेधों और वर्जनाओ से मुक्त न्याय तथा तर्क की

munotes.in

कसौटियों पर खरा जीवन इत्यादि कुछ ऐसे जीवन मूल्य है, जिनके लिए हिन्दी कहानी यशपाल की सदा ऋणी रहेगी।

१३.२ कथानक

'सच बोलने की भूल' यशपाल की एक महत्वपूर्ण और संवेदना के धरातल पर बड़ी कहानी मानी जाती है। यशपाल जी की इस कहानी में सच बोलने के पश्चाताप को ही केन्द्रित किया गया है। इसमें साधारण मनुष्य की मनोदशा जैसे भय, आतंक, कौतुहल इत्यादि का बड़ा ही यथार्थ चित्रण कथाकार द्वारा किया गया है। पहाड़ पर सूर्यास्त का चित्र देखने हेतु लालायित लेखक अपनी सात साल की बेटी के साथ अनजानी जगह और अनजाने रास्तों पर बगैर सोचे समझे निकल पड़ता है। रात में वह इन दुर्गम पहाड़ी रास्तों में भटक जाता है। बर्फीली अंधेरी रात में मीलों तक चलते रहने के बाद उसे दूर-दूर तक कहीं रूकने का ठिकाना नजर नहीं आता है, और अन्त में वह एक झोपड़े को देखकर राहत महसूस करता है। परन्तु उस झोपड़े के मालिक के क्रूर और कर्कश व्यवहार से वह काफी आहत होता है। शरण मिलने पर रात भर वह डरा और सहमा सा रहता है। झोपड़ी का मालिक बच्ची के गले में पहनी कंठी पाने के लालच में ही उन्हें शरण देता है, परन्तु जब लेखक उन्हें उस कंठी की सच्चाई के बारे में बताता है तो उस झोपड़े के मालिक और मालकिन का व्यवहार भी बदल जाता है। वे लेखक से कहते भी हैं कि तुम शहरी लोगों का कोई भरोसा नहीं है, तुम्हारे ऊपर बिल्कुल भरोसा नहीं किया जा सकता। इस कहानी के कथानक से ही स्पष्ट हो जाता है कि लेखक ने इसमें सच बोलने की भूल जैसे अपराध को स्वीकार कर लिया है।

१३.३ पात्र एवं चरित्र चित्रण

प्रस्तुत कहानी 'सच बोलने की भूल' में किसी पात्र विशेष का चरित्र-चित्रण नहीं किया गया है, बल्कि लेखक यशपाल जी ने स्वयं अपने, अपनी पत्नी तथा अपनी सात वर्षीय बिटिया के माध्यम से पहाड़ी प्रदेश में होने वाली यात्राओं का ही संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया है। जिस प्रदेश विशेष की यात्रा लेखक यहाँ प्रस्तुत करता है, उसमें बहुत छोटे-छोटे पड़ाव भी हैं, उन्होंने अपने स्वास्थ सुधार हेतु पहाड़ी प्रदेशों में कुछ दिनों की छुट्टियाँ व्यतीत करने की योजना बनाई थी। एक खच्चर उन्होंने भाड़े पर ले लिया था, जिस पर उनकी गृहस्थी के कुछ सामान लादे गए थे। जो जगह लेखक को अधिक पसन्द आ जाती, वहाँ वे अपनी पत्नी और बच्ची के साथ दो दिनों तक ठहर जाया करते थे। लेखक पहाडियों पर किसी ड़ाक बँगले में ठहरा हुआ था। अगले दिन लेखक सूर्यास्त से तीन घण्टे पूर्व ही चोटी की ओर बढ़ गया, और अपनी सुविधा के लिए उसने टार्च भी हाथ में ले लिया था। उन्हें बँगले के चौकीदार ने बताया- "साहब लोग आते हैं तो चोटी से सूर्यास्त का दृश्य जरूर देखते हैं।" लेखक अपने ही चरित्र-चित्रण के माध्यम से यह बताता है कि पहाड़ की चोटी पर पहुँकर पश्चिम की ओर बर्फानी पहाड़ों की श्रृंखलाएँ अनेक इन्द्रधनुषों के समान झिलमिलाने लगीं। हिम के स्फटिक कणों की चादरों पर रंगों के खिलवाड़ के मन उमग-उमग उठता था। बच्ची उल्लास से किलक-किलक उठती थी।

इस कहानी में लेखक, जो कि पात्र के रूप में स्वयं पहाड़ी दृश्यों का तथा सूर्यास्त का चित्रण अपने मनोगत भावों के माध्यम से वह स्वयं करता है। लेखक को उस पहाड़ी से सूर्य आग

की बड़ी थाली जैसा प्रतीत हो रहा था, और वह थाली भी बरफ की शूली पर, अपने किनारे पर खड़ी वेग से घूम रही थी। लेखक उसका चित्रण भी कुछ इस तरह से करता हैं- "आग की थाली का शनै: शनै: बरफ के कंगूरे की ओट में सरकते जाना बहुत ही मनोहारी लग रहा था। हिम के असम विस्तार पर प्रतिक्षण रंग बदल रहे थे। बच्ची उस दृश्य को विस्मय से मुँह खोले अपलक देख रही थी। दुलार से समझाने पर भी वह पूरे सूर्य के पहाड़ी की ओट में हो जाने से पहले लौटने के लिए तैयार नहीं हुई।"

इस कहानी में लेखक की सात वर्षीय बच्ची भी एक चरित्र का ही प्रतिनिधित्व करती है। रास्ता भूल जाने के बाद उसे भी अपने मन में घर तक न पहुँच पाने का भय कहीं न कहीं सताता रहता है। लेखक भी बच्ची से अपने मन की घबराहट को छिपाए हुए था, सिर्फ इसलिए कि कहीं वह बच्ची भी भयभीत न हो जाए, इसलिए उसे बहलाने के लिए और उसे थकावट का अनुभव न हो, इसके लिए वह बच्ची को कहानियाँ सुनाने की कोशिश करता है। किन्तु लेखक भी यह जानता है कि ज्यादा देर तक छिपाया या भुलाए रखना कठिन है, क्योंकि वह बच्ची भी बहुत बुरी तरह से थक चुकी थी। वह तो चल भी नहीं पा रही थी, लेखक ने उसे जल्द से जल्द बँगले पर पहुँच जाने का आश्वासन देकर उत्साहित किया, और फिर उसे अपनी पीठ पर उठा लेता है। बच्ची को कहानी सुनाकर भी बहलाना अब संभव न रह गया, क्योंकि वह भी बेतरह थक कर चूर हो गया था। लेखक ने इस कहानी में यह भी स्पष्ट कर दिया है, कि आज हमारी मानवीय संवेदना इस कदर मर चुकी है कि हम किसी के साथ भी अपनी सहानुभूति प्रकट करने में संकोच का अनुभव करते हैं।

लेखक या पात्र की विशेषता यह है कि वह अपने चरित्र को स्वयं ही गढ़ने का प्रयत्न करता है। इस कहानी में झोपड़ी में रहने वाले एक किसान पति-पत्नी से भी संवाद करता है| "मै झोपडी के बाड़े के मोहरे पर पहुँचा तो कुत्ता मालिक को चेताने के लिए बहुत जोर से भौका। झोपड़ी का दरवाजा और खिड़की बन्द थे। मेरे कई बार पुकारने और कुत्ते के बहुत ऊतेजना से भौंकने पर झोपड़ी के ऊपर के भागों में छोटी सी खिड़की खुली और झुँझलाहट की ललकार सुनाई दी, 'कौन है, इतनी रात गए कौन आया है?'

झोपड़ी के भीतर अँधेरे में से आती ललकार को उत्तर दिया- "मुसाफिर हूँ, रास्ता भटक गया हूँ, छोटी बच्ची साथ है। पड़ाव के डाक बँगले पर जाना चाहता हूँ।"

खिड़की में से किसान ने सिर बाहर निकाला और क्रोध से फटकार दिया – "तुम शहरी हो न! तुम आवारा लोगों का देहात में क्या काम? चोरी चकारी करने आए हो। भाग जाओ नहीं तो काटकर दो टुकडे कर देंगे, और कुत्तों को खिला देंगे।"

झोपड़ी वाले किसान से प्रार्थना करते हुए लेखक पुन: कहता है – "भाई दया करो, मैं अकेला होता तो जैसे-तैसे जाड़े और ओस में भी रात काट लेता, परन्तु इस बच्ची का क्या होगा? हम पर दया करो, हमें कहीं भीतर बैठ जाने भर की जगह दे दो। उजाला होते ही हम चले जाएँगे।"

इस प्रकार का चित्रण करना यशपाल जैसे कहानीकार के कहानी कला की विशिष्टता का ही प्रमाण है। उन्होंने अपनी इस कहानी में छोटे-छोटे पात्रों से कहानी को जीवंत बनाने का प्रयास किया है। इस कहानी के माध्यम से कथाकार यशपाल को कहानी का प्लॉट गढ़ने में असाधारण सफलता मिली है। उन्हें कोई भी बात करनी होती है तो वे उसी के अनुकूल

पात्र, उनके चरित्रों और परिस्थितियों का निर्माण कर लेते हैं। वे बताते हैं कि कहानी का मुख्य आधार घटनाओं के वर्णन में नहीं, बल्कि घटना के चुनाव और क्रमिक विकास में होता है। यशपाल की कहानी 'सच बोलने की भूल' का कथानक घटना प्रधान है, अर्थात कहीं-कहीं पर तो घटनाएँ उद्देश्य के अनुकूल हुई हैं, और कहीं-कहीं ऐसा नहीं हो पायी है। ऐसे स्थलों पर बिना कोई गहरा प्रभाव छोड़े ही यह कहानी समाप्त हो जाती है। उनकी कई कहानियाँ उद्देश्य प्रधान हैं अपने इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जिस तरह की परिस्थितियों का निर्माण यशपाल करते हैं, वे यथार्थ न होने के बाद भी यथार्थपरक लगती हैं। 'सच बोलने की भूल' जैसे उनकी कहानी भी इसी कोटि में आती है। यशपाल ने अपनी इस कहानी में अपने वैयक्तिक जीवन का स्पर्श करते हुए 'मै' शैली का प्रयोग करते हैं| कहानी के दो-तीन पात्रों में किसी एक की भूमिका तो वे स्वंय करने को तैयार हो जाते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इसी वैयक्तिक स्पर्श के कारण यशपाल जैसे कथाकार की कहानियाँ अधिक हृदयस्पर्शी और सरस बन जाती हैं। इस दृष्टि से यशपाल की रचना-प्रक्रिया पर बात करते हुए डॉ. बच्चन सिंह ने कहा है कि यशपाल की रचना प्रक्रिया, प्रेमचन्द की रचना प्रक्रिया से मिलती जुलती है।'

१३.४ 'सच बोलने की भूल' कहानी का उद्देश्य

यशपाल जी की लगभग सभी कहानियाँ उद्देश्य प्रधान ही होती हैं। अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जिस तरह की परिस्थितियों का निर्माण वे करते हैं, वे यथार्थ न होकर भी यथार्थपरक ही लगती हैं। उनकी चर्चित कहानी 'सच बोलने की भूल' भी कुछ-कुछ इसी कोटि में आती हैं| यशपाल अपनी कहानियों में अपने वैयक्तिक जीवन का स्पर्श करते हुए 'मैं' शैली का प्रयोग करते हैं| कहानी 'सच बोलने की भूल' के तीन-चार पात्रों में से एक प्रमुख पात्र के रूप में वे स्वंय तैयार रहते हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि मानों वे कहानी को स्वतंत्र छोड़ना ही न चाहते हों। इसी वैयक्तिक स्पर्श के कारण उनकी कहानियों का उद्देश्य अधिक हृदयस्पर्शी और सरस बन जाता है। यशपाल की कहानी कला के उद्देश्य पर विचार करते हुए सुरेशचन्द तिवारी ने कहा है कि "यशपाल की कहानियों का आदि अन्त बहुत ही कलात्मक ढंग से होता है, और इस दृष्टि से वे समसामयिक कथाकारों में सर्वाधिक सफल हैं। पाठक हृदय किसी परिणाम को सोचता रहता है। किन्तु इस आकांक्षा के प्रतिकूल, वह दूसरा अन्त देखकर चौंक उठता है। यशपाल अपनी कहानी 'सच बोलने की भूल' का पूरा मोह अन्त तक की पंक्तियों के लिए सुरक्षित रखते हैं।"

१३.५ सारांश

यशपाल की कहानियों में कहीं न कहीं बौद्धिकता के दर्शन भी हमें होते हैं। जिसे वे आगे चलकर कथा का रूप देते हैं। डॉ. बच्चन सिंह ने कहा है कि "यशपाल की रचना प्रक्रिया प्रेमचन्द की रचना-प्रक्रिया से मिलती जुलती है। दोनों के मन में पहले कोई विचार उठता है, फिर पात्र, स्थिति, घटना आदि को अन्वेषित कर लिया जाता है, परन्तु यशपाल की कहानियों में कथा रस सर्वत्र मिलता है। वर्ग संघर्ष, मनोविश्लेषण और पैना व्यंग्य उनकी कहानियों की अन्य विशेषताएँ हैं। किसी सामाजिक अथवा नैतिक रूढ़ियों पर प्रहार करते हुए वे पाठकों के रूढ़ से संस्कारों पर गहरा आघात करते हैं। 'शॉक ट्रीटमेण्ट' का यह तरीका प्राय: उनकी प्रत्येक कहानी में मिलेगा।"

यशपाल की चर्चित कहानी में सारांश के तौर पर यह कहा जा सकता है, 'सच बोलने की भूल' जैसी कहानी में साधारण मनुष्य की मनोदशा, यथा आतंक, भय, कौतुहल आदि का बड़ा ही यथार्थ चित्रण यशपाल ने किया है। पहाड़ पर सूर्यास्त देखने को लालायित लेखक अपनी सात वर्षीय बेटी के साथ निकल पड़ता है, जो बड़ा ही कठिन कार्य प्रतीत होता है। रात्रि में वह दुर्गम पहाड़ी रास्ते पर भटक जाता है। बर्फीली अँधेरी रात में मीलों चलते रहने के बाद भी उसे गंतव्य कहीं दिखाई नहीं देता। अन्त में एक झोपड़े को देखकर वह राहत महसूस करता है। इस बात को कहानी में कथाकार यशपाल जी ने बड़ी ही सुगमता और कुशलतापूर्वक चित्रित किया है।

१३.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

i. 'सच बोलने की भूल' कहानी की कथावस्तु या कथानक लिखिए।

ii. 'सच बोलने की भूल' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

iii. यशपाल की कहानी 'सच बोलने की भूल' का मनोगत विश्लेषण कीजिए।

iv. 'सच बोलने की भूल' कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण कीजिए।

v. 'सच बोलने की भूल' कहानी की कहानी कला को स्पष्ट कीजिए।

१३.७ लघुत्तरी प्रश्न

i. 'सच बोलने की भूल' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

ii. 'सच बोलने की भूल' कहानी का सारांश लिखिए।

iii. 'सच बोलने की भूल' कहानी की समीक्षा कीजिए।

iv. कहानी में आए लेखक का चरित्र चित्रण स्पष्ट कीजिए।

v. 'सच बोलने की भूल' कहानी पर टिप्पणी लिखिए।

१३.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. सच बोलने की भूल किसकी कहानी है?

ii. सूर्यास्त का दृश्य देखने लेखक कहाँ जाता है?

iii. बारह घंटे किसकी रचना है?

iv. परदा कहानी के लेखक कौन हैं?

v. आदमी का बच्चा किसकी कहानी है?

*****

munotes.in

१३.१

मलबे का मालिक - मोहन राकेश

इकाई की रूपरेखा

१३.१.० इकाई का उद्देश्य
१३.१.१ प्रस्तावना
१३.१.२ कथानक
१३.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण
१३.१.४ 'मलबे का मालिक' कहानी का उद्देश्य
१३.१.५ सारांश
१३.१.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न
१३.१.७ लघुत्तरी प्रश्न
१३.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१३.१.० इकाई का उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम 'मलबे का मालिक' कहानी के कथानक को समझ पाएँगे।
- प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम 'मलबे का मालिक' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण का अध्ययन करेंगे।
- प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम 'मलबे का मालिक' कहानी के उद्देश्य को भी आसानी से समझ पाएँगे।

१३.१.१ प्रस्तावना

आजादी की खुशी के साथ देश के बँटवारे ने एक बड़ी त्रासदी का सामना करने की विवशता उत्पन्न कर दी। धर्म के आधार पर पाकिस्तान का निर्माण हुआ। विभाजन की इस घटना का जीवन के तमाम क्षेत्रों पर प्रभाव पड़ा है। देश विभाजन के समय इस घटना को देखने परखने के दृष्टिकोण में और आज के दृष्टिकोण में इस कारण भी अंतर है, क्योंकि आज हम उस सुदूर अतीत की घटना को तटस्थ होकर भी देख सकते हैं। किन्तु विचारधारा की प्रतिबद्धता के कारण उसे यहाँ भी नहीं हासिल किया जा सकता है। फिर भी इतना तो निश्चित है कि विभाजन की यह घटना किसी एक कारण मात्र से नहीं घटी है, अपितु कई कारणों की मिली-जुली प्रतिक्रिया के रूप में विभाजन की त्रासदी को देश को ही भोगना पड़ा है। मोहन राकेश द्वारा रचित कहानी 'मलबे का मालिक' के अन्तर्गत सामाजिक और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य की आड़ में व्यक्तिगत स्वार्थ की वृत्ति किस प्रकार बसे हुए घर को तहस-नहस कर मलबे में परिवर्तित कर देती है, यही बताया गया है| मोहन राकेश जी की कहानी 'मलवे

munotes.in

का मालिक' जिसमें विभाजन कालीन परिवेश से उत्पन्न त्रासद स्थितियों का यथार्थपरक चित्रण है । इस कहानी में विभाजन के अमानवीय परिवेश के शिकार गनी मियाँ का व्यक्तिगत विभाजन की त्रासदी को साकार कर देता है। कहानीकार ने परिवेश के दबाव से उत्पन्न नई स्थितियों को प्रामाणिकता के साथ अभिव्यक्ति दी है।

मोहन राकेश उस समय के रचनाकारों की युवा पीढ़ियों के सदस्य थे। उनकी पीढ़ी की मानसिकता का निर्माण चौथे-पाँचवें दशक में हुआ था। विश्व में वह द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद एक विराट विभीषिका के मुकाबले के बाद की अवसन्नता का दौर था, और भारत में स्वाधीनता संग्राम के उतार का काल, जिसमें सन बयालीस के युवा आन्दोलन का दमन, बंगाल का अकाल, पंजाब और नौआखाली का नरसंहार घटित हुआ था। मोहन राकेश की कहानियाँ स्वतंत्र भारत के मध्यवर्गीय व्यक्ति के जीवन के काले-उजले विविध रंग प्रस्तुत करती है। देश विभाजन, आंतक और असुरक्षा, अर्थ तंत्र, शिक्षा तंत्र में शोषण, पीढ़ियों का फासला, भ्रष्ट राजनीति और नौकरशाही आदि अनेक विषय उन्होंने उठाए हैं। 'मलबे का मालिक' जैसे कुछ अन्य विशिष्ट कहानियाँ है, लेकिन बड़े पैमाने पर उन्होंने संबंधों के बदलते हुए समीकरणों की, उनमें भी स्त्री-पुरूष संबंध की विशेषत: पड़ताल की है, और वही कहानियाँ उनकी प्रसिद्धि का आधार भी है। स्त्री-पुरूष संबंध, पारिवारिक-सामाजिक अस्तित्व मत्ता का बीज बिन्दु है। नयी कहानी आन्दोलन के जिन लेखकों को केवल व्यक्तिनिष्ठ संवेदना की कलावादी अभिव्यक्ति का ठप्पा लगाकर रुफा-दफा कर दिया जाता है, उनमें मोहन राकेश का नाम भी शामिल है।

१३.१.२ कथानक

पाकिस्तान का प्रभाव देश के सामने तीस के दशक में ही सामने आ गया था, और चालीस के दशक में विभाजन के लिए दबाव बढ़ता जा रहा था, फिर भी १९४७ में विभाजन की वास्तविक घटना को देश ने बड़े धक्के की तरह महसूस किया, अखण्ड भारत का बहुभाषी, बहुधर्मी, संस्कृति-बहुल, भूगोल सदियों से संचित सामंजस्य और स्थायित्व से मंडित था। एक सामान्य भारतीय के लिए देश का विभाजन चाहे कितना भी अकल्पनीय और अचिंन्तनीय रहा हो, एक राजनीतिक निर्णय ने आम आदमी की प्रार्थनाओं और शुभकामनाओं को ध्वस्त कर दिया। विभाजन से सीधे प्रभावित प्रदेशो की भाषाओं से इस संघात के तात्कालिक अनुभव ने रचनात्मक अभिव्यक्ति पाई। हिन्दी प्रदेश विभाजन के उपरान्त विभाजन के प्रभावों से गहराई से सम्पृक्त था। हिन्दी प्रदेश के अनेक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध लेखकों की मातृभाषा पंजाबी है, अज्ञेय, यशपाल, मोहन राकेश आदि अनेक माध्यम से विभाजन की कथावस्तु हिन्दी में भी आई। 'मलबे का मालिक' इसी कथानक के विषयवस्तु की कहानी है।

'मलबे का मालिक' मोहन राकेश की एक विशिष्ट कहानी है। मूल विचारसूत्र की तरह देखा जाए तो 'लंदन की एक रात' (निर्मल वर्मा) तथा 'अमृतसर आ गया है' (भीष्म साहनी) के समान यह कहानी भी इस बात की पहचान है कि, राजनीति द्वारा खींची गई दीवारों के आर-पार विरोधी पक्षों में जबर्दस्ती काँट दिए गए आम-आदमी की पीड़ाएँ एक जैसी हैं। 'लंदन की एक रात' में कथा सन्दर्भ विश्व युद्धों की उपरान्त छाया में यूरोप, इंग्लैड, साउथ अफ्रीका की रंगभेद राजनीति से तथा 'अमृतसर आ गया है' में देश के विभाजन की पूर्व संध्या के

साम्प्रदायिक वातावरण से लिया गया। 'मलबे का मालिक' में चित्रित काल सन्दर्भ आजादी के साढ़े सात साल बाद का है। मलबे का मालिक की कथावस्तु प्रथम पृष्ठ से अंतिम पृष्ठ के बीच तय की गई यात्रा के दौरान व्यक्तिनिष्ठता के माध्यम से दोनों प्रमुख पात्रों की मंशाओं की छान-बीन करते हुए स्थूल वस्तुगत यथार्थ की भीतरी परतों में उतार ले जाती है, और अन्त में एक कायाकल्प की प्रक्रिया की शुरूआत के साथ वापस उभरकर उस मंशा को एक नया आकार दे देती है। कहानी का आरम्भ इस सूचना से होता है कि विभाजन के साढ़े सात साल बाद हॉकी मैच देखने के बहाने लोगों की एक टोली लाहौर से अमृतसर आई है। सीमान्त के दोनों तरफ इस विच्छेंद का रक्तस्त्राव महसूस किया जाता है, क्योंकि स्मूतियों और लगावों का देश सिर्फ नक्शा नहीं जिसे काटकर दो अलग-अलग हिस्सों में बाँटा जा सकता हो। 'मलबे का मालिक' के बाजार में एक त्रासदी की कसक और कचोट का अहसास है, जिसकी निचली परत में एक 'सब टेक्स्ट' की तरह जीवन के उल्लास की धड़कन की याद उस कचोट को और भी गहरा करती है।

सिर्फ इतना ही नहीं इन्हीं आगंतुकों के सहारे लाहौर के बाजारों की याद भी इधर आ निकलती है, और सीमान्त के दोनों तरफ एक ही भावना की मौजूदगी का अहसास कराती है। इनहीं बाजारों में एक बाजार बाँसा भी है, जो इस कहानी का प्रमुख घटना स्थल है। यहाँ तक पहुंचने के लिए एक सामूहिक चित्र है। यहाँ तक लगता है कि 'लाहौर एक शहर नहीं' हजारों लोगों का सगा संबंधी है, जिसका हाल जानने के लिए वे उत्सुक हैं। लाहौर से लोग आए उस दिन शहर भर के मेहमान थे, जिनसे मिलकर और बातें करके लोगों को बहुत खुशी हो रही थी। इस विहंगम दृश्य के बाद कहानी बाजार बाँसाँ की ओर रूख करके 'फोकस मोड' में आ जाती है, और साक्षात उपस्थित दृश्य की तरह पाठक को अपने भीतर ले जाकर घटित होती है। विभाजन के दौरान बाजार बाँसाँ में लगी अमृतसर की सबसे अधिक भयानक आग ने हिन्दू-मुस्लिम समेत सारे इलाके को जलाया था, और अब बन चुकी या बन रही नई इमारतों के बीच-बीच में मलबे के ढ़ेर अभी तक बाकी थे। इस बाजार में आज भी चहल-पहल नहीं, क्योंकि यहाँ कोई याद करने वाला या लौटकर आने वाला कोई नहीं एक गनी मियाँ के सिवाय। ज्यादातर लोग या तो अपने मकानों के साथ ही शहीद हो गए थे, या लौटकर आने का साहस ही नहीं रखते थे।

जाहिर है कि वह अमृतसर का एक बदहाल विपन्न इलाका है। कहानी इसी गनी मियाँ और मलबे के इन्हीं ढ़ेरो में से एक ढ़ेर के बारे में है, जो कभी उसका अपना भी घर था। गनी मियाँ एक बूढा बदहाल मुसलमान है, जो संयोगवश विभाजन के काफी पहले शहर के बाहर चला गया था। इसलिए वह अकेला बचा रहा, उसका बाकी परिवार दंगों में मारा गया। वह बुढ़ापे में अकेला इस संघात को जैसे-तैसे सहता हुआ मानो आखिरी बार आखिरी इच्छा की पूर्ति की तरह अपना घर देखने आया है। लेकिन शुरू में वह एक अजनबी है, जिसे गली में दौड़ गयी अफवाह और आशंका के तहत, बच्चे उठाने वाला भी समझ लिया जाता है, लेकिन फिर वह गली के वाशिन्दे चिरागदीन दर्जी के पिता गनी मियाँ की तरह पहचाना जाता है। गली के पास एक रहस्य है, उसके नये घर पर मुहल्ले के गुण्डे रक्खा पहलवान की नजर थी और गनी मियाँ के बेटे की सपरिवार हत्या के लिए वही जिम्मेदार भी है। यह अलग बात है कि उसके हाथ आने के पहले ही मकान को किसी ने आग लगा दी और वह आग लगाने वाले को जिन्दा जमीन में गाड़ देने का इरादा लिए बैठा रह गया। पिछले साढ़े सात सालों से

वही अपनी दादागिरी के बल पर स्वयं को इस मलबे का मालिक मानता है, और बाकी गली के लागों से भी यही मनवाता चला आ रहा है। इस रहस्य को गनी मियाँ भी नहीं जानता है।

वह पहले अपने घर की चौखट से, और फिर उसी हत्यारे रक्खा पहलवान से गले मिलकर रोता है, क्योंकि गनी की स्मृति में रक्खा पहलवान ही सबसे सगा था, उसका बेटा चिरागदीन इसी भरोसे अमृतसर में टिका रह गया था कि रक्खा पहलवान के रहते उसे कुछ नहीं हो सकता है। गनी मियाँ के इस भरोसे और आत्मीयता की अभिव्यक्ति से रक्खा पहलवान के भीतर ऐसा होता है कि उसे पसीने छूट जाते हैं, मुँह सूख जाता है, ओर रीढ़ की हड्डी को सहारे की जरूरत महसूस होने लगती है। कुछ घटनाक्रम इस तरह का ही था कि गनी मियाँ आया था, रोया था और वापस चला गया था, लेकिन इतने भर के बीच ऐसा कुछ हुआ है कि गली में पास-पड़ोस के रिश्तों के समीकरण ही बदल गए हैं। गनी मियाँ के कातर रूदन में गली ने रक्खा पहलवान की ऐसी तस्वीर देखी है, जिसने थोड़ी देर के लिए ही सही, उसका रोब, दबदबा खत्म सा कर दिया है। उसके भय और आतंक को उसके प्रति रोष और असहिष्णुता में बदल दिया है। उसको निड़र कर दिया है। रक्खा पहलवान के भीतर कुछ बदल सा गया है। मुहल्ले के साथ-साथ खुद रक्खे ने भी अपनी तस्वीर के ऐसे रूख से परिचय पाया है, जिसके लिए वह शायद शर्मिन्दा है।

लोगों को सट्टे के गुण और सेहत के नुस्खे बताने वाले रोज के सांध्य कार्यक्रम की बजाय आज वह अपने शार्गिद लच्छे को अपनी पन्द्रह साल पहले की वैष्णों देवी यात्रा के किस्से सुना रहा है। लेकिन फिर भी यह हृदय परिवर्तन की आदर्शवादी कहानी नहीं, यथार्थ के स्वाभाविक निरूपण की कहानी ही है।

१३.१.३ पात्र एवं चरित्र चित्रण

किसी भी कहानी के चरित्र परिकल्पना की दो कोटियाँ होती है, पहली कोटि में विशिष्ट, विलक्षण चरित्र जिसे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने किंचित असहिष्णुतापूर्वक व्यक्ति वैचित्र्यवाद के खाते में रखा था और दूसरी कोटि में प्रतिनिधि चरित्र जिनके अस्तित्व में एक पूरे समुदाय का जीवन, विश्वास, संस्कार पद्धति, प्रथाएँ प्रतिध्वनित होती हैं। लेकिन प्रतिनिधि चरित्र भी कोई बेनाम, बेचेहरा, निर्वैयक्तिक अस्तित्व नहीं होते। लेखक सूक्ष्म निरीक्षण से साहित्य से मिलने वाला ज्ञान साधारणीकरण अथवा तादात्म्य की विधि से मिलता है। तादात्म्य किसी मूर्त, जीवित व्यक्ति सत्ता के साथ ही संभव है। व्यक्ति के पास अपनी एक निजी कथा, अपनी आदतें और स्वभाव, संबंधों के ताने-बाने, स्मृतिकोष और नियति होती है, जिनके कारण वह अन्यों से विशिष्ट होता है, और लेखक के व्यंजना कौशल तथा अभिव्यक्ति क्षमता के द्वारा प्रस्तुत होकर निर्विशिष्ट तथा अन्यों के समान भी हो जाता है।

'मलबे का मालिक' कहानी का मुख्य किरदार गनी मियाँ लाहौर से आयी टोली का सदस्य है, लेकिन बाजार बाँसाँ की इस गली तक पहुँचने वाला वह अकेला ही है। वह उस अरूप अनाम अनुपस्थित समुदाय का उपस्थित चेहरा है, जो यहीं मर-खप गए, बच कर जा नहीं सके, या बचे तो वापस आने की हिम्मत या साधन नहीं जुटा सके। उसकी यात्रा का गंतव्य टोली के बाकी लोगों की यात्रा से अलग है। उसके लिए स्मृति मानो एक विनोद यात्रा है,

आतिथ्य और सत्कार का एक मौका। गनी मियाँ के लिए यह यात्रा अपनी अंतहीन पीड़ा के उत्स तक लौटकर सान्त्वना की तलाश का प्रयास है। दंगों में अपना पूरा परिवार गँवा बैठने के बाद भी मन में कहीं असंभव सी उम्मीद है कि घर वहीं, वैसा ही बाकी होगा। रक्खा पहलवान के सवाल के जवाब में वह कहता है – "क्या हाल बताऊँ रक्खे, मेरा हाल तो मेरा खुदा ही जानता है।"

इन बचे-खुचे भविष्यहीन दिनों में उसके हिस्से के सारे नाते-रिश्ते इसी गली में पीछे छूट गए हैं। जहाँ वह आया तो सही लेकिन जहाँ से उसे वापस जाना ही है, जहाँ उसका घर एक मलबे का ढेर है, लेकिन रक्खे पहलवान से वह कहता है – "तू सच पूछे तो मेरा यह मिट्टी भी छोड़कर जाने का मन नहीं करता।" कहानी की घटनात्मक संरचना इतनी ही है कि गली के मुहाने पर अजनबी सा खड़ा गनी बच्चा उठाने वाला समक्ष लिया जाता है, फिर स्मृति की तहें और पहचान की परते खुलती हैं, गली के भीतर प्रवेश और मलबे के ढेर तक की यात्रा में वह अपनी समूची जिन्दगी की आशाओं, आकाक्षाओं, नाते-रिश्तों के अवशेष का साक्षात्कार करता है, और नियति को स्वीकार करने की स्थिति में पहुँच जाता है।

रक्खा पहलवान जैसे पात्र का चरित्र खींचने में लेखक ने उसके कहे बोले से कम, उसकी देह भाषा और गली वालों की, दरअसल घरों में जा छिपी, खिड़कियों पर खड़ी औरतों की चेहमे गोइयों से अधिक काम लिया है। "वह ठेंठ गुण्डागर्द, लुटेरे, दादा का चित्र हैं। ..... रक्खा आदमी नहीं साँड है, दिन भर साँड की तरह गली में घूमता है..... रक्खे मरदूद का घर न घाट..... इसे किसी की माँ 'बहन का लिहाज था?" उसके चरित्र-चित्रण में यह अल्पभाषित कहानी को शोर, स्फीति और हाहाकार के आडम्बर से बचाती है, गली की स्मृति में चिरागदीन की सपरिवार हत्या के प्रसंग को भी ठण्डे, निरावेग, किंचित व्यंग्यपूर्ण टोन में न्यूनतम तफसीलों में बयान करती है, और मलबे से मुलाकात वाले क्षण के आवेग की तीव्रता के चित्रण में नाजुक सन्तुलन को साधते हुए संवेदनशीलता के स्तर को कायम रखती है। इस कथा का सबसे मार्मिक स्थल गनी मियाँ और रक्खे पहलवान का आमना-सामना है। गली भर के लोगों की यह उम्मीद और तमन्ना है कि साढे-सात साल पहले की सपरिवार हत्या और बलात्कार की वह घटना किसी न किसी तरह जरूर गनी तक पहुँच जाएगी, जैसे मलबे को देखकर ही गनी को अपने आप सारी घटना का पता चल जाएगा, हालाँकि पता चल जाने से भी गनी क्या कर लेगा ? इस बात की तरफ कोई ध्यान या टीका-टिप्पणी इन चेहमेगोइयों में नहीं है। उनके भय, आक्रोश और वितृष्णा का पात्र रक्खा पहलवान है जो "बड़ा मलबे का मालिक बनता था। असल में मलबान इसका है, न गनी का, मलबा तो सरकार की मिल्कियत है। सरदूर किसी को वहाँ गाय का खूँटा तक नहीं लगाने देता।"

कहानी में इस उम्मीद का पहला क्षण आशंका का है, रक्खे पहलवान के शागिर्द लच्छे के शब्दों में "अगर मनोरी ने उसे कुछ बता दिया तो?" दूसरा क्षण उत्तेजना का गली वालों को चेहमेगाइयों में, "अब दोनों आमने-सामने आ गए हैं तो बात जरूर खुलेगी, फिर हो सकता है दोनों में गाली-गलौज भी हो.... अब रक्खा गनी को हाथ भी नहीं लगा सकता। अब वे दिन नहीं रहे..।" तीसरा क्षण थोड़ी निराशा का 'मनोरी भी डरपोक है। इसने गनी को बता क्यों नहीं दिया कि मनोरी ने गली से निकल कर गनी को जरूर सबकुछ बता दिया होगा – रक्खा अब किस मुँह से लोगों को मलबे पर गाय बाँधने से रोकेगा? इन्हीं गली वालों में साढ़े सात

साल पहले की उस रात के साक्षी भी हैं, जिन्होंने अपने दरवाजे बन्द करके अपने को उस घटना के उत्तरदायित्व से मुक्त कर लिया था। अपने भय और आतंक से अशक्त लोग आज गनी के आने और चले जाने के बीच जिस किसी तरह से उसको असलियत जता देने की कामना में वस्तुत: क्या अभिव्यक्त करना चाहते है? लेकिन गनी को असलियत आखिर तक पता न चलने के बावजूद या शायद इसी वजह से रक्खा पहलवान के भीतर कुछ होता है। गनी उसके सामने बैठा है, एक बेदखल बूढ़ा, असहाय बिना किसी अधिकार या अधिकार के दावे या तेवर के, महज आत्मीयता और भरोसे में निहत्था और निरीह। "खुदा नेक की नेकी बनाए रखे, बदे की बदी माफ करे। मैंने आकर तुम लोगों को देख लिया, सो समझूँगा कि चिराग को देख लिया। अल्लाह तुम्हें सेहतमन्द बनाए रखे।"

इस नेकी और निरीहता के साथ रक्खे पहलवान का यह आमना-सामना अपने आवेग की तीव्रता से दैहिक और ऐन्द्रिय संवेद्य, अनुभव प्रत्यक्ष वास्तविक और प्रामाणिक होकर साकार बनता है, "रक्खे ने सीधा होने की चेष्टा की, क्योंकि उसकी रीढ़ की हड्डी बहुत दर्द कर रही थी। अपनी कमर और जाँघ के जोड़ों पर उसे सख्त दबाव महसूस हो रहा था। पेट की अंतड़ियों के पास से जैसे कोई चीज उसके तलुओं में चुनचुनाहट हो रही थी। उसका सारा जिस्म पसीने से भीग रहा था, बीच-बीच में नीली फुलझड़ियाँ सी ऊपर सी उतरती और तैरती हुई उसकी आँखों के सामने से निकल जातीं। उसे अपनी जबान और होठों के बीच एक फासला सा महसूस हो रहा था। उसने अँगोद्दे से होठों के कोनों को साफ किया। साथ ही उसके मुँह से निकला ''हे प्रभू तू ही है, तू ही है, तू ही है।"

१३.१.४ 'मलबे का मालिक' कहानी का उद्देश्य

मोहन राकेश ने यथार्थ को सामाजिक स्तर पर प्रस्तुत करने के लिए अपनी कहानियो में प्राय: समस्याओं का जीवन्त रूप व्यक्तिगत कुंठाओं, दम्पतियों के बदलते हुए संबंध, संघर्ष करने वाले स्त्री-पुरूषों का वर्णन, अमानवीय अत्याचारों का वर्णन, माँ-बाप की अप्रतिबद्धता से उत्पन्न बालकों की विद्रोही प्रवृत्ति का निरूपण किया गया है। यह भी निर्विवाद सत्य है कि मोहन राकेश की कहानियों में उद्देश्य की विविधता के होते हुए भी सामाजिक जीवन की यथार्थता का चित्रण सजीवता के साथ हुआ है। 'मलबे का मालिक' कहानी का उद्देश्य भारत-पाक के विभाजन से उत्पन्न क्रूरता का चित्रण करते हुए लेखक का उद्देश्य यह है कि पाठकों को तत्कालीन परिस्थितियों का यथार्थ चित्र देकर, उनके हृदय में संवेदना एवं सहानुभूति को तीव्र रूप में जागृत करना है, और साम्पदायिकता के भयंकर अभिशाप से जनता को मुक्त करने की कोशिश की है।

१३.१.५ सारांश

कहानीकार मोहन राकेश नयी कहानी के महत्वपूर्ण कथाकार होने के अलावा उसके सिद्धान्तकार तथा उसे आन्दोलन में बदलने वाली तिकड़ी के सदस्य भी हैं। उनकी कहानियों के सम्मिलित आकलन से नयी कहानी आन्दोलन के रचनात्मक सरोकारो का जायजा लिया जा सकता है। वे मध्यवर्गीय जीवन तथा शहरी संवेदना के प्रतिनिधि रचनाकार है। आजादी के तुरन्त बाद वाले दशक की युवा रचनाकार मानसिकता का प्रतिनिधित्व करने वाले लेखकों में उनका नाम अग्रणी है। इस पीढ़ी ने मृत मूल्यों और जड़

मर्यादाओं को चुनौती देने और बने बनाए सत्यों को अनुभव की प्रामाणिकता से जाँचने का बीड़ा उठाया था। उसमें बहुत कुछ जरूरी तौर पर ध्वंसात्मक था। बदले हुए परिवेश में असुरक्षित मध्यमवर्ग के युवा की कुंठाएँ और लक्ष्यहीनता, संबंधों के बदले हुए समीकरण विशेषकर स्त्री-पुरूष संबंध, तथा आंशिक रूप से अन्य राजनीतिक सामाजिक, आर्थिक समस्याएँ उनकी कहानियों में उभर कर सामने आई है। 'मलबे का मालिक' मोहन राकेश की एक विशिष्ट कहानी है। विभाजन की त्रासदी के मानवीय आयामों को उकेरती हुई वह एक राजनीतिक विषयवस्तु के सामाजिक पक्ष को व्यक्तिपरक अभिव्यक्ति में पकड़ती है। 'मलबे का मालिक' मोहन राकेश के रचना कौशल का प्रतिनिधि उदाहरण है। इसके सहारे भावुकता और संवेदनशीलता का अन्तर, अनुभव की प्रामाणिकता का अर्थ, उसे अर्जित करने में भाषा की भूमिका को समझा जा सकता है। लीक से हटकर चलने वाले रचनाकार के लिए अनुभव की प्रामाणिकता जान पर जोखिम जैसा मामला है, क्योंकि उनके कथ्य के सत्यापन का सारा दारोमदार उसी पर है। मोहन राकेश की कहानी 'मलबे का मालिक' इस प्रामाणिकता का सर्वोत्तम उदाहरण कही जा सकती है।

१३.१.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

i. 'मलबे का मालिक' कहानी की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।

ii. 'मलबे का मालिक' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iii. मोहन राकेश का साहित्यिक परिचय लिखिए।

iv. 'मलबे का मालिक' कहानी में अभिव्यंजित विभाजन की त्रासदी को स्पष्ट कीजिए।

१३.१.७ लघुत्तरी प्रश्न

i. 'मलबे का मालिक' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

ii. 'मलबे का मालिक' कहानी का सारांश लिखिए।

iii. गनी का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iv. रक्खे का चरित्र-चित्रण कीजिए।

v. 'मलबे का मालिक' कहानी की समीक्षा कीजिए।

१३.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'मलबे का मालिक' किसकी कहानी है?

ii. गनी मियाँ किस कहानी के पात्र हैं?

iii. गनी मियाँ के बेटे का क्या नाम था?

iv. रक्खा पहलवान से गनी मियाँ का क्या संबंध है?

v. मनोरी किस कहानी का पात्र है?

*****

mnotes.in

१४

दु:ख भरी दुनिया - कमलेश्वर

इकाई की रूपरेखा

१४.० इकाई का उद्देश्य

१४.१ प्रस्तावना

१४.२ कथानक

१४.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

१४.४ 'दु:ख भरी दुनिया' कहानी का उद्देश्य

१४.५ सारांश

१४.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१४.७ लघुत्तरीय प्रश्न

१४.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१४.० इकाई का उद्देश्य

- इस कहानी के माध्यम से हम 'दु:ख भरी दुनिया' कहानी की प्रस्तावना को समझ सकते हैं।
- 'दु:ख भरी दुनिया' कहानी के माध्यम से उसके उद्देश्य को समझा जा सकता है।
- इस कहानी के कथानक को भी स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं।
- इसके माध्यम से कहानी में आए प्रमुख पात्रों के चरित्र-चित्रण को भी देखा और समझा जा सकता है।

१४.१ प्रस्तावना

हिन्दी साहित्यकारों में कमलेश्वर ने अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया है। इनका नाम नई कहानी आन्दोलन से जुड़े आगे के कथाकारों में आता है। पारिवारिक परिस्थिति ठीक न होने के बावजूद इन्होंने अपनी शिक्षा की गति को रूकने नहीं दिया। समाज में फैले अन्धविश्वासी, जातिवाद आदि पर अपनी कहानियों के माध्यम से करारा प्रहार किया है। जीवन में कभी रूके नहीं और लगातार अलग-अलग विषयों पर गंभीर विचार किया, तथा उसे साहित्यिक रूप भी प्रदान किया। लगातार संघर्षो और प्रयत्नशील स्वभाव के कारण वे सफल साहित्यकार के रूप में प्रसिद्ध हुए। कमलेश्वर जैसे कथाकार की कहानियों में आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं से जूझते हुए मध्यवर्गीय परिवारों का चित्रण किया गया है। उनकी कहानी 'दुख भरी दुनिया' भी एक मध्यवर्गीय परिवार की ही कहानी है। मध्यवर्गीय परिवार की मानसिकता का बड़ा ही यथार्थ चित्रण कहानीकार कमलेश्वर जी ने 'दु:ख भरी दुनिया' शीर्षक कहानी में किया है।

munotes.in

१४.२ कथानक

'दुःख भरी दुनिया' कथाकार/कहानीकार कमलेश्वर की कहानियों में से एक श्रेष्ठ कहानी मानी गयी है। इस कहानी में मध्यवर्गीय परिवारों में आए दिन होने वाली जद्दोजहद को ही लेखक कमलेश्वर ने प्रतिबिम्बित किया है। सुबह से देर शाम तक रोजी-रोटी के लिए मशक्कत करने वाले बिहारी बाबू यह कभी नही चाहते हैं कि उनका बेटा भी उनकी तरह यांत्रिक मानव बनकर ही जीवन भर खटे। इसीलिए बिहारी बाबू यह चाहते हैं कि वह पढ़-लिखकर बड़ा आदमी बने और ऐशो-आराम की जिन्दगी जीने की कोशिश करे। जब भी बिहारी बाबू को फुर्सत का कोई क्षण मिलता है, वे अपने बेटे के पढ़ाई-लिखाई की खबर लेते रहते हैं। किन्तु बेटे को पढ़ाने-लिखाने के नाम पर वे अपनी झुँझलाहट, अपना क्रोध सब उसी पर निकालते हैं। कमलेश्वर की यह कहानी किसी परिवार विशेष की कहानी न होकर, अपितु समस्त मध्यवर्ग की कहानी है। लेखक कमलेश्वर इस कहानी का आरम्भ ही कुछ इस तरह से करते हैं "एक बेहद उदास शहर मेरी आँखों के सामने उभर रहा है। उस शहर की वीरानी में से सिसकियो की आवाज हवा पर तैरती हुई आ रही है। मैं नहीं जानता यह शहर कौन सा है, मेरे देश का है, या विदेशी का। कोई बच्चा सिसक रहा है। एक माँ है जो दूध का प्याला लिए बैठी है, और बच्चे का बाप नींद में डूबा हुआ है।"

इस कहानी में आठ बरस का दीपू अपने पिता बिहारी बाबू के आतंक से घबरा उठता है। बिहारी बाबू का आतंक, भय, पूरे घर में समाया हुआ है। दीपू को भी समझ में नहीं आता है कि वह आखिर करे भी तो क्या करे? बिहारी बाबू दीपू को आवाज लगाते हैं, और कहते हैं कि "दीपू क्या कर रहा है कामचोर? बिहारी बाबू की आवाज फिर गूँजती है। दीपू की कनपटियाँ झनझाने लगती हैं, और दीपू वहीं से आवाज देता है कि अभी आया बाबू जी।" जैसे ही घर में बिहारी बाबू की आवाज सुनायी देती है, पूरे घर में ही सन्नाटा पसर जाता है, बाकी तीनों बच्चे भी अपनी-अपनी बारी का इंतजार करने लगते है। रसोई में काम करती विमला का दिल भी बिहारी बाबू की आवाज सुनकर धड़कने लगता है। सवालों के लिए दीपू को बिहारी बाबू कहते हैं कि दो सवाल क्यों गलत कर दिया ? इस पर दीपू का गला भी बुरी तरह से सूख जाता है। दीपू की भोली आँखों में पानी तैरने लगता है, और वह बोल भी नहीं पाता है।

कहानीकार कमलेश्वर ने अपनी इस कहानी में एक बालक की परिस्थितियों का बड़ा ही यथार्थ चित्रण किया है, उन्होंने इसमें यह बताया है कि किस तरह से दीपू जैसा आठ वर्ष का बालक अपने पिता से डरा-डरा और सहमा सा रहता है। उस बच्चे की मनोव्यथा को अभिव्यक्ति देने में कहानीकार कमलेश्वर को सफलता प्राप्त हुई है। जब बिहारी बाबू दीपू से कहते हैं कि बोलता क्यों नहीं? बिहारी बाबू कड़ककर कहते हैं और दीपू के कान पर उनका हाथ जाता है। दीपू मुँह भींचकर कान पर जलते हुए अंगारे को बर्दाश्त करता है। उसकी गर्दन भी मुड़ती चली जाती है, और नसें झलकती आती हैं। मुलायम रोएँदार कनपटियाँ नाड़ी की तरह टपकने लगती हैं। मासूम गालों से खून की लाली निचुड़ सी जाती है।

इस कहानी के कथानक में ही कमलेश्वर ने इस तरह के ह्रदय विदारक चित्र खींचकर अपनी कहानी कला का परिचय बखूबी दिया है। वे अपनी कहानियों मे इस तरह की मानवीय संवेदनाओं को चित्रित करने वाले एक सिद्धहस्त कहानीकार हैं। आगे भी वे दीपू के सन्दर्भ

में लिखते हैं कि "बाएँ हाथ से अपना कान सहलाते हुए दीपू दाहिने हाथ से कापी के पन्ने पलटता है, और गलत सवाल देखकर बिहारी बाबू आँखें निकालकर पूछते हैं 'यह सवाल क्यों गलत हुआ? क्यों गलत हुआ?' दीपू के पास इसका कोई भी जवाब नहीं होता है। किसी के पास कोई जवाब नहीं है। विमला रसोई घर से निकलकर दरवाजे के पास ठिठक जाती है, और बाप-बेटे को देखती है, दुनिया की मार से पिटा हुआ एक बाप और बाप की मार से काँपता हुआ एक बेटा।"

इस तरह की परिस्थितियों का बड़ा ही यथार्थ अंकन कहानीकार कमलेश्वर ने बड़ी ही सहजता के साथ अपनी इस लोकप्रिय कहानी 'दु:ख भरी दुनिया' में किया है।

१४.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

किसी भी कहानी के पीछे सबसे महत्वपूर्ण भाग उस कहानी के पात्र एवं चरित्र-चित्रण का होता है। कमलेश्वर की कहानियों के पात्र भी बड़े ही सुलझे हुए और गढ़े हुए हैं। कमलेश्वर की कहानियों में भोगे हुए जीवन का बड़ा ही यथार्थ चित्रण हुआ है। वैचारिक धरातल पर कमलेश्वर की कहानियों के पात्र मानवीय तथा सामाजिक मूल्यों से संबंधित नजर आते हैं। उन्होने अपनी इस कहानी में बिहारी बाबू, दीपू और विमला के माध्यम से आज के अभाव ग्रस्त टूटते, बोझिल तथा आर्थिक विषमताओं से जुझते हुए पात्रों का कुशल चरित्र-चित्रण किया है। आधुनिक युग के व्यक्ति की टूटन, जनजीवन में अलगाव, ऊब तथा बिखराव की स्थितियों को अपनी इस कहानी के माध्यम से प्रस्तुत किया है। कहानीकार कमलेश्वर मूलत: कस्बाई बोध के कथाकार हैं। स्वतंत्रता के पश्चात कस्बाई परिवंश में भी जीवन मूल्य बदलते रहते हैं। इसका चित्रण भी कमलेश्वर ने कहीं पात्रों, वस्तुओं एवं स्थानों के माध्यम से किया है, तो कहीं-कहीं उपहास एवं व्यंग्य के रूप में भी किया है। इस काल में ठोस कथानक को लेकर लिखी गई कहानियों में पात्रों के चरित्र-चित्रण की पुरानी पद्धतियाँ, नाटकीय विश्लेषणात्मक, अभिनयात्मक तथा वर्णनात्मक अंकन हुआ है। इस दृष्टि से पात्रों की परिस्थिति के अनुकूल चित्रित करने के कारण नयी कहानी में स्वाभाविकता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। नई कहानी के प्रवर्तक होने के कारण कमलेश्वर जी कथ्य के अनुसार व्यक्ति को रूपायित करने में अधिक तत्पर रहें हैं। मध्यवर्गीय औसत आदमी को उसकी सभी कमियों के साथ और तनावों से प्रस्तुत करके उन्होंने अपनी इस कहानी को एक नया मोड़ दिया है।

पात्रों के चरित्र-चित्रण के रूप में इस कहानी में कमलेश्वर ने तीन प्रमुख चरित्रों यथा बिहारी बाबू, विमला और दीपू के रूप में उनका सफल चरित्र-चित्रण किया है। बिहारी बाबू के चरित्र पर प्रकाश डालते हुए कमलेश्वर लिखते हैं कि "सर्दी की भीगती हुई रात है, घण्टाघर ने अभी-अभी दो का घण्टा खड़काया है। बिहारी बाबू नींद में डूबे हुए हैं। वह बिजली कंपनी में क्लर्क हैं। उनके सिरहाने कई फाइलें पड़ी हैं। लाल-नीली पेंसिलें भी हैं, और लाइने खींचने वाला रूल फाइलों के बीच में झाँक रहा है। उनकी बीबी अभी सोई नहीं हैं। वह छोटे दीपू के सिरहाने दूध का एक प्याला लिए बैठी हैं, और दीपू सोते-सोते सिसक रहा है।"

बिहारी बाबू पुकारते हैं – दीपू किताबे लाओ।

या कुछ इस तरह से कि "दीपू क्या कर रहा है काम चोर? बिहारी बाबू की आवाज फिर गूँजती है। दीपू की कनपटियाँ झनझनाने लगती हैं, वहीं से आवाज देता है, अभी आया बाबू जी। जैसे ही बिहारी बाबू की आवाज सुनाई पड़ती है, घर में सन्नाटा छा जाता है।"

इसी प्रकार बिहारी बाबू का इस कहानी में चित्रण कमलेश्वर कुछ सख्त अंदाज में करते हैं- "बिहारी बाबू लाइनें खींचना रोककर दीपू की तरफ देखते हैं, और पूछते हैं, हिसाब का टेस्ट हो गया। जब दीपू बताता है कि उसके दो सवाल गलत हो गए, तब बिहारी बाबू की आवाज कुछ सख्त हो जाती है कि क्यों दो गलत हुए?"

"दीपू का गला बुरी तरह सूख जाता है, उसकी भोली आँखों में पानी तैर आता है।"

"बोलता क्यों नहीं? बिहारी बाबू कुछ कड़ककर कहते हैं और दीपू के कान पर उनका हाथ जाता है। काफी दिखलाओ, बिहारी बाबू कहते हैं। बाएँ हाथ से अपना कान सहलाते हुए दीपू दाहिने से कापी के पन्ने पलटता है, और गलत सवाल देखकर बिहारी बाबू आँखें निकालकर पूछते हैं, यह सवाल क्यों गलत हुआ? क्यों गलत हुआ?"

इस प्रकार कमलेश्वर ने 'दु:ख भरी दुनिया' कहानी के माध्यम से बिहारी बाबू और दीपू के माध्यम से यथार्थ को चित्रित किया है। एक पिता अपने बेटे को आगे बढ़ते हुए देखने के लिए क्या-क्या नियम और नीतियाँ उसे दंडित करने के लिए अपनाता है, इसे इस कहानी के माध्यम से जाना-समझा जा सकता है। कमलेश्वर आगे भी लिखते हैं कि, "विमला रसोई घर से निकलकर दरवाजे के पास ठिठक जाती है, और बाप बेटे को देखती है। दुनिया के मार से पिटा हुआ बाप, और बाप की मार से काँपता हुआ एक बेटा।"

"हिसाब नहीं पढ़ेगा तो जूतियाँ गाँठेगा। बिहारी बाबू की आवाज कमरे में गूँजती है, क्या करता रहा शाम से? बिहारी विमला से पूछते हैं।"

'यही कुछ लिख रहा था, विमला बचाव करती है।'

ड्राइंग बना रहा होगा, क्यों? बिहारी बाबू जलती आँखों से दीपू को ताकते हैं। "पता नहीं क्यों इतनी चिढ़ है बिहारी बाबू को ड्राइंग से ? उनकी आँखों में बिजली कंपनी के इंजीनियर बसे हुए हैं, जो उनके अफसर हैं, जो कारों में आते-जाते हैं। जिनके नौकर दोपहर का खाना लेकर आते हैं। जिनकी बीवियाँ उन्हें सुबह दफ्तर छोड़ने और शाम को लेने आती हैं।"

और एक वह हैं कि सुबह आठ बजे खाने का डिब्बा लेकर कंपनी की ओर चल देते हैं, और शाम सात बजे फाइलों का पुलिन्दा दबाकर लौटते हैं। कभी जब वह अच्छे मूड़ में थे तो उन्होंने विमला से कहा था "विमला मैं चाहता हूँ कि दीपू इंजीनियर बने। घर का एक लड़का भी इंजीनियर बन गया तो सुधर जाएगा। जिन्दगी बदल जाएगी। मेरे बेटे मेरी तरह ही बदनसीबी का शिकार हों, यह मैं नहीं चाहता विमला !"

कमलेश्वर की विशेषता यह है कि वे पात्रों के भीतरी तह तक जाते हैं और उनकी फटेहाल जिन्दगी का चित्रण भी बड़ी ही बारीकी से करते हैं। इस कहानी में भी वे बिहारी बाबू और विमला के घर की परेशानियों, उनकी आर्थिक स्थितियों का चित्रण बड़ी कुशलता और मार्मिक ढंग से करते हैं। इस कहानी में ही वे लिखते हैं कि- "अपना दीपू पढ़ने में तेज हैं,

विमला ने गर्व से कहा था और अपनी फटी हुई साड़ी का आँचल कमर में खोंस लिया था। फिर बहुत धीरे से कहा था, बच्चो के लिए रजाई नहीं है, जाड़े सिर पर हैं..."

"अब इस महीने तो मुश्किल है। एक अगले में बनवा लेना और दूसरी, दूसरे महीने में, बिहारी बाबू ने खर्चे का हिसाब लगाकर कहा था, और रोज-बरोज चीजों की जरूरतें और उन्हें इकट्ठा करने के बीच उन्हें हर क्षण यही लगता था कि इस दुख भरी दुनिया में उबरने का एक ही रास्ता है, दीपू का इंजीनियर बनना।"

"और रात में एक ही रजाई में सबको दुबकाकर जब विमला लेटती है तो दीपू उससे पूछता हैं, माँ फिर उस परी का क्या हुआ? राजकुमार कहाँ चला गया? तो विमला उनके वालों में अँगुलियाँ फिराते हुए बताती हैं। आसमान के उस पार एक देश है – नीलम देश, परियाँ वहाँ रहती हैं। वे परियाँ अपने पंख फैलाकर नीलम देश में चली गई.... राजकुमार भी वहाँ पहुँच गया।"

"हूँ दीपू हुँकारी भरता है, नीलम देश कैसा है माँ? वहाँ चिड़ियाँ हैं न, और फूल माँ 'बहुत सुन्दर है नीलम देश।' विमला प्यार से कहानी सुनाती जाती है, और दीपू उनींदी आँखों से आसमान के पार वाले नीलम देश की कल्पना करता-करता सो जाता है।"

'सुबह चारो बच्चे जागकर एक ही रजाई में कुलबुलाते रहते हैं। दीपू के कानों की **लवें** नीली होती हैं, नाक नीली पड़ जाती है, और सर्द ईंटो के फर्श पर वह पंजों के बल दौड़ता हुआ नल की पटिया पर पहुँचता है।' ठीक इसी तरह का चित्रण गरीबी और निरीह स्थितियों के बारे में भी कमलेश्वर ने दुख भरी दुनिया में किया है - "विमला भुने हुए आलू या शकर कन्द निकालती है तो हँगामा मच जाता है, और कमरे से बिहारी बाबू की कड़कती हुई आवाज आती है। उस आवाज से सन्नाटा छा जाता है।"

इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि कमलेश्वर के पात्र संवेदना के पात्र मालूम पड़ते हैं। लेखक समाज के साथ जुड़कर सभी प्रकार के व्यक्तियों के मन की थाह लेता है, और इसी थाह को ही कहानी की अनिवार्यता घोषित करता है। कमलेश्वर की कहानियों के स्त्री एवं पुरूष पात्र अपनी पूर्ण गरिमा, वास्तविकता एवं आत्म सम्मान की भावना के साथ उपस्थित हुए हैं।

१४.४ 'दुःख भरी दुनिया' कहानी का उद्देश्य

कमलेश्वर की कहानियों में विशदता है, विराटता का बोध है, जीवन के विविध पक्षों का संस्पर्श कर यथार्थ अभिव्यक्ति देने का आग्रह है, और आधुनिकता के बारीक रेशों को परिवर्तित सामाजिक सन्दर्भों में ही अभिव्यक्त कर उन्होंने समकालीन और सामाजिक दायित्व का निर्वाह करने की सायास कोशिश की है। कमलेश्वर की कहानियों का परिचयात्मक अनुशीलन को समझने के क्रम में इसी उद्देश्य को प्रस्तुत किया गया है। कहानीकार के रूप में कमलेश्वर का हिन्दी कहानी के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान रहा है। इनकी कहानी लेखन की यात्रा अंतिम दौर तक चलती रही है, न तो वे कभी रूके हैं और न ही उनके लेखन में ठहराव आया है। हर दशक में उन्होंने अच्छी रचनाएँ लिखकर स्वयं को आधुनिकता से भी जोड़ा है, जब कि नए-नए कहानी आन्दोलन के बाढ़ में कई प्रस्थापित

रचनाकार उखड़ से गए, जबकि कमलेश्वर अन्त तक कहानियाँ लिखते रहे। इस प्रकार कमलेश्वर की कहानियों का उद्देश्य समाज या समय के दर्पण के प्रतिबिम्ब को दिखाना है। और उनकी इस कहानी में समाज अपने पूर्ण परिवेश के साथ यथार्थ रूप में चित्रित हुआ है।

१४.५ सारांश

कमलेश्वर के पात्रों के चरित्र-चित्रण एवं कथानक के आधार पर यह कहा जा सकता है कि युग परिवर्तन के साथ-साथ व्यक्ति की आस्थाएँ और विचार बदल रहे हैं, जिससे मूल्य परिवर्तन हो रहे हैं। स्वतंत्रता के पाश्चात सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों मे परिवर्तन हुआ है, जिसका प्रभाव साहित्य पर पड़ा। कमलेश्वर ने मानव व्यक्तित्व को आधुनिकता से संबद्ध करते हुए बढ़ती आकुलता, संत्रास, नैराश्य एवं भावनाओं से कटकर आत्मकेन्द्रित किया है। इस कहानी के माध्यम से कमलेश्वर ने यह बताने का प्रयास किया है कि भय एवं संत्रास की यह स्थिति आज के जीवन का सच है। आज हर व्यक्ति वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक सभी स्तरों पर संत्रास की अनुभूति कर रहा है। हमारा मन जिस बेगानेपन और अकेलेपन को भोगता है, उससे संत्रास का सजीव चित्रण किया गया है।

कहानीकार कमलेश्वर की कहानियाँ बाह्य पहचानों को नकारती हुई मानवतावादी दृष्टिकोण से मानवीय संबंधों को विश्लेषित करती है। करूणा, स्नेह और सौहार्द जैसे मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठापना भी करती है। इन विवेचनो से यह स्पष्ट हो जाता है कि कमलेश्वर ऐसे कहानीकार हैं, जो पुरानी तथा नयी पीढ़ी दोनों से जुड़े दिखाई पड़ते हैं। विशिष्टता यह है कि सामाजिक चेतना की प्रस्तुति की प्रक्रिया भी वैयक्तिक धरातल पर टिकी है। लेखक ने मनुष्य का मनुष्य के प्रति कपटपूर्ण व्यवहार, निर्धनता का नग्न रूप, स्त्री-पुरूष संबंध, बेकारी, बेरोजगारी की समस्या, वेश्यावृत्ति, सामाजिक कुरीतियाँ, असंतोष और विद्रोह की भावना तथा पारिवारिक जीवन के विविध रूपों और संबंधों आदि विषयों को अपने वैयक्तिक अनुभवों व जीवन दृष्टि के आधार पर सशक्त वाणी प्रदान की है। वर्तमान सन्दर्भों में कमलेश्वर की कहानी आधुनिक परिवेश के सूक्ष्मतम यथार्थ के प्रसंगों से जोड़ती है। जितना वैविध्यपूर्ण मानव संसार है, उतना ही वैविध्यपूर्ण कमलेश्वर का रचना संसार भी है।

१४.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

i. 'दुःख भरी दुनिया' कहानी की कथावस्तु लिखिए।

ii. 'दुःख भरी दुनिया' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

iii. 'दुःख भरी दुनिया' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iv. 'दुःख भरी दुनिया' कहानी के माध्यम से कहानी की समीक्षा कीजिए।

१४.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. कमलेश्वर की कहानी 'दु:ख भरी दुनिया' का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

ii. 'दु:ख भरी दुनिया' कहानी का सारांश लिखिए।

iii. कमलेश्वर की कहानी 'दु:ख भरी दुनिया' के प्रमुख पात्र बिहारी बाबू का चित्रण कीजिए।

iv. 'दीपू' का चरित्र-चित्रण संक्षेप में लिखिए।

१४.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. विमला किस कहानी की नायिका है?

ii. दु:ख भरी दुनिया कहानी के रचनाकार कौन हैं?

iii. बिहारी बाबू किस कहानी के केन्द्रीय पात्र हैं?

iv. दीपू को बिहारी बाबू क्या बनाना चाहते हैं?

v. दीपू किस कहानी का नायक है?

*****

munotes.in

१४.१

दहलीज़ - निर्मल वर्मा

इकाई की रुपरेखा

१४.१.० इकाई का उद्देश्य

१४.१.१ प्रस्तावना

१४.१.२ कथानक

१४.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

१४.१.४ कहानी का उद्देश्य

१४.१.५ सारांश

१४.१.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

१४.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न

१४.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१४.१.० इकाई का उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम 'दहलीज़' कहानी के कथानक को समझ पाएँगे।
- प्रस्तुत इकाई के माध्यम से हम 'दहलीज़' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण का अध्ययन करेंगे।
- प्रस्तुत इकाई के माध्यम से 'दहलीज़' कहानी के उद्देश्य को भी आसानी से समझ पाएँगे।

१४.१.१ प्रस्तावना

हिन्दी कथा साहित्य में तरल, रूमानी भावुकता, यथार्थता, अस्तित्ववादिता तथा पूर्व और पश्चिम का अद्भुत सामंजस्य स्थापित करने वालों में निर्मल वर्मा अग्रणी कहानीकार के रूप में सामने आए हैं। उनकी कहानियाँ आधुनिक परिवेश में व्याप्त माहौल की देन हैं। उनकी कहानियाँ कोई विशेष चरित्र या उद्देश्य को लेकर नहीं चलती है, वरन् वे व्यक्ति के आंतरिक यथार्थ, संघर्ष उसकी संवेदना को लेकर ही आगे बढ़ती हैं। आज के चिन्तन प्रधान युग में जहाँ व्यक्ति अपनी प्राचीन मान्यताओं को छोड़ आधुनिक परिवेश में रच बस गया है, उसी के अनुरूप ही वह ढ़लना भी चाहता है, यह कहना चाहिए कि अपनी अस्मिता की खोज में ज्यों-ज्यों वह आगे बढ़ता जा रहा है, त्यों-त्यों भीड़ में अपने को सर्वत्र अलग-थलग पा रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप वह दिशाहीन होता जा रहा है। इसे ही वह अपनी नियति स्वीकार कर रहा है। निर्मल वर्मा जैसे बड़े कहानीकार ने व्यक्ति की इसी नियति का गहन अध्ययन कर मानव में छुपी संवेदना को सामने रखकर कहानियाँ लिखी हैं। निर्मल वर्मा की कहानियाँ इसी नियति और अकेलेपन में जी रहे व्यक्ति के अन्तर्मन की अनुभूतियों को इंगित करता है। निर्मल वर्मा की कहानियों में अकेलेपन, रोंमांटिसिज्म और काव्यात्मक

munotes.in

संवेदना से भरी पड़ी है। निर्मल वर्मा की कहानी 'दहलीज़' में जीवन की उन अनुभूतियों को अभिव्यक्ति दी गई है, जिन्हें एकांतिक अनुभूतियाँ भी कहा जाता है। जो अन्तर्मुखी और व्यक्तिपरक दोनों होती है। उनका प्रकाश बाह्य नहीं आंतरिक होता है। समाज के स्थूल एवं बाह्य यथार्थ की ठोस वास्तविकताओं के चित्रण के विपरीत निर्मल वर्मा की अन्त: चेतना आधुनिक सन्दर्भों में व्याप्त माहौल व उसकी अनुभूतियों को ही सामने लाती है। निर्मल वर्मा की इस कहानी में चित्रित कथानक का विश्लेषण भी कुछ इस तरह से किया गया है।

१४.१.२ कथानक

निर्मल वर्मा की कहानी 'दहलीज़' में किशोरावस्था की मस्ती और खिलंदड़ेपन को बड़ी ही बेबाकी से दिखाया गया है। जब व्यक्ति हर तरफ से बेफिकर होकर सिर्फ अपनी ही धुन में जीने की कोशिश करता है। रूनी, जेली और शम्मी को हफ्ते भर केवल शनिवार का इन्तजार रहता है, क्योंकि उसी दिन शम्मी भाई हॉस्टल से घर आते हैं, और तीनों मिलकर घूमते-फिरते और मौज-मस्ती भी करते हैं। फिर वह चाहे शाम को घर के आँगन में बैठकर चाय पीते हुए भाई से हॉस्टल के किस्से सुनना हो या रिजवार्यर पर घूमने जाना हो, सभी में विशेष खुशी-आनन्द और रोमांच मिलता था।

'दहलीज़' शीर्षक कहानी निर्मल वर्मा जी के उपन्यास 'लालटीन की छत' से काफी मिलती-जुलती है। इस कहानी की मुख्य केन्द्र बिन्दु पात्र 'रूनी' की चरित्र काया जो कि निर्मल वर्मा के उपन्यास 'लालटीन की छत' की ही पात्र है, से काफी मिलता-जुलता है। रूनी भी अभी किशोर उम्र की लड़की है। जो उम्र की ऐसी दहलीज़ पर खड़ी है, जहाँ बचपन पीछे छूट जाता है, और आने वाला समय अनेक संकेतों से भरा पड़ा है। रूमी वय: संधि की दहलीज़ पर खड़ी एक लड़की है। जो अपनी उम्र के हिसाब से अकेली है। साथिन के रूप में उसकी बड़ी बहन जेली भी है, जो उससे काफी बड़ी है। यहाँ भी बहनों-बहनों के बीच कई तरह के सन्देह भी है, उम्र का अन्तराल है तथा साथ ही एक सूनापन भी है। यहाँ रूनी की विड़बना है कि वह अपनी ही बहन के प्रेमी शम्मी भाई से मूक प्रेम करने लगती है, उन्हें मिलते हुए देखती है, उन्हें साथ में घुमते हुए देखती है, जिससे उसका अपना मन भी भटकता रहता है। रूनी उम्र की उस लकीर पर खड़ी एक ऐसी लड़की भी है, जहाँ ढेरों सपने होते हैं, सपनीला आकाश होता है, जहाँ वह उमंगों के साथ उड़ना चाहती है। रूनी भी उन्हीं लड़कियों में से एक हैं, वह घर पर अकेली पड़ गई हैं। अपने सपनों के साथ उसका कच्चा किशोर मन शम्मी भाई को अपना मान लेता है, लेकिन वह अर्थात शम्मी भाई तो जेली के कायल हैं। इस कारण रूनी बहुत दुखी होती हैं। उसे ऐसा लगता है कि अगर वह मर भी जाए तो किसी को कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है।

१४.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

कहानीकार निर्मल वर्मा की कहानियों में एक वे-आवाज शोर भी सुनाई पड़ता है, जो जीवन के अनचीन्हें, अनपहचाने ड़र की आहट से उत्पन्न होता है, इनकी कहानियाँ आज के परिवेश के अलगाव, अजनबीयत, संशय, अविश्वास, संत्रास, कुण्ठा और जीवन में गहराते सूनेपन को व्यंजित करती है। निर्मल वर्मा के लेखन में मृत्युबोध की गहन छाया भी है। घोर निराशा, अकेलापन तथा अन्य हवा देने वाली स्थितियाँ जिनसे जीवन निस्सार सा लगने

लगता है, वह यथार्थ बोध निर्मल की कहानियों में सर्वत्र मिलता है। उनकी कहानियों के पात्र नितांत अकेले हैं। वह जो अनुभूत करता है, भोगता है, उसे ज्यों का त्यों सत्यानिष्ठा और ईमानदारी से व्यक्त भी करता है। इनकी कहानी एक विशेष प्रकार की रूमानी भूमि पर घटित होती है। निर्मल वर्मा की कहानियों के पात्र अपने अकेलेपन का चुनाव खुद करते हैं, जैसे जिन्दगी में अकेला होना ही उनकी अनिवार्य जरूरत बन गई है। वास्तव में यह पात्रों के माध्यम से लेखकीय मानसिकता का भी चुनाव है। इसी तरह से निर्मल वर्मा ने अपनी चर्चित कहानी 'दहलीज़' के माध्यम से अपने पात्रों का चित्रण बड़ी ही सावधानी पूर्वक किया है। उनकी इस कहानी के पात्र रूनी, जेली और शम्मी भाई अपने अस्तित्व के प्रति विशेष प्रकार का मोह तथा वैयक्तिक सजगता है। हालाँकि अकेलेपन से ऊब कर इनके पात्र क्लबों, रेस्तरां और पबों में भी भटकते हैं। उनके ये पात्र स्वयं से ही संघर्ष करते रहते हैं, और अपनी ही अन्तस की गुत्थियों को उलझाते-सुलझाते रहते हैं। इनकी यह कहानी यथार्थ के सूक्ष्म स्तरों का भी उद्घाटन करती हैं।

निर्मल वर्मा की कई कहानियों में बड़े ही रूग्ण पात्र भी मिलते हैं, जो अशक्तता एवं दयनीयता की मूर्ति बनकर हमारी संवेदनाओं को जगाने के साथ-साथ कथा के विकास में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनकी 'दहलीज़' जैसी कहानी के पात्र भी अजनबीयत एवं नियति के प्रति अज्ञात भय को झेलते कहानी के पात्र बोझिल एवं विवशतापूर्ण जिन्दगी जीने को अभिशप्त हैं। निर्मल वर्मा की कहानियों के सभी पात्र रूना, और जेली इस कथन के सबसे सशक्त प्रमाण हैं। नि:सन्देह निर्मल वर्मा अपने इन पात्रों की वैयक्तिकता एवं वैशिष्ट्य को उभारने में सजग एवं जागरूक कहानीकार भी है। इनकी कहानियों में व्यक्त विदेशीपन एवं सर्वथा भिन्न किस्म कह रूमानियत के कारण उन्हें समझने के लिए अतिरिक्त प्रयासों की भी अपेक्षा होती है।

निर्मल वर्मा की चर्चित कहानी 'दहलीज़' के प्रमुख पात्रों रूना, जेली और शम्मी में किशोरवस्था की मस्ती और उनके खिलंदड़ेपन को लेखक ने बड़ी ही बेबाकी के साथ प्रस्तुत किया है। इन सभी पात्रों में खुशी और रोमांच का पल हमेशा बना रहता है। तीनों पात्र पूरी कहानी में आरंभ से लेकर अंत मौज-मस्ती करते रहते हैं| इस प्रकार निर्मल वर्मा ने इन पात्रों के माध्यम से 'दहलीज़' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण बड़े ही मनोरंजक ढंग से किया है।

१४.१.४ 'दहलीज़' कहानी का उद्देश्य

अपनी गंभीर, भावपूर्ण एवं अवसाद से भरी कहानियों के सृजन हेतु जाने-माने कहानीकार निर्मल वर्मा को आधुनिक हिन्दी कहानी का सबसे लोकप्रिय कहानीकार के रूप में जाना जाता है। निर्मल वर्मा की कहानियों का प्रमुख उद्देश्य आज के आधुनिक परिवेश में व्याप्त माहौल को उजागर करना रहा है। उनकी इस कहानी में भी संवेदना के विभिन्न लक्षण उनके तीनों प्रमुख पात्रों में भी नजर आते हैं। रूनी का मौन भी इस कहानी को संवेदनात्मक रूप से भी झकझोर देता है। इसके अलावा, प्रकृति, संगीत, रहस्य, रूमानियत तथा अस्तित्ववादी दर्शन उनकी कहानियों में उद्देश्यपरक ढंग से परिलक्षित होता है।

१४.१.५ सारांश

सारांशत: यह कहा जा सकता है कि निर्मल वर्मा की कहानियाँ आज के आधुनिक से आधुनिकतम माहौल में व्याप्त संत्रास को उजागर करती हैं, उनकी कहानियों में एक अजीब किस्म की बेचैनी भी दिखाई देती है। परन्तु साथ ही कहीं-कहीं मौन की स्वीकार्यता भी 'दहलीज़' कहानी की तरह नजर आने लगती है। निर्मल वर्मा की कहानियों में व्यक्ति प्रवासी होते हुए भी भारतीय ही नजर आता है। जहाँ एक ओर उसमें असुरक्षा की भावना है तो दूसरी ओर अपने अस्तित्व और अस्मिता के प्रति मोह भी दिखाई देता है। उनकी कहानियों के कुछ पात्र समाचार पत्रों के राशिफल में भी विश्वास करने वाले पात्र हैं। वहीं वे कहीं-कहीं विसंगतियो के शिकार भी होते हैं। इन सबके अलावा निर्मल वर्मा की कहानियों के पात्रों में जीवन को सार्थक बनाने के कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्य भी नजर आते हैं। अगर व्यक्ति पुराने संसार में लौटना नहीं चाहता तो वह कुछ नया करने का प्रयास करता नजर आता है। निष्कर्षत: यह कहना होगा कि युग के यथार्थ एवं उससे जूझते मनुष्य का चित्रण करना ही निर्मल वर्मा जैसे लोकप्रिय कहानीकार की कहानियों का उद्देश्य यही रहा है कि यही आधुनिक युग के हर व्यक्ति की माँग भी है| निर्मल वर्मा अपनी कहानियों में व्यक्ति के मन की भीतरी तहों तक पहुँचकर उसकी नियति का भी साक्षात परिचय देते हैं। साथ ही उन पात्रों के मन में छुपी संवेदना को भी बड़े ही स्पष्ट रूप में उजागर करते हैं।

१४.१.६ दीर्घोत्तरी प्रश्न

i. निर्मल वर्मा की कहानी 'दहलीज़' की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

ii. निर्मल वर्मा की 'दहलीज़' कहानी के कथानक को स्पष्ट कीजिए।

iii. निर्मल वर्मा की 'दहलीज़' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iv. निर्मल वर्मा आधुनिक कहानीकारों में बड़े कहानीकार हैं। सिद्ध कीजिए।

१४.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. 'दहलीज़' कहानी का सारांश लिखिए।

ii. निर्मल वर्मा की 'दहलीज़' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

iii. रूनी का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iv. 'दहलीज़' कहानी के पात्रों पर टिप्पणी लिखिए।

१४.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. दहलीज़ कहानी के रचनाकार कौन हैं?

ii. परिंदे किसका कहानी संग्रह है ?

iii. अंतिम अरण्य के रचनाकार कौन हैं?

iv. रूनी किस कहानी की प्रमुख पात्र है?

v. जेली किस कहानी की पात्र है?

*****

mnotes.in

१५

वापसी - उषा प्रियंवदा

इकाई की रूपरेखा

१५.० इकाई का उद्देश्य

१५.१ प्रस्तावना

१५.२ कथानक

१५.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

१५.४ 'वापसी' कहानी का उद्देश्य

१५.५ सारांश

१५.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

१५.७ लघुत्तरीय प्रश्न

१५.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१५.० इकाई का उद्देश्य

- इस इकाई के उद्देश्य के माध्यम से उषा प्रियंवदा की कहानी 'वापसी' के कथानक को समझा जा सकता है।
- इस इकाई के माध्यम से 'वापसी' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण को भी समझा जा सकता है।
- इन कहानी के माध्यम से ही कहानी के उद्देश्य को भी हम सरलतापूर्वक समझ सकते हैं।
- इन कहानी के माध्यम से इकाई के सारांश को भी समझ सकते हैं।

१५.१ प्रस्तावना

इस इकाई में नयी कहानी से जुड़ी प्रख्यात कथाकार/रचनाकार उषा प्रियंवदा की कहानी वापसी का अध्ययन किया जाएगा। उषा प्रियंवदा जी नई कहानी आन्दोलन की महत्वपूर्ण लेखिकाओं में से एक हैं। नई कहानी आन्दोलन में कई कहानी लेखिकाओं का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उषा प्रियंवदा के साथ-साथ कृष्णा सोबती और मन्नू भंडारी का नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उषा प्रियंवदा का जन्म कानपुर में हुआ था। इन्होंने अंग्रेजी साहित्य में एम. ए. और पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। दिल्ली के लेडी श्री राम कॉलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन भी किया। उषा प्रियंवदा ने कहानी के अलावा कई उपन्यास भी लिखे हैं, जिनमें पचपन खंभे लाल दीवारें, बनवास और रूकोगी नहीं राधिका, विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके कई कहानी संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं। उषा प्रियंवदा का अधिकत्तर लेखन शहरी मध्यवर्गीय जीवन से जुड़ा है । विशेष रूप से

munotes.in

मध्यवर्गीय परिवारों में संबंधों में आने वाले तनाव और संघर्ष को अत्यंत ही संवेदनशील ढंग से पेश करने में उनको महारत हासिल रही है।

१५.२ कथानक

किसी भी कहानी के कथानक या उसकी कथावस्तु को समझने के लिए यह समझना भी जरूरी है कि कहानी की रचना किसलिए की गई है। इस कहानी के माध्यम से रचनाकार क्या कहना चाहता है, और जो कहना चाहता है, उसे कहने के लिए उसके कथानक को किस तरह विकसित किया है। इस दृष्टि से विचार करने पर 'वापसी' जैसी कहानी के केन्द्रीय भाव को भी समझा जा सकता है। उषा प्रियंवदा की कहानी 'वापसी' एक सेवा निवृत्त रेल्वे कर्मचारी गजाधर बाबू की कहानी है। कहानी में इस बात का उल्लेख नहीं है कि गजाधर बाबू रेल्वे में किस पद पर थे, और किस तरह का काम करते थे। लेकिन कहानी में यह बताया गया है कि उनकी पोस्टिंग आम तौर पर छोटे स्टेशनों पर ही होती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि वे स्टेशन मास्टर पद पर कार्य करते रहे होंगे। स्टेशन मास्टर का पद ऐसा है, जिसमें रेलवे कर्मचारियों को छोटे-छोटे स्टेशनों पर रहना पड़ता है। उन छोटी जगहों पर वे अपने बच्चों की पढाई का उचित प्रबंध नहीं कर सकते थे, और न ही वे अपनी पत्नी और बच्चों को अन्य सुविधाएँ ही प्रदान कर सकते थे। यही सोचकर उन्होंने शहर में एक मकान बनवा लिया था, जहाँ उनकी पत्नी बच्चों के साथ रहती थीं। गजाधर बाबू के कुल चार बच्चे थे, दो बेटे, दो बेटियाँ एक बेटा और एक बेटी की शादी हो गई थी। बेटी शादी के बाद ससुराल चली गयी थी, लेकिन बेटा उसी मकान में अपनी माँ, पत्नी और छोटे भाई और बहन के साथ रह रहा था। छोटे भाई-बहन अभी पढ़ रहे थे। गजाधर बाबू लौटकर अपने इसी घर परिवार में आते हैं। उनमें घर लौटने की खुशी है। अपनी पत्नी का साथ दुबारा पाने की इच्छा है, जिनके साथ बिताए कई सुखद अनुभव उनकी यादों में बसे हैं। पत्नी की सुन्दर और स्नेह भरी छबि उनकी स्मृतियों में बनी हुई है।

गजाधर बाबू के मन में यह भी विषाद है कि इतने वर्षों तक जिस संसार में रहे, वह भी उनसे छूट रहा है। यहाँ उन्हें आदर भी मिला है, और स्नेह भी। लेकिन जहाँ वे जा रहे हैं वह उनका अपना घर संसार है। गजाधर बाबू के उस समय की मानसिकता को कहानीकार उषा प्रियंवदा ने कुछ इन शब्दों में व्यक्त किया है – "गजाधर बाबू खुश थे, बहुत खुश। पैंतीस साल की उम्र के बाद वह रिटायर होकर जा रहे थे। इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने अकेले ही रहकर काटा था। उन अकेले क्षणों में उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी, जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे।" कहानी का केन्द्रीय मुद्दा यह है कि घर पहुँचने पर क्या उन्हें वही संसार मिलता है जो उनकी यादों में बसा था, और जिसके मिलने की उन्होंने उम्मीद की थी। गजाधर बाबू को वह दुनिया नहीं मिलती, जिसकी उन्होंने उम्मीद की थी। जल्दी ही उन्हें एहसास हो जाता है कि वे अपने ही घर में बिन बुलाए मेहमान की तरह हैं। उनके आने से जैसे घर की बनी बनायी व्यवस्था में व्यवधान पैदा हो गया है। कहानी में कुछ ऐसे प्रसंगो का उल्लेख है जो उन्हें धीरे-धीरे अपने घर वालों से दूर ले जाती है। यहाँ तक कि उन्हें लगता है कि उनकी पत्नी भी अब उनके करीब नहीं रह गई हैं। वे हर घटना के बाद घर से दूर छोटे स्टेशनों पर बिताई अपनी जिन्दगी को याद करने लगते हैं। कहानी के आरम्भ में ही वर्णित एक घटना के उल्लेख से इसे समझा जा सकता है।

लौटने के बाद पहली बार गजाधर बाबू अपने बच्चों के बीच जाते हैं,जो उनकी अनुपस्थिति में चाय पीते हुए हँसी-मजाक कर रहे होते हैं। लेकिन उनको देखकर सब चुप हो जाते हैं। बहू अपने सिर पर पल्ला रखकर चली जाती हैं। बेटा चाय का आखिरी घूँट भरकर वहाँ से खिसक जाता है। बेटी बसंती पिता के लिए चुपचाप कप में चाय उडेलती है, और कप उनके हाथ में पकड़ा देती है। पिता चाय का घूँट लेते हैं और कहते है – 'बिट्टी चाय तो फीकी है।' यह छोटी सी घटना इस बात को बताती है कि पिता की पसन्द या नापसंद के बारे में बच्चों को कोई जानकारी नहीं है। गजाधर बाबू को ऐसा लगने लगता है कि उनकी मौजूदगी ने घर में कोई उत्साह पैदा नहीं किया है। ऐसे समय उन्हें रेलवे स्टेशन के अपने नौकर गनेशी की याद आती है। गजाधर बाबू अपने घर वालों से गनेशी से ज्यादा की अपेक्षा करते थे, लेकिन उन्हें गनेशी जैसी सेवा और आदर घर में नहीं मिल रहा था। इसका भी एहसास उन्हें होने लगा था। बाद की घटनाओं से यह एहसास बढ़ता जाता है। घर में उनके रहने की व्यवस्था कुछ इस तरह की जाती है जैसे किसी मेहमान के लिए कुछ अस्थायी प्रबंध कर दिया जाता है। पत्नी बच्चों के बारे में बहुत सी शिकायतें करती हैं। लेकिन जब उन शिकायतों पर वे बच्चों को कुछ कहते हैं तो न बच्चों को ही अच्छा लगता है और न ही उनकी पत्नी को।

अपने प्रति अपनी पत्नी और बच्चों का व्यवहार उन्हें अन्दर तक आहत कर देता है। पत्नी की जो सुन्दर और स्नेह भरी छवि देखने की उम्मीद उन्होंने की थी, उन्हें लगता है कि वह कहीं खो गई हैं। गजाधर बाबू का पूरा व्यवहार घर के मुखिया सा है, जो मानता है कि घर में व्यवस्था और अनुशसान लाने की जिम्मेदारी उनकी है। इसके लिए वे जो भी प्रयत्न करते हैं, वे बच्चों को अपनी जिन्दगी में दखल लगते हैं, और इस बात को वे किसी न किसी रूप में व्यक्त भी कर देते हैं। इससे गजाधर बाबू और अधिक दुखी हो जाते हैं। उनका अकेलापन और अधिक बढ़ जाता है। लेकिन जब उनकी पत्नी बताती हैं कि उनका बड़ा बेटा अमर अलग होना चाहता है तो वे समझ जाते हैं कि इस घर में अब उनके लिए कोई जगह नहीं है।

स्पष्ट ही गजाधर बाबू ने जाने-अनजाने ही सही घर के अन्य सदस्यों की स्वतंत्रता छीन ली थी। यहाँ यह प्रश्न जरूर उठता है कि उस घर-परिवार में उनकी पत्नी ने अपने आपको ढाल लिया है। लेकिन गजाधर बाबू क्यों न कर सके ? 'वापसी' कहानी छोटे प्रसंगों से ही निर्मित हुई है। इसमें कोई ऐसा प्रसंग नहीं है जो असामान्य हो। लेकिन इन सामान्य प्रसंगों से ही कहानी में गजाधर बाबू का अकेलापन बहुत ही तीव्रता से उभरकर आता है। कहानी भी गजाधर बाबू के नजरिए से ही लिखी गई है। इसलिए शेष पात्रों का पक्ष उन्हीं के नजरिए से ही सामने आता है, और वे सभी किसी न किसी रूप में गजाधर बाबू को घर छोड़ने के लिए मजबूर करते नजर आते हैं। इन तमाम प्रसंगों के माध्यम से गजाधर बाबू का अपने ही परिवार से होने वाले मोहभंग का अपेक्षाकृत विस्तार से वर्णन किया है। इस तरह गजाधर बाबू की नौकरी से पहली वापसी और घर से दूसरी वापसी में ही समाप्त हो जाती है।

१५.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

'वापसी' कहानी गजाधर बाबू को केन्द्र में रखकर लिखी गयी है इसलिए कहानी में मुख्य चरित्र भी वही हैं, और उन्हीं का चरित्र सबसे अधिक मुखर होकर सामने आता है। इनके अलावा उनकी पत्नी का चरित्र दूसरे पात्रों की तुलना में ज्यादा उभरकर आता है। शेष सभी

पात्र कहानी की जरूरत के अनुसार आते-जाते हैं, और उनका चरित्र बहुत उभरकर नहीं आता। लेकिन उनसे जुड़े जो भी प्रसंग सामने आते हैं, उनसे उनके चरित्र की केन्द्रीय विशेषताओं की पहचान हो जाती है। अपने सीमित कलेवर के कारण कहानी में बहुत अधिक पात्र हो भी नहीं सकते। यह कहानी लेखिका के शिल्प की विशेषता है कि उन्होंने कथानक का गठन इस तरह किया है कि पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ स्वत: ही उभर आती हैं। गजाधर बाबू को इस कहानी का केन्द्रीय पात्र या नायक कहा जा सकता है। पूरी कहानी ही गजाधर बाबू के आस-पास ही घूमती है। गजाधर बाबू पर केन्द्रित होने के बावजूद इसे चरित्र प्रधान कहानी कहना कतई उचित नहीं होगा, क्योंकि कहानी का मकसद गजाधर बाबू के चरित्र को उभारना नहीं है, बल्कि उनके माध्यम से परिवारों में वृद्ध लोगो की बदलती स्थिति को दर्शाना है। गजाधर बाबू वैसे तो घर के मुखिया है, और परस्परागत दृष्टि से देखने पर उनकी इच्छा और आदेश ही पूरे परिवार के लिए सर्वसामान्य होने चाहिए। वह इसका प्रयत्न भी करते हैं कि घर के सभी सदस्य उनके कहे अनुसार चलें, लेकिन ऐसा होता ही नहीं है। उनके इस आदेश देने की कोशिशों को घर के दूसरे सदस्य बहुत पसन्द नहीं करते, बल्कि अपने-अपने ढंग से उसका विरोध ही करते हैं।

सिर्फ इतना ही नहीं, उनका घर में मौजूद रहना भी शेष सदस्यों को अखरने लगता है। कहानी यह भी स्पष्ट नहीं करती कि पत्नी और बच्चों का बदला हुआ व्यवहार किस कारण से हैं, अपने परिवार से दूर रहने के कारण या परिवार के बदलते ढाँचे के कारण ऐसा हो रहा है।

इसका यह अर्थ तो बिल्कुल भी नहीं लगाया जाना चाहिए कि गजाधर बाबू कठोर प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। अपने घर-परिवार के सदस्यों के प्रति भी वे स्नेह का भाव रखते हैं। गनेशी का उदाहरण कहानी में सबके सामने है, जिसको वे बहुत ही प्रेमपूर्वक याद करते हैं। अपनी पत्नी के प्रति भी उनके मन में गहरा लगाव है, और नौकरी से रिटायर होने के बाद जल्दी से जल्दी घर पहुँचने की इच्छा के पीछे अपनी पत्नी के प्रति उनका यह लगाव भी है। पत्नी को लेकर कई मधुर स्मृतियाँ उनके मन में बसी हुई हैं। अपने बच्चों के प्रति भी स्नेह का भाव उनके मन में सदैव भरा रहता है। उनमें अपने घर परिवार के प्रति जिम्मेदारी का बोध भी है। इसी वजह से वे अपने बच्चों को टोकते भी हैं, लेकिन उनकी इस भावना को बच्चे समझ नहीं पाते और यह लगता है कि पिता उन पर शासन चलाने की कोशिश कर रहे हैं।

माता-पिता और बच्चों में जिस तरह का संवाद होना चाहिए, उसका अभाव भी यहाँ नजर आता है। माँ की नजरों में बसंती का काम से जी चुराने के पीछे मुख्य कारण अपनी सहेली शीला के यहाँ जाना है, उन्हीं के अनुसार वहाँ बड़े-बड़े लड़के हैं। एक पिता के लिए यह कथन निश्चय ही चिन्ता का विषय है। एक कुंवारी लड़की ऐसे घर में बार-बार आए-जाए जहाँ जवान लड़के हो तो उसका चिन्तित होना स्वाभाविक है, और इसी वजह से वह जब एक दिन बसंती को शीला के घर जाते हुए देखते हैं, तो उसे जाने से रोक देते हैं। बेटी नाराज हो जाती है और वह खाना-पीना छोड़ देती है। बेटी के इस तरह रूठ जाने से माँ भी दुखी हो जाती है, और वह इसके लिए अपने पति को ही दोषी मानती हैं। यह पूरा का पूरा घटना क्रम गजाधर बाबू के व्यक्तित्व की दो कमजोरियों की ओर इशारा करता है। गजाधार बाबू का जीवन संबंधी नजरिया बिल्कुल परम्परावादी है। उनका मानना है कि स्त्रियों का कर्तव्य घर में रहना और घर के काम में हाथ बँटाना है। पढ़ाई उनके लिए इतनी जरूरी नहीं

है। उनको ज्यादा स्वतंत्रता देना भी उचित नहीं है। गजाधर बाबू के अलावा अन्य जिन पात्रों का उल्लेख कहानी में आता है वे सभी गजाधर बाबू के माध्यम से ही हमारे सामने प्रकट होते हैं। उनकी पत्नी, उनके बच्चे और उनका नौकर ये सब के सब कहानी की परिधि में ही चक्कर लगाते रहते हैं। कहानी के केन्द्र में तो गजाधर बाबू ही बने रहते हैं। गजाधर बाबू की तरह उनकी पत्नी भी परम्परावादी हैं, लेकिन पति से अलग अपने बच्चों के साथ रहने की उनकी लम्बी आदतों ने उन्हें अपने पति से कुछ हद तक उदासीन भी बना दिया है। ऐसा होना भी बहुत स्वाभाविक प्रतीत नहीं होता हैं।

इसी प्रकार वापसी कहानी में बच्चों द्वारा पिता को एक आवांछित मेहमान की तरह देखना भी अतिरंजनापूर्ण लगता है। ऐसा मालूम पड़ता है कि कहानीकार की सहानुभूति सिर्फ गजाधर बाबू के प्रति है, शेष पात्रों को समझने का प्रयास नहीं दिखाई देता है। शेष पात्रों की चरित्रिक विशेषताएँ कहानी में इसी रूप में आती हैं कि स्वयं गजाधर बाबू उन्हें किन पात्रों में देखने की कोशिश करते हैं।

१५.४ 'वापसी' कहानी का उद्देश्य

'वापसी' नयी कहानी दौर की एक महत्वपूर्ण कहानी है। यह कहानी लेखिका उषा प्रियंवदा की संभवत: सबसे चर्चित कहानी भी मानी जाती है। कहानी का उद्देश्य एक सेवानिवृत्त व्यक्ति गजाधर बाबू को केन्द्र में रखकर उसे विश्लेषित करने का ही है। अपनी रेलवे की पैंतीस साल की नौकरी से रिटायर होकर वे अपने घर आते हैं। बच्चे जो अब जवान हो गये हैं। बड़े-बेटे और बड़ी बेटी की शादी हो गई है। इस कहानी में गजाधर बाबू की मौजूदगी बच्चों के सहज जीवन में अवरोध बन जाती है। इसीलिए वे अपनी माँ से अपने पिता की आलोचना करते हैं, और उन्हें क्या करना चाहिए क्या नहीं यह भी बताते हैं ? यही वजह है कि गजाधर बाबू यह नहीं सोच पाते कि दुनिया बहुत बदल गई है। इस उद्देश्य से तो गजाधर बाबू अपनी पत्नी से भी संवाद करने में नाकामयाब रहते हैं। यह कहानी पाठकों पर भी गहरा असर ड़ालती है।

१५.५ सारांश

'वापसी' जैसी चर्चित कहानी एक वृद्ध व्यक्ति के अकेलेपन, अपने ही घर परिवार से अलगाव और उसकी आन्तरिक पीड़ा को व्यक्त करने में काफी हद तक सफल हुई है। 'वापसी' कहानी आधुनिक परिवारों में वृद्ध माता-पिता के प्रति बच्चों के बदलते रवैये का अत्यंत ही मार्मिक चित्रण करती है। कहानी यह बताती है कि, माता-पिता के लिए अपने ही बच्चों के साथ घुल-मिलकर रहना काफी मुश्किल हो सकता है। यदि वे बच्चों की भावनाओं और इच्छाओं को नहीं समझते हैं, तो कहानी के मुख्य पात्र गजाधर बाबू का चित्रण इस दृष्टि से बेहद प्रभावशाली है। पूरी की पूरी कहानी उन्हीं के आस-पास घूमती है। अन्य पात्रों का चित्रण भी बड़े यथार्थपरक ढंग से किया गया है। कहानी में मध्यवर्गीय परिवार का यथार्थ चित्र भी प्रस्तुत हुआ है। भाषा कहानी के अनुरूप संवेदनात्मक और सहज है। कहानीकार की सहानुभूति यद्यापि गजाधर बाबू के साथ है, लेकिन अन्य पात्रों को खलनायक की तरह प्रस्तुत नहीं किया गया है।

१५.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

i. 'वापसी' कहानी के कथानक को ध्यान में रखकर उसका मूल्यांकन कीजिए।

ii. 'वापसी' कहानी के संरचना शिल्प को सोदाहरण समझाइए।

iii. 'वापसी' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iv. 'वापसी' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

१५.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. 'वापसी' कहानी का सारांश संक्षेप में लिखिए।

ii. गजाधर बाबू का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iii. 'वापसी' कहानी में किस समस्या को उठाया गया है? स्पष्ट कीजिए।

१५.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. वापसी कहानी की लेखिका कौन हैं?

ii. गजाधर बाबू किस कहानी के केन्द्रीय पात्र है?

iii. गणेशी किस कहानी का पात्र है?

iv. बासंती किस कहानी की नायिका है?

v. रुकोगी नहीं राधिका किसकी रचना है?

*****

munotes.in

१५.१

चीफ की दावत - भीष्म साहनी

इकाई की रूपरेखा

१५.१.० इकाई का उद्देश्य
१५.१.१ प्रस्तावना
१५.१.२ कथानक
१५.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण
१५.१.४ 'चीफ की दावत' कहानी का उद्देश्य
१५.१.५ सारांश
१५.१.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न
१५.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न
१५.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१५.१.० इकाई का उद्देश्य

- इस इकाई के माध्यम से भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' के कथानक या कथावस्तु को भी समझा जा सकता है।
- इस इकाई के माध्यम से 'चीफ की दावत' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण को भी समझा जा सकता है।
- 'चीफ की दावत' कहानी के माध्यम से इकाई के सारांश को भी समझ सकते हैं।

१५.१.१ प्रस्तावना

भीष्म साहनी का समस्त साहित्य ही भारतीय जीवन के सुख-दु:ख में शामिल अनुभव है। प्रगतिशील विचारों से प्रभावित वे सदा मेहनत करने वाले वर्ग एवं शोषण की शिकार जनता के साथ खड़े होते है। वे उन तमाम लोगों से जुड़े हुए हैं, जो जीवन में संघर्ष करते हुए जी रहे हैं। उन्होंने जीवन में मनुष्य और चीजों के बीच उपस्थित द्वन्द्व को समझने की कोशिश की है। मध्यवर्ग और निम्नवर्ग की जनता के जीवन को, उसके संघर्ष और यातना को समझने की चेतना भीष्म साहनी की कहानियों में झलकती है। भीष्म साहनी अपने युग के एक ऐसे रचनाकार रहे है, जिनका समाज के प्रति दृष्टिकोण बड़ा ही स्वस्थ्य और स्पष्ट रहा है। मूलत: समाजवादी चेतना से जुड़े रहने के कारण समाज के प्रति उनकी दृष्टि प्रगतिशील रही है। यही कारण है कि समाजवाद की समष्टि चिन्तनधारा के प्रभुत्व कहानीकार के रूप में उभरता है। उनकी कहानियों में जन सामान्य का जीवन और अंतर्विरोध बड़े सशक्त रूप में अभिव्यक्त हुआ है। किसी भी विचार, दर्शन या चिन्तन के प्रभाव को एक विशिष्ट सीमा तक ही भीष्म जी ने ग्रहण किया है। यह सच है कि प्रगतिशील विचारधारा के प्रमुख कहानीकारों में उनका नाम लिया जाता है, पर गौर से उनके साहित्य का अवलोकन करने

munotes.in

से स्पष्ट होगा कि मूलत: वे मानवतावादी है। इनका मानवतावाद, मार्क्सवादी चिन्तन और समाजवादी दर्शन से प्रभावित है।

१५.१.२ कथानक

भीष्म सहानी की कहानियों का मुख्य प्रतिपाद्य इस देश का मध्य और निम्न मध्यवर्गीय समाज है। भारतीय दर्शन और चिन्तन का प्रभाव कहीं-कहीं उनकी कहानियों पर स्पष्ट लक्षित होता है। हिन्दी के जिन कहानीकारों ने प्रेमचन्द की परम्परा को स्वीकारा है, या आत्मसात किया है, उनमें भीष्म साहनी जी अलग से पहचाने जाते हैं। इनकी कहानियों में आधुनिकता बोध, और यथार्थवादी विचारधारा के अन्तर्विरोधों को सामाजिक और पारिवारिक प्रसंगों में व्यक्त किया है। कहानी के कथानक का चुनाव भी भीष्म साहनी जी बड़े ही धीरज से करते है। साधारण लोगों के जीवन की छोटी-छोटी बातें वह खुद अपनी आँखों से देखता है। उन लोगों की सामाजिक और व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करता है। पात्रों को कल्पना से नहीं जीवन से खोजता है, और उसे चुनता भी है। लिखते समय भी वह यथार्थ में ज्यादा और अपनी कल्पना से कम काम लेता है।

'चीफ की दावत' शीर्षक कहानी में मि. शामनाथ नाम का एक व्यक्ति है, जिसके घर शाम के वक्त चीफ की पार्टी है। शामनाथ की माँ बहुत ही बूढ़ी है, बेडौल शरीर की निरक्षर देशी औरत है। यद्यपि मि. शामनाथ को पढ़ाने-लिखाने और ओहदेदार बनाने में वे अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। शामनाथ और उसकी पत्नी इस बात से परेशान हैं कि चीफ की दावत के समय माँ को कहाँ किया जाए, ताकि उनकी नजर से माँ को बचाया जा सके, और भद्दगी न हो पाए। परन्तु जिस बात से शामनाथ सबसे ज्यादा परेशान था, अन्त में वहीं होता है। चीफ को उस पार्टी में यदि कोई पसन्द आता है तो वह है माँ के हाथों द्वारा बनाई गई फुलकारी। बेटे के व्यवहार से तंग माँ हरिद्वार जाने का निश्चय कर लेती है, परन्तु इस पार्टी की सफलता का सबसे बड़ा कारण माँ को पाकर, शामनाथ अपने आलिंगन में भर लेता है। लेकिन जब माँ को यह पता चलता है कि एक नई फुलकारी बनाकर चीफ को भेंट कर देने से मेरे बेटे की पदोन्नति हो जाएगी, तो हरिद्वार जाने का विचार त्याग कर वे एक बार पुन: बेटे के भविष्य के लिए अपनी रोशनी की अंतिम किरण भी उस पर समर्पित कर देती है।

मध्यवर्गीय जीवन का यथार्थ जो आजादी के बाद देश में विकसित हुआ, उसमें इस जीवन की आन्तरिक एवं बाह्य स्थिति, विसंगतियों, विचित्रताओं और अमानवीयता से लथपथ हो गई है। 'चीफ की दावत' कहानी में यह व्यक्त किया गया है – "और माँ, आज जल्दी सो नहीं जाना। तुम्हारी खर्राटों की आवाज दूर तक जाती है। माँ लज्जित सी आवाज में बोली, क्या करूँ बेटा, मेरे बस की बात नहीं है। जब से बीमारी में उठी हूँ, नाक से साँस नहीं ले सकती।" 'चीफ की दावत' कहानी का मूल स्वर इसी विडंबना को उद्घाटित करना है कि 'शामनाथ' जैसे चरित्र हमारे मध्यवर्ग की देन है। इस कहानी में शामनाथ आर्थिक मोह में इतना तल्लीन हो चुका है कि वह अब रिश्तों की मिठास और माँ के वात्सल्य प्रेम को भी भूल चुका है। वात्सल्य की प्रतिमूर्ति माँ शामनाथ के लिए एक वस्तु बन जाती है, इसलिए बूढ़ी माँ को और वस्तुओं की भाँति सजाने-सवाँरने में पति-पत्नी चिन्तित दिखाई देते हैं। शामनाथ जिस कंपनी में काम कर रहा है वह अमेरिकन कंपनी है। जो भारत से मुनाफा

कमाकार विदेश ले जा रही है। भीष्म साहनी की इस कहानी में शामनाथ ऐसी ही कंपनी में प्रमोशन के लिए अपने बॉस को दावत देकर उसे खुश करने की जुगत में है। "आखिर पाँच बजते-रजते तैयारी मुकम्मल होने लगी, कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकीन, फूल सब बरामदे में पहुँच गये। ड्रिंक का इन्तजाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान आल्मारियों को पीछे और पलँगो के नीचे छिपाया जाने लगा। तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गयी, माँ का क्या होगा?"

शामनाथ तरक्की एवं पैसे के पीछे इतना अन्धा हो चुका है कि माँ का व्यवहार ही उसे पसन्द नहीं आता है। बेटे की ही बेरूखी को देखकर माँ हरिद्वार जाने का निर्णय लेती है। चीफ के लिए फुलकारी बना देने को वह माँ को मजबूर करता है – "माँ तुम मुझे धोखा देके यूँ चली जाओगी। मेरा बनता काम बिगाड़ोगी? जानती नहीं, साहब खुश होगा तो मुझे तरक्की मिलेगी।" इस कहानी के माध्यम से ही लेखक भीष्म साहनी ने यह स्पष्ट किया है कि, हमारे समाज में एक ऐसा भी वर्ग है, जो रिश्तों को जीता है, इन्हें निभाने के लिए हर संघर्ष का सामना करता है। जैसे बेटे की तरक्की की खातिर नजरें कमजोर होते हुए भी माँ फुलकारी बनाने का संकल्प लेती है। वहीं दूसरा वर्ग हमारे समाज का पढ़ा-लिखा मध्यवर्ग है, जो तरक्की और पैसे की मजबूती के लिए रिश्तों को भी बाजार में लाकर खड़ा कर देता है।

इस कहानी में मि. शामनाथ की एक समस्या जहाँ हल होती हैं, वहीं दूसरी समस्या की गठरी खुल भी जाती है। वह सम्पन्नता प्रदर्शन के द्वारा चीफ पर अपनी धाक जमाना चाहता है। इसलिए वह माँ को सफेद सलवार, कमीज ओर चूड़ियाँ पहनने को मजबूर करता है। माँ, बेटे का संवाद, पुत्र की बुद्धिमत्ता और माँ की स्थिति की मार्मिकता को यह कहानी अच्छी तरह से दर्शाती है – "चूड़ियाँ कहाँ से लाऊँ बेटा, तुम तो जानते हो, सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए।" यह वाक्य शामनाथ को तीर की भाँति चुभा। वह उत्तर में कहता है – "जितना दिया था, उससे दुगना ले लेना।" भौतिकता की इस आँधी के थपेड़ों से माँ रूपी परंपरा जख्मी हो रही है। यहाँ संवेदनशीलता के साथ-साथ लेखक भीष्म साहनी जी ने परम्परा के महत्व को भी स्थापित किया है। शामनाथ की इस चीफ की दावत में उपहास का माध्यम माँ ही बनती है।

१५.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' में शामनाथ मुख्य पात्र के रूप में उभरता है। शामनाथ एक ऐसा पात्र है, जो सामाजिक तथा आर्थिक बिडंबनाओं से जूझ रहा है। वह स्वयं को आर्थिक दृष्टि से सुव्यवस्थित करने के लिए कुछ भी कर सकता है। 'चीफ को दावत' पर बुलाना उसे उत्कृष्ट कोटि का भोजन खिलाकर प्रमोशन के लिए अवसर पाने की इच्छा उसके चरित्र के लालचीपन को दर्शाती है। अपनी इस लौकिक उन्नति की इच्छा की पूर्ति हेतु वह हर बंधन को तोड़ सकता है। घर के फालतू सामान स्त्री माँ को कैसे दृष्टि से ओझल किया जाए, इसकी हर संभावना शामनाथ के मन में कौंधती रहती है। सहेली के घर भेजा जाए, दरवाजा बन्द करके उस पर ताला लगा दिया जाए, या फिर कुछ और किया जाए, यह प्रश्न उसे कई तरह से विचलित करते रहते हैं। अन्ततः वह निर्णय लेता है कि "माँ हम लोग पहले बैठक में बैठैंगे। उतनी देर तुम यहाँ बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहाँ आ

जाएँ, तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना ।" इस सन्दर्भ में यह स्पष्ट होता है कि शामनाथ तरक्की हेतु संवेदनहीन होता है, और अपनी बूढ़ी माँ को फालतू वस्तु के रूप में आंकता है । शामनाथ पूर्णत: स्वार्थी व्यक्ति है । स्वार्थ साधने के लिए वह किसी भी प्रकार का घृणित कार्य कर सकता है। जब माँ चीफ के आकर्षण का कारण बनती है, तो वह उसे गाना गाने और फुलकारी बनाकर देने के लिए विवश करता है । शामनाथ के कहे शब्द – "तुम चली जाओगी तो फुलकारी कौन बनाएगा, साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है ।" शामनाथ अर्थ एवं तरक्की की लोलुपता में इतना संक्षिप्त हो जाता है कि वह हर सही और गलत की दिशा ही भूल जाता है ।

इस कहानी में शामनाथ एक दिखावटी, बनावटी पात्र के रूप में उभरता है । वह बाहरी तामझाम में विश्वास रखता है, इसलिए चीफ को दावत पर आमंत्रित करने पर वह उसे अपने बड़े होने का अहसास कराना चाहता है । वह चीफ को दिखाना चाहता है कि वह किसी से भी कमजोर नहीं है । वह स्वयं को सभ्य और पूँजीपति दर्शाने हेतु घर का वातावरण ही बदल देता है – "आखिर पाँच बजते-बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी । कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकीन, फूल, सब बरामदे में पहुँच गये । ड्रिंक का इन्तजाम बैठक में किया गया । अब घर का फालतू सामान आलमारियों के पीछे और पलंगो के नीचे छिपाया जाने लगा । तभी शामनाथ के सामने माँ को कहीं रखने की समस्या खड़ी हो गई । शामनाथ का चरित्र ऐसा है कि वह परम्परा के प्रति आदरभाव न रखकर उसके प्रति नकार का भाव रखता है । कहने का तात्पर्य यह है कि परम्परा उसके लिए एक फालतू वस्तु की तरह है, जिसका समय के उपरांत उपयोग खत्म हो जाता है, इसलिए ममता से भरी माँ भी फालतू लगने लगती है ।"

शामनाथ मौका पररस्त है, जहाँ भी उसे फायदा मिलता है, वह किसी भी तरह का समझौता उस स्थिति से नहीं करता है । अपनी इसी प्रवृत्ति और प्रकृति के कारण वह मूल्यहीन बनता जाता है । आधुनिक समय की दौड़ में वह इतना संलग्न हो जाता है कि वह अपने दायित्त्वों के प्रति बिल्कुल भी सचेत नहीं रह जाता| इसलिए मेहमानों के सामने भी वह अपनी माँ को हास्यास्पद बनाता है । माँ की घुटन को समझने के बजाय वह मौके की फिराक में रहता है कि, ऐसी कौन सी स्थिति आए कि चीफ साहब उस पर प्रसन्न हो जाएँ और उसे प्रमोशन मिल जाए । माँ की हास्यास्पद स्थिति का मार्मिक चित्र इस तरह से दर्शाया गया है – "माँ हाथ मिलाओ" पर हाथ कैसे मिलाती दाएँ हाथ में तो माला थी । घबराहट में माँ ने बायाँ हाथ ही साहब के दाएँ हाथ में रख दिया । शामनाथ दिल ही दिल में जल उठे । देसी अफसरों की स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं ।

इससे यह तो स्पष्ट हो जाता है कि शामनाथ मध्यवर्गीय समाज का प्रतिनिधित्व करने वाला पात्र है । वह स्वार्थी, मौकापरस्त एवं दिखावटी तरह का है । वह आधुनिकता के परिवेश में अंधा व्यक्ति है, इसलिए जीवन मूल्यों के प्रति कोई भी दायित्व नहीं समझता है ।

१५.१.४ 'चीफ की दावत' कहानी का उद्देश्य

भीष्म साहनी जी की कहानी 'चीफ की दावत' मध्यवर्गीय समाज के परिवेश और मानसिकता को वास्तविकता के साथ अभिव्यक्त करती कहानी है । इस कहानी का प्रमुख

उद्देश्य यह है कि इसमें लेखक साहनी जी ने बुजुर्गों की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। आधुनिक दौर के मध्यवर्ग का व्यक्ति आगे बढ़ने की चाह में दौड़ता ही जा रहा है, तथा आगे बढ़ने की होड़ में पारिवारिक एवं सामाजिक संबंधो की बलि चढ़ाता जा रहा है। अर्थ की लालसा में व्यक्ति संवेदनहीन बनता जा रहा है। मशीन और बिजनेस के इस युग में व्यक्ति भी मशीन बन चुका है। नगरों-महानगरों के लोग पारिवारिक मूल्यों की खिल्ली उड़ाते नजर आते हैं। ऐसे में प्राय: वे यह भूल जाते हैं कि जीवन कितना खोखला होता जा रहा है। बुजुर्गों एवं परम्परा के प्रति असंवेदनशीलता से उनके जीवन में ममता, दया, करूणा, सहानुभूति जैसे मूलभूत तत्व लुप्त होते जा रहे हैं।

इस कहानी का प्रमुख उद्देश्य शामनाथ जैसे पात्र के माध्यम से इस समाज के सभी व्यक्तियों के विचारों को दर्शाया गया है। मध्यवर्गीय जीवन का एक विचित्र अंतर्विरोध है कि वह परम्पराओं का त्याग नहीं कर पाता है, और आधुनिक बनने की तरफ ललचाई नजरों से निहारता रहता है। बड़े-बूढ़ो के प्रति असंवेदनशीलता, ममता, दया, करूणा के लुप्त हो जाने से जीवन का वास्तविक अर्थ ही अर्थहीनं होता जा रहा है। अर्थ को जीवन का शगल मानने वाले शामनाथ की उस मानसिकता का अर्थ व्याख्यायित किया गया है, जिसमें पुत्र माँ को पहले तो अर्थहीन समझकर अपने खाँचे में स्थापित करना चाहता है, परन्तु बॉस जब उसे माँ का अर्थ समझाता है तो शामनाथ माँ का महत्व अपने स्वार्थ की कसौटी पर ही समझ पाता है। शामनाथ के लिए माँ प्रमोशन की सीढ़ी मात्र ही है। नि: सन्देह वह अभी तक माँ के अर्थ को नहीं समझ पाया था।

१५.१.५ सारांश

सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि इस कहानी का केन्द्रबिंदु शामनाथ की समस्या तरक्की की नहीं, बल्कि तरक्की के आगे आने वाली समस्या माँ है। उसकी यह चिन्ता है कि प्रदर्शन के अयोग्य माँ को प्रदर्शन की वस्तु कैसे बनाया जाए ? शामनाथ का व्यवहार इस बात का द्योतक है कि वह संस्कारों की भी प्रदर्शनी लगाने में विश्वास रखता है। शामनाथ के लिए माँ कठपुतली बन चुकी थी। जिसे वह अपने हिसाब से बैठाना, सँवारना और बुलवाना चाहता था। शामनाथ का अपनी माँ के प्रति व्यवहार हृदय को द्रवित करने वाला है। जिसे माँ ने अपने जेवर बेचकर शामनाथ को इतनी दूर पहुँचाया, आज उसी बेटे के लिए वही माँ महत्वहीन बन चुकी है। वर्तमान समय में संबंधों को स्वार्थ के तराजू पर तौला जाता है, चाहे वह फिर माँ ही क्यों न हो ? मूलत: भीष्म साहनी की इस कहानी के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने अपने युग की परिस्थितियों को समझा है। कहानीकार का दृष्टिकोण भी मानवतावादी है। वह भारतीय समाज के मध्यवर्गीय समाज के अन्तर्विरोधों को व्यक्त करता है। लेखक भीष्म साहनी जी ने इसमें मध्यवर्गीय समाज के बदलते जीवन मूल्यों को अभिव्यक्त किया है, और साथ ही आर्थिक मोह में लिप्त होने के कारण अपने दायित्वों को भूलते जा रहे मध्यवर्गीय समाज के प्रति गहरी चिन्ता जताई है।

mnotes.in

१५.१.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

i. भीष्म साहनी एक चिन्तनपरक कहानीकार है, सिद्ध कीजिए।

ii. 'चीफ की दावत' कहानी के कथानक (कथावस्तु) को स्पष्ट कीजिए।

iii. 'चीफ की दावत' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

iv. भीष्म साहनी की चर्चित कहानी 'चीफ की दावत' के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

१५.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. भीष्म साहनी की संवेदनशीलता को समझाइए।

ii. कहानी के पात्र 'शामनाथ' पर टिप्पणी कीजिए।

iii. 'चीफ की दावत' कहानी का सारांश लिखिए।

iv. 'चीफ की दावत' कहानी में 'माँ' का चरित्र-चित्रण कीजिए।

१५.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. चीफ की दावत किसकी कहानी है?

ii. चीफ की दावत में शामनाथ की माँ कहाँ जाना चाहती है?

iii. मि. शामनाथ अपनी माँ से क्या बनाने के लिए कहते हैं?

iv. चीफ के आने पर शामनाथ माँ को कहाँ छुपाना चाहते हैं?

v. चीफ की दावत कहानी का केन्द्रीय पात्र कौन है?

*****

munotes.in

१६

लड़कियाँ – ममता कालिया

इकाई की रूपरेखा

१६.० इकाई का उद्देश्य
१६.१ प्रस्तावना
१६.२ कथानक
१६.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण
१६.४ 'लड़कियाँ' कहानी का उद्देश्य
१६.५ सारांश
१६.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न
१६.७ लघुत्तरीय प्रश्न
१६.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१६.० इकाई का उद्देश्य

- इस कहानी के उद्देश्य के माध्यम से 'लड़कियाँ' कहानी के कथानक को समझा जा सकता है।
- इस कहानी का उद्देश्य पात्रों के चरित्र का चित्रण करना है, जिससे पात्रों को समझने में सुविधा होगी।
- इस इकाई में कहानी के उद्देश्य और उनके सारांश को भी आसानी से समझा जा सकता है।

१६.१ प्रस्तावना

हिन्दी कहानी के धरातल पर ममता कालिया की उपस्थिति सातवें दशक से निरंतर बनी हुई है। लगभग आधी सदी के कालखण्ड में ममता कालिया ने दो सौ से भी अधिक कहानियों का सृजन किया है। स्वातंत्र्योत्तर भारत के शिक्षित, संघर्षरत और परिवर्तनशील समाज का सजीव चित्र ममता कालिया की कुछ प्रमुख कहानियों में अपने विविध आयामों में दिखाई देता है। हिन्दी कथा साहित्य में ममता कालिया की तरह लिखने वाले रचनाकार विरले ही हैं, जो गहरी आत्मीयता, आवेग और उन्मेष के साथ जीवन के धड़कते क्षणों तक समाज और पाठकों तक पहुँचा सकें। ममता कालिया के लेखन में अनुमति की ऊष्मा, अनुभव की ऊर्जा के साथ रची-वसी है। 'लड़कियाँ', 'उसका यौवन', 'लड़के', 'आपकी छोटी लड़की' आदि ऐसी कहानियाँ है, जो जीवन को एक नया मोड़ और नयी दिशा प्रदान करती हैं। ममता कालिया की कहानियों में जिस संवेदनशील, संतुलित, समझदार किन्तु चुलबुले, मानवीय सहानुभूति से आलोकित व्यक्तित्व की झलक मिलती है, वह उनके दृष्टिकोण की

munotes.in

मौलिकता से और भी अधिक दमक प्राप्त करती है। ममता कालिया जी की कहानियों में कलावादी, कसीदाकारी न होकर जीवनवादी यथार्थ का सौन्दर्य बोध भी है।

ममता कालिया ने अपने समय और समाज को पुनर्परिभाषित करने का सृजनात्मक जोखिम लगभग उन्होने अपनी प्रत्येक कहानियों में उठाया है। कभी वे समूचे परिवेश में नया सरोकार ढूँढती हैं, तो कभी वे वर्तमान परिवेश में नयी नारी की अस्मिता और संघर्ष को वाणी प्रदान करती हैं।

१६.२ कथानक

अपनी 'लड़कियाँ' शीर्षक कहानी में कहानीकार ममता कालिया ने यह संदेश देने का प्रयास किया है कि लड़कियों के दमन के खिलाफ हमें स्वयं आवाज उठानी होगी, तभी वे अपने अस्तित्व को बचा भी सकेंगी। इस कहानी में ममता कालिया ने लड़कियों के प्रति समाज में दकियानूसी नजरिए पर बड़ा ही तीखा कटाक्ष किया है। आशा और सुधा को रात को देर से घर पहुँचने और दुर्घटना से बाल-बाल बचने पर भी घरवालों के असफल आक्रोश और लांछन को झेलना पड़ता है। घर में ही नहीं कॉलेज में भी लोगों के कटाक्षों को सहने के बाद वे स्वयं साहस दिखाकर स्थिति को सामान्य बनाने का प्रयास करती हैं।

'लड़कियाँ' कहानी में एक बात स्पष्ट रूप से दर्शायी गई है कि सुधा और आशा दोनों सहेलियाँ प्रायः एक साथ ही रहती हैं। ये दोनों एक दिन घूमने जाती हैं, लेकिन वहीं वे अपना रास्ता भी भूल जाती हैं, और जंगल में फँस जाती हैं। यहाँ पर ये दोनों सहेलियाँ एक साधु को असामान्य अवस्था में देखकर डर के मारे भागती हुई कँटीले रास्तों से आते हुए अपने घर पहुँचती हैं, और उन कँटीले रास्तों से आते हुए उनके कपड़े फट जाते हैं। जब उनके परिवार वाले उन्हें ऐसे ही हालत में देखते हैं, तो घर के सभी लोग संशंकित होकर उन्हें देखने लगते हैं। आशा की माँ उन्हें बुरा भला भी कहती हैं, 'हाय-हाय यह तुझे क्या हो गया? सुधा ने हाँफते हुए कहा, 'कुछ नहीं चाची जी हम ज्यादा दूर निकल गई थीं, बातों-बातों में।' उन लोगों को पता चलेगा तो क्या सोचेंगे। रख दी न इज्जत धूल में मिलाकर। सुधा डर, आतंक और आँखों से काँपने लगी, चाचा जी आपकी कोई इज्जत धूल में नहीं मिली है। हमारे साथ कुछ भी नही हुआ है। हम किसी को मुँह दिखाने के काबिल नहीं रहे।'

आशा – पर अम्मा कुछ हुआ भी तो हो, माँ कहती है – अब और क्या होने को बाकी है। हमारा मुँह काला करा दिया, अपना मुँह काला करा लिया, जन्मी की औलाद।

लड़कियों के बारे में तो लोगों की धारणा पहले ही ठीक नहीं होती और फिर बाद में उसकी जरा सी गलती पर लोग उस पर इल्जाम लगाने को तैयार हो जाते हैं। हमारे समाज और परिवार में लड़कियों को एक अलग ही दृष्टि से देखा जाता है। इस बात का यथार्थ चित्रण भी इस कहानी में किया गया है। स्त्री हमेशा घर की चारदीवारी के भीतर व बाहर हमेशा हिंसा का शिकार होती हुई अपना जीवन व्यतीत करती हैं।

१६.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

कहानी लेखिका ममता कालिया की कहानी 'लड़कियाँ' दो प्रमुख पात्रों आशा और सुधा के इर्द-गिर्द घूमती है। दोनों लड़किया बड़ी ही तेज-तर्रार और पढ़ने लिखने में भी बड़ी होनहार हैं। वे दोनों जब भी साथ होती हैं तो दुनिया जहान की बातें करती रहती हैं। उनका मन न तो लेक्चर में लगता है और न ही लाइब्रेरी में। वे दोनों तब पढ़ाई शुरू करती है जब उन दोनों को पूरा घर नींद की आगोश में होता है। सोने से पूर्व सुधा, आशा के घर की खिड़की की ओर झाँक कर देखती है, यदि आशा के घर के कमरे की बत्ती बन्द होती तो वह भी बत्ती गुल करके सो जाती है। अन्यथा वह तब तक पढ़ती ही रहती जब तक आशा के कमरे की बत्ती बंद न हो जाती। सुधा की बात करे तो, एक बार आशा की बत्ती बन्द होने का इंतजार के चक्कर में सारी रात पढ़ती रही थी।

सुबह सुधा उनींदी आँखो से कॉलेज आई, और आशा पर बरस पड़ी, "तेरी वजह से मुझे सारी रात पढ़ना पड़ा, तूने बत्ती बंद क्यों नहीं की ?"

'अरे पढ़ते-पढ़ते मेरी आँख लग गई थी। मैं तो सबेरे उठी हूँ, बत्ती बन्द करने का होश किसे था ?'

इसी तरह के उनके चरित्र का चित्रण लेखिका ने अन्य जगहों पर भी बड़ी ही बारीकी और कुशलता पूर्वक किया है। वे बताती हैं कि शाम को दोनों घूमने निकलतीं। टहलती-टहलती खूब दूर निकल जातीं। उन दोनों की आपस की दोस्ती इतनी घनी कि किसी तीसरे का साथ वे बिल्कुल भी बर्दाश्त नहीं कर पाती थीं। अपने सगे भाई-बहनों का भी। वे साथ-साथ गप्पें करतीं, साहित्य पढ़तीं, कविता लिखतीं, ड्रामें में भाग लेतीं, तथा डिबेट में बोलते-बोलते वे अभिन्न होती गयी थी। कॉलेज के प्रोफेसरों की सराहना व छात्र-छात्राओं की ईर्ष्या ने उन्हें एक दल का संगठन दे डाला। जब उनके प्रोफेसर कहते – 'इन दो के आगे लड़के भी भागे।' इस बात पर आशा और सुधा गर्व से फूल जातीं। परोक्ष रुप से आत्मनिर्भरता का, लड़कियों का यह पहला पाठ है।

लेखिका ममता कालिया ने इन दोनों पात्रों के चरित्र-चित्रण के माध्यम से दोनों चरित्रों की सराहना खुले दिल से की है। उनका चित्रण करती हुई वे लिखती हैं कि- 'फिलहाल आशा-सुधा ने यह तय किया था कि एम.ए के बाद न तो उन्हें शादी करना है, न घर बैठना है। वे आई.ए.एस की तैयारी करेंगी और साथ ही साथ रिसर्च। उनकी महत्वाकांक्षाएँ सपनों का रूप लिए जा रही थीं। उनके बेहतरीन क्षण वही होते जब वे इन सपनों में मशगूल होतीं। इन सपनों का अन्वेषण स्वयं उन्होंने किया था, अपनी शिक्षा के बूते। अतः इन पर उन्हें बहुत नाज था। इन सपनों में घर-परिवार का कोई योगदान नहीं था। घर-परिवार, घर-परिवार की तरह ही नागवार था, वहाँ सुरक्षा के सिवा और कोई सुकून नहीं था।'

अचानक लेखिका की इस कहानी के प्रमुख पात्रों के बीच भूचाल सा आ जाता है, जब वे टहलते-टहलते जंगल में रास्ता भटकने के दौरान पहुँच जाती हैं। इसका भी बड़ा ही यथार्थ चित्रण लेखिका ममता कालिया ने 'लड़कियाँ' शीर्षक कहानी में किया है। 'चलते-चलते वे एक बार फिर झाड़-झंखाड़ में पहुँच गयी।' अन्ततः वह जगह आयी, जिसे झाड़ियों की वाड़ से घेरा हुआ था। झाड़ियाँ काफी घनी थीं और काँटेदार। लड़कियों ने वाड़े की दूसरी दिशा

ढूँढनी चाही पर सफल नहीं हुई। तभी भयानक मुखाकृति वाला एक साधु न जाने कहाँ से प्रगट हुआ। उसके एक हाथ में चिलम, दूसरे में तमंचा था। नितांत निर्वस्त्र तांत्रिक सा लगने वाला वह साधु चरम चिड़चिड़ाहट से उन्हें घूर रहा था, मानो दृष्टि ही दृष्टि में उन्हें भस्म कर डालेगा। कुछ कड़कती हुई आवाज में वह गरजा, कौन हो तुम यहाँ क्यों आई?'

आगे ममता कालिया उन दोनों को केन्द्रित करती हुई कहती हैं कि 'आतंक से लड़कियों की जुबान जड़ हो गई। क्रोध से कांपता हुआ साधु उनकी ओर बढ़ा। लड़कियों ने उसकी लाल-लाल आँखे देखीं, और देखी उसकी निर्वस्तता। उसके बदन पर लंगोट तक भी नहीं था। आतंक से चीख कर वे भागीं। लंबा-तगड़ा, दाढ़ी वाला साधु दाँत किटकिटाते हुए उनके पीछे भागा, ठहर जाओ दुष्टाओं, मैं अभी तुम्हे दंडित करता हूँ। गोपाल स्वामी, ये कन्याएँ अन्दर कैसे आई?' फिर पीछे भागता छोड़ वह जोरों से चिल्लाया- 'प्राणों की चिन्ता है तो भाग जाओ दुष्टाओं, खबरदार कभी इस क्षेत्र में फिर कभी प्रवेश किया।' आगे चलकर इन दोनों लड़कियों, सुधा और आशा को अपने-अपने घर में भी माँ-बाप द्वारा काफी कुछ सुनना पड़ता है। उन दोनों की स्थिति कुछ ऐसी थी कि "गिरती-पड़ती आशा-सुधा भागीं, भागती गई। उन्हें पूरा होश भी नहीं उन्होंने कैसे बंद फाटक, फलांदा, काँटो वाली झाड़ियाँ पार कीं, हड्डियों की ढेरियों से टकराती, लड़खड़ाती कैसे मुख्य सड़क तक पहुँची। दोनों को एक दूसरे के कलेजे की धड़धड़ाहट तक साफ सुनाई दे रही थी। पसीने से सरावोर चेहरा, बाहें खरोंचो से भरी थीं। आशा का दुपट्टा काँटों में उलझकर तार-तार हो गया था। सुधा के गले में दुपट्टा ही न था, बदहवासी में कहीं खिसक गया था। कूदने-फाँदने में सलवारों की सीवन भी जगह-बे जगह से उधड़ गई। झाड़-झंखाड़ की ही तरह ही बिखरे बाल, कुचले हाल, लगभग भागते-भागते उन्होंने घर की राह पकड़ी। कटरा बाजार इस वक्त भी रौशन था। फटेहाल बिखरे बाल और पसीने से नहाए चेहरे लिए जब आशा और सुधा दोनों आशा के ही घर में दाखिल हुई तो, उन्हें देखकर सबसे पहले आशा की माँ ने ही चीख मारी 'हाय-हाय, यह तुझे क्या हो गया? माँ की चीख के साथ-साथ सारा परिवार इकट्ठा हो गया। ऊपरी मंजिल के किराएदार भी छत्ते से झाँकने के बाद इधर-उधर दुबक कर दिलचस्पी लेने लगे।'

सुधा ने हाँफते हुए कहा, नहीं चाची जी हम ज्यादा दूर निकल गई थीं, बातों-बातों में अपने घर-परिवार की गंध पाकर घबराई हुई आशा की रूलाई फूट पड़ी।

यह क्या हालत बनाई है? दुपट्टे की दशा देखो, इतनी बड़ी हो गई, कपड़े सँभालने तक का शऊर नहीं। 'अम्मा उस आदमी को देखते ही हम इस कदर ड़र कर भागीं कि अपनी सुध-बुध ही भूल गई.....'

कौन आदमी? इस बार आशा के पिता गरजे, बता कौन आदमी? बता कहाँ से आ रही है? फिर स्वयं ही लज्जित होकर पिता परे हट गए। लेकिन जल्दी ही वे क्रोध में वापस आए और प्रचंड़ स्वर में चीखे, मानो दूसरे कमरे में अभी-अभी उन्होंने अपने गले में बैटरी का नया सेल डाला हो। बता कहा गई थी? तुझे कितनी बार मना किया है, जान-अनजान जगहों में न जाया कर। उन लोगों को पता चलेगा तो क्या सोचेंगे। रख दी ना इज्जत धूल में मिलाकर। इस तरह का सीधा-सपाट चित्रण ममता कालिया ने इस कहानी के पात्रों के माध्यम से किया है। आगे भी वे कुछ इस तरह से वर्णन करती हैं कि –

'सुधा डर, आतंक और आक्रोश से काँपने लगी। चाचा जी, आपकी इज्जत कोई धूल में नहीं मिली है, हमारे साथ कुछ नहीं हुआ।'

'तुम चुप रहो, तुम्ही ने इसे चौपट किया है। आशा की माँ गरजी, हम किसी को मुँह दिखाने के काबिल नहीं रहे।'

पर अम्मा कुछ हुआ भी तो हो, तुम क्यों हाय तौबा मचा रही हो, आशा ने रुआँसी होकर कहा।

इस कहानी के पात्रों के संवाद के माध्यम से ममता कालिया ने यह भी दिखाया है कि किस तरह से आशा और सुधा के घर वाले दोनों को मिलने-जुलने पर भी प्रतिबंध लगा देते हैं। इस की भी एक बानगी लेखिका ने यहाँ प्रस्तुत की है - 'रात भर आशा और सुधा अपमान से छटपटाती रहीं। दोनों को सख्त ताकीद कर दी गई कि एक-दूसरे से बात की तो अच्छा न होगा।' इस प्रकार ममता कालिया जी ने 'लड़कियाँ' कहानी की प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण बड़ी ही यथार्थता के साथ मनोयोग पूर्वक किया है।

१६.४ 'लड़कियाँ' कहानी का उद्देश्य

लेखिका ममता कालिया जी की इस कहानी का प्रमुख उद्देश्य समाज में लड़कियों को लेकर हमारे मन-मस्तिष्क में जिस तरह के भाव उजागर होते हैं, उसी को दिखाना रहा है। लड़कियों को आज भी समाज में वह स्थान प्राप्त नहीं है, जो हमारे परिवार और समाज में लड़कों को दिया जाता है। लेखिका ने इन लड़कियों को चित्रित करने के उद्देश्य से यह बताया है कि वे कुछ भी कर सकती हैं, बशर्ते उन्हें अपने परिवार में माँ-बाप, भाई सभी का खुला समर्थन मिलना चाहिए। इसी उद्देश्य को लेकर लेखिका ने इस कहानी का यथार्थपरक सृजन किया है। जीवन की तमाम विसंगतियों और उतार-चढ़ाव को ही इसमें चित्रित किया गया हैं।

१६.५ सारांश

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि लड़कियों के बारे में तो लोगों की धारणा पहले ही ठीक नहीं होती, और फिर बाद में उसकी छोटी सी गलती पर भी लोग उस पर आरोप लगाने के लिए तैयार बैठे हैं। समाज में परिवार में लड़की को एक अलग ही दृष्टि से देखा जाता है, इस बात का वर्णन भी इसी कहानी में किया गया है। औरत हमेशा से ही घर की चारदीवारी के भीतर व बाहर हिंसा का शिकार होती हुई अपना जीवन व्यतीत करती है। इसके विरूद्ध यदि वह अपनी आवाज उठाने की कोशिश करती है तो, समाज और कुछ परिवार के सदस्यों द्वारा भी उसे कुलटा, चरित्रहीन आदि संज्ञाएँ देकर घर-परिवार और समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है। एक औरत शारीरिक हिंसा के साथ-साथ मानसिक हिंसा और यौन शोषण का भी शिकार होती रही है। समाज द्वारा उन्हें कई तरह की प्रताड़नाएँ एवं उत्पीड़न दिया जाता है। समाज ही है जो औरतों की स्थितियों को, उनके हक और अधिकारों को स्थान भी दिला सकता है।

१६.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

i 'लड़कियाँ' कहानी की प्रमुख कथावस्तु को अभिव्यक्त कीजिए।

ii. 'लड़कियाँ' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

iii. 'लड़कियाँ' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

iv. 'लड़कियाँ' शीर्षक कहानी की प्रस्तावना देते हुए कहानी के कथानक को स्पष्ट कीजिए।

१६.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. 'लड़कियाँ' कहानी के मूल उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

ii. 'लड़कियाँ' कहानी की नायिका सुधा का चरित्र निरूपित कीजिए।

iii. 'लड़कियाँ' कहानी का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

१६.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. लडकियाँ किसकी कहानी है?

ii. सुधा किस कहानी की नायिका है?

iii. आशा किस कहानी की प्रमुख पात्र है?

iv. शीट नम्बर छः किसकी रचना है?

v. दौड़ की लेखिका कौन हैं?

*****

munotes.in

१६.१

काला बाप, गोरा बाप – महीप सिंह

इकाई की रूपरेखा

१६.१.० इकाई का उद्देश्य
१६.१.१ प्रस्तावना
१६.१.२ कथानक
१६.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण
१६.१.४ 'काला बाप, गोरा बाप' कहानी का उद्देश्य
१६.१.५ सारांश
१६.१.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न
१६.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न
१६.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१६.१.० इकाई का उद्देश्य

- इस कहानी के माध्यम से 'काला बाप, गोरा बाप' कहानी के कथानक को समझा जा सकता है।
- इस कहानी का उद्देश्य पात्रों के चरित्र का चित्रण करना है, जिससे पात्रों को समझने में सुविधा होगी।
- इस इकाई के माध्यम से कहानी के उद्देश्य और उनके सारांश को भी आसानी से समझा जा सकता है।

१६.१.१ प्रस्तावना

सुप्रसिद्ध साहित्यकार, कथाकार महीप सिंह की लेखनी से निःसृत कहानियों ने मानवीय संवेदना, सामाजिक सरोकार, जातीय संघर्ष, पारस्परिक संबंधों का ताना-बाना प्रस्तुत किया है। पठनीयता से भरपूर महीप सिंह की कहानियों में वर्ग-संघर्ष और सामाजिक कुरीतियों का खुलकर और जमकर विरोध किया है। महीप सिंह का जन्म उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के एक गाँव में हुआ था। उनके पिता कुछ वर्ष पहले ही सराय आलमगीर जिला गुजरात पश्चिमी पाकिस्तान से आकर उन्नाव में बस गए थे। खालसा कॉलेज मुंबई, तथा दिल्ली में अध्यापन सहित कंसाई विश्वविद्यालय हीराकेत जापान में विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में महीप सिंह जी अपनी सेवाएँ दे चुके हैं। शिक्षा मंत्रालय, हिन्दी संस्थान, हिन्दी व पंजाबी अकादमी भाषा विभाग आदि कई संस्थाओं से सम्मानित किया गया है।

munotes.in

१६.१.२ कथानक

'काला बाप गोरा बाप' शीर्षक कहानी एक ऐसी युवती की कहानी है, जिसे उसका पति उसकी तीन बेटियों के साथ जिन्दगी के दोराहे पर उन्हें बेसहारा छोड़ जाता है। जमीला नाम की युवती इस तरह की असहाय स्थितियों में भी तनिक विचलित नहीं होती है, बल्कि वह एक सभ्य सुन्दर युवक का हाथ थाम लेती है, और वह न केवल अपना जीवन सँवार लेती है, बल्कि वह अपनी दोनों खूबसूरत बेटियों को भी सही मुकाम तक पहुँचाने में कामयाबी हासिल कर लेती है। इतना ही नहीं किसी दिन जब उसके पहले पति से उसकी मुलाकात होती है, तो वह जमीला को देखकर अचंभित रह जाता है। उसे लगता है कि अब उस परिवार में उसका कोई भी वजूद नहीं रह गया है। इस कहानी के कथानक के माध्यम से लेखक महीप सिंह जी ने कहानी की नायिका जमीला का बड़ा ही मार्मिक चित्रण भी प्रस्तुत किया है। इस कहानी का आरम्भ एक स्त्री पात्र जमीला के खत पढ़ने से शुरू होता है। इसमें कहानी के पात्रों का हृदय परिवर्तन होने के साथ-साथ उनके मुस्लिम नामों का परिवर्तन करके हिन्दू नामकरण 'शीरी' से बदल कर कामिनी बोस किया जाता है। इसमें यह भी बताया गया है कि अब तो नाम के साथ-साथ जाति भी लगाना अनिवार्य हो गया है। अत्याधिक लोकप्रियता हासिल करने के लिए आज हमारे समाज में कोई भी व्यक्ति किसी भी स्थिति में पहुँचकर कुछ भी करने के लिए तैयार हो जाता है।

१६.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

'काला बाप गोरा बाप' शीर्षक चर्चित कहानी की रचना लोकप्रिय कहानीकार महीप सिंह द्वारा की गई है, जिसमें रचनाकार ने अपनी उत्कृष्ट लेखनी का अद्भुत परिचय अपने पात्रों के चरित्र-चित्रण के माध्यम से किया है। इस कहानी के प्रमुख पात्रों में कहानी की नायिका जमीला और उसकी दोनों बेटियाँ शीरी और शाहनाज ही कहानी के केन्द्र में हैं। इनके अलावा दो पुरूष पात्रों का बड़ा ही यथार्थ चित्रण इस कहानी में व्यक्त किया गया है। दो पुरूष पात्रों में एक सिरताज और दूसरा अनवर है, जिसने सिरताज द्वारा छोड़ दी गई जमीला और उनकी बेटियों की परवरिश करता है। कहानी के पात्रों ने कहानी में जान भरने की पूरी कोशिश की है। जमीला पत्र व्यवहार के माध्यम से अपने पहले सौहर सिरताज के बारे में खुलासा करती हुई कहती है कि – "समझ में नहीं आता तुम्हें क्या कर खत लिखूँ, तुमने मेरी जमीला लिखा है। एक जमाना था जब तुम मेरी जमीला लिखते थे, और मैं जवाब में मेरे 'सिरताज' लिखा करती थी। पर आज मेरी 'जमीला' लिखने का हक न तुम्हारे पास है, न मेरे 'सिरताज' लिखने का हक मेरे पास। खैर! बिना किसी संबोधन के यह खत तुम्हें लिख रही हूँ।"

इस कहानी में जमीला का चरित्र खुद्दारियों से भरा हुआ और जीवंत हो उठा है। अपने पहले पति से संबंध खत्म हो जाने के पश्चात जमीला अपनी दोनों बेटियों के साथ कितना संघर्ष करती है, उसका यथार्थ रूप भी इस कहानी में चित्रित किया गया है। अपनी जीवन स्थितियों का चित्रण करती हुई वह अपने पहले शौहर से कितना कुछ बता डालती है, उसकी संवेदना को इस कहानी के माध्यम से बखूबी जाना-समझा जा सकता है। वह अपनी बातों को आगे बताती हुई कहती है कि – "और रही मेरी बात। मुझे देखकर तो तुम पहचान भी नहीं पाओगे। तुम्हारी वह जमीला जो पराए मर्द की छाया भी नहीं देखती थी, बुर्के के

बगैर घर से बाहर पाँव भी नहीं रखती थी। और उसके मुँह में जुबान है, यह तो तुम भी नहीं जानते थे – आज ऐसा बनाव सिंगार करती है कि उसकी ढलती हुई उमर भी धोका खा जाती है। वह शीरी के साथ स्टूडियो जाती है। परदा उसके लिए गुजरे जमाने की बात बन चुकी है। तुम शायद जानते नहीं, फिल्म लाइन में बड़े-बड़े घाघ हैं, पर तुम्हारी बेजुबान 'जमीला' अब बड़े-बड़े घाघ प्रोड्यूसरो के भी कान काट लेती है।"

आगे अनवर के वारे में भी जमीला अपने पहले पति युनूस से बताती हुई कहती है कि "और आखिर में तुम्हें अनवर की भी बात बताती हूँ। मासूम जमीला को जब तुम दुनिया की ठोकरे खाने के लिए छोड़ गए, तब यही अनवर उसका सहारा बना। वह एक गोरा खूबसूरत नौजवान था, पर जिन्दगी से ना-उम्मीद। कई साल से वह बम्बई की फिल्म लाइन में अपनी किस्मत आजमा रहा था। लेकिन कामयाबी उससे कोसो दूर रही, उन दिनों वह किसी काम से दिल्ली आया, मेरी उससे मुलाकात हो गई। मेरा हाल जानकर उसने मुझसे शादी की पेशकश की। उस वक्त मुझे ताज्जुब हुआ था कि ऐसा खूबसूरत नौजवान भला मुझ जैसी बेसहारा दो बेटियों वाली औरत से निकाह करने को क्यों तैयार है? मगर आहिस्ता-आहिस्ता मैं सब समझ गई। हिन्दुस्तान में लोग लड़कियों को मुसीबत समझते हैं। खासतौर से वे-बाप की लड़कियाँ तो फूटी आँख भी नहीं सुहाती।"

महीप सिंह ने इस कहानी को पत्रात्मक शैली में लिखा है, और इसी माध्यम से उन्होंने अपने पात्रों का यथार्थ चित्रण भी किया है। कहानीकार महीप सिंह ने जमीला के पूर्व पति युनूस का भी चरित्र-चित्रण पूरे मनोयोग से किया है। वे लिखते हैं – "नहा धोकर युनूस बैठक में आ बैठा। उसकी निगाह ने एक-एक कर के कमरे की हर चीज को नापा सोफा-सेट, रेशमी परदे, रेडियो, फूलदान, और तरह-तरह की चीजें, जिन्हें उसने बड़े लोगों की दुनिया का अंग मानकर कभी अपनी कल्पना में घुसने नहीं दिया था। फिर उठकर वह दीवारों पर लगे चित्रों को देखने लगा। एक बड़ी खूबसूरत सी लगने वाली लड़की की कई तस्वीरें वहाँ लगी हुई थीं। एक तस्वीर में उसके बाल काली घटा के रूप में बिखरे थे। उस लड़की का चेहरा सचमुच चाँद सा दिखाई दे रहा था।"

"पहचानते हो ये किस की तस्वीरें हैं? जमीला ने पीछे से मेज पर चाय रखते हुए पूछा। युनूस ने उसकी ओर देखा और चुप रहा। शायद उसने चुप्पी से यह जताया कि ये तस्वीरें किसकी हैं, यह जानकर उसे अधिक आश्चर्य नहीं होगा।"

इस तरह से कहानीकार महीप सिंह ने अपनी चर्चित कहानी 'काला बाप गोरा बाप' के माध्यम से पात्रों के चरित्र का यथार्थ परक चित्रण करते हुए अपनी कहानी कला का बड़ा ही शानदार परिचय दिया है। इस दृष्टि से उनकी यह कहानी भी एक उत्कृष्ट कहानी मानी जा सकती है।

१६.१.४ 'काला बाप, गोरा बाप' कहानी का उद्देश्य

कहानीकार महीप सिंह की इस कहानी का प्रमुख उद्देश्य उसके कथानक के माध्यम से कहानी के सारांश को प्रस्तुत करते हुए पात्रों का चरित्र-चित्रण करना है। इस कहानी का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य हमारे समाज में विशेषकर मुस्लिम समाज की स्त्रियों को निकाह करके, दूसरी औरत से संबंध बनाकर पहली को तलाक देने की जो परम्परा है, उसी का पर्दाफाश

यहाँ महीप सिंह ने 'काला बाप गोरा बाप' कहानी में किया है। इसका उद्देश्य यह भी है कि हमारे समाज में जो औरतों के साथ जाति-पाति से संबंधित भेदभाव किया जाता है, वह बिल्कुल नहीं होना चाहिए।

१६.१.५ सारांश

सारांशत: यह कहा जा सकता है कि 'काला बाप गोरा बाप' कहानी में लेखक महीप सिंह ने समाज में फैलने वाली बुराइयों, रीतियों-कुरीतियों पर प्रकाश डाला है। उन्होंने इस कहानी की मूल संवेदना की नब्ज को टटोलते हुए उसके पात्रों का चुनाव बड़ी ही समझदारी और कुशलतापूर्वक किया है। इस कहानी के सभी पात्र अपनी-अपनी भूमिका को निभाने में और उसका निर्वाह करने में बड़े ही सिद्धहस्त रहे हैं।

१६.१.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

i. 'काला बाप गोरा बाप' कहानी के कथानक को स्पष्ट कीजिए।

ii. 'काला बाप गोरा बाप' कहानी की समीक्षा कीजिए।

iii. 'काला बाप गोरा बाप' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

१६.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. 'काला बाप गोरा बाप' कहानी की पात्र 'जमीला' का चरित्र-चित्रण कीजिए।

ii. 'काला बाप गोरा बाप' कहानी का प्रमुख उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

iii. 'काला बाप गोरा बाप' कहानी का सारांश लिखिए।

१६.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'काला बाप गोरा बाप' कहानी के रचनाकार कौन हैं?

ii. जमीला के पहले पति का क्या नाम था?

iii. जमीला के दूसरा पति कौन था?

iv. जमीला किस कहानी की प्रमुख नायिका है?

v. जमीला की बेटियों का क्या नाम है?

*****

mynotes.in

१७

अपराध – उदय प्रकाश

इकाई का रूपरेखा

१७.० इकाई का उद्देश्य
१७.१ प्रस्तावना
१७.२ कथानक
१७.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण
१७.४ 'अपराध' कहानी का उद्देश्य
१७.५ सारांश
१७.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न
१७.७ लघुत्तरीय प्रश्न
१७.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१७.० इकाई का उद्देश्य

- इस इकाई का उद्देश्य उदय प्रकाश की कहानी 'अपराध' की प्रस्तावना को समझने में सहायक होगा।
- इस कहानी में 'अपराध' कहानी के कथानक को समझा जा सकता है।
- इस इकाई का उद्देश्य 'अपराध' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण को भी समझा जा सकता है।

१७.१ प्रस्तावना

साहित्य के इतिहास में कहानी का स्थान महत्वपूर्ण माना जाता है । आलोचना और विचारधारा की दुनिया के लोगों ने इसे जीवन को समझने की कला और विधा के रूप में लिया है । इसलिए जब भी साहित्य के इतिहास पर विचार होता है, उसमें कहानी और उसके इतिहास एवं उसमें अभिव्यक्त मानव जीवन के यथार्थ को बुनियादी तौर पर अलग से समझने की कोशिश होती रही हैं, चाहे वह प्रेमचंद युगीन कहानी का मसला हो, अथवा नयी कहानी या समकालीन कहानी का साहित्य भी अन्य विधाओं के समानांतर कहानी में मनुष्य के मन एवं समाज में उसकी उपस्थिति का कलात्मक आख्यान देखने को मिलता है। यह आख्यान इतना आकर्षक होता है कि बच्चे से लेकर बूढ़े तक उसमें दिलचस्पी लेते दिखाई देते हैं । इसीलिए साहित्यिक विधाओं के किसी विशेष कालखण्ड का वस्तुपरक अध्ययन हमें यह अवसर प्रदान करता है कि रचनाओं अथवा कहानी में व्यक्त जीवन और समाज के साथ उसके यथार्थ संबंध को हम समकालीन सन्दर्भों में किस रूप में देखे और विचार करें । उनमें मनुष्य मात्र के लिए निर्मित स्थान की खोज की जानी चाहिए । कथा साहित्य के इतिहास में समकालीन कहानी का अध्ययन भी हमें इसी प्रकार का अवसर प्रदान करता है।

munotes.in

वास्तव में किसी रचना या विचारधारा की दुनिया में कथा-कहानी जो शास्त्र है, उसका गहरा संबंध कहानी कहने, कथा के चुनने और कहने के समय से है। समकालीन हिन्दी कहानी पर विचार करते हुए यह बात और भी साफ हो जाती है कि इस दौर के कहानीकारों ने समकालीन समय, समाज, परिवर्तन एवं विकास की प्रक्रियाओं को ध्यान में रखते हुए कहानी की दुनिया रची है। इसीलिए इस दौर की कहानियों की जो दुनिया है, वहाँ कहानी के रचने अथवा सर्जनात्मकता की ये प्रक्रियाएँ इतनी जटिल और विविधतापूर्ण हैं कि उन पर विचार एवं उनका आकलन करना अत्यंत कठिन कार्य है। समकालीन हिन्दी कहानी सिर्फ वस्तु और कला की दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं हैं, बल्कि यहाँ इतिहास, सामाजिक विमर्श, वैचारिकताओं की टकराहट, राजनीतिक संघर्ष, अनुभव आदि की ऐसी अनेक निर्मितियाँ दिखलाई पड़ती हैं , जिसे मात्र पारम्परिक ढंग से ही नहीं समझा जा सकता है।

उसे समझने के लिए, इतिहास, समाजशास्त्र, राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, मनोविज्ञान आदि की समझ के साथ-साथ मानव स्वभाव के सर्जनात्मक पक्ष की समझ भी होनी जरूरी है। कारण यह है कि हिन्दी कहानी की दुनिया में इतनी तरह की विविधताएँ हैं कि पाठकों का जब उनसे सामना होता है तब वे यह तय नहीं कर पाते हैं कि वे कोई कहानी पढ़ रहे हैं अथवा सामाजिक संघर्षों में स्त्री और दलित जीवन का इतिहास देख रहे हैं।

१७.२ कथानक

'अपराध' शीर्षक कहानी लेखक/कथाकार उदय प्रकाश की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से एक महत्वपूर्ण कहानी है। जिसके अन्तर्गत उदय प्रकाश जी ने बचपन की एक अविस्मरणीय घटना को ही आधार बनाया है। इस कहानी का पात्र भी स्वयं लेखक उदय प्रकाश जी ही हैं। उदय प्रकाश जी खेल-खेल में अपनी गलती से सिर पर लगी चोट का दोषारोपण अपने बड़े भाई पर लगाकर उसे अपने पिता द्वारा बड़ी ही बेरहमी से पिटवाते हैं। उस समय लेखक को इसके लिए तनिक भी मलाल नहीं होता परन्तु बाद में इसके लिए उसे बड़ी आत्मग्लानि भी होती है। इस घटना के लिए वह आजन्म इस अपराध बोध से ग्रस्त रहते हैं। उदय प्रकाश की 'अपराध' कहानी के कथानक की दृष्टि से अगर देखा जाए तो इस कहानी के दो मुख्य पात्रों में से एक बड़ा भाई है, जिसके बचपन में ही एक पैर में पोलियो हो जाने से बड़ा भाई अपाहिज था। अपाहिज होने के बावजूद खेल-कूद में बड़ा भाई अत्याधिक तत्परता दिखाता था। वह एक अच्छा तैराक भी था, हाथ के पंजो की लड़ाई में भी वह बड़ा ही निपूण था। खडत्वल जैसे खेलों में वह प्राय: डूब सा जाता था। खेल में विजयी होते समय अति प्रसन्न होना बड़े भाई के स्वभाव में शामिल था।

छोटे भाई की ओर बड़े भाई के दिल में बड़ी हमदर्दी और वत्सलता भी भरी रहती थी। बड़े भाई के चरित्र पर भाईचारे का गुण प्रकट करते हुए उदय प्रकाश जी लिखते हैं, 'छोटे भाई के प्रति उसका रूख एक संरक्षक की जिम्मेदारी जैसा था।' बड़े भाई के चरित्र पर दया, उदारता, सहायक स्वभाव वाले गुणों को हम देख सकते हैं। वह बड़ा क्षमाशील भी था, भाई चारे में उसकी ईमानदारी काबिले तारिफ हैं। शस्त्रुता का मनोभाव उसके चरित्र में दूर-दूर तक भी नजर नहीं आता है। वे देवता की तरह सुन्दर थे। उनकी सुन्दरता सिर्फ शरीर में ही नहीं मन में भी विद्यमान थी। त्याग, क्षमा, संयम, मौन-सहन आदि विशिष्ट गुणों से बड़े भाई

का चरित्र अलंकृत है। दोस्ताना सहानुभूति आदि चारित्रिक विशिष्टताओं से भी बड़ा भाई हमें अधिक आकृष्ट करता है।

कहानी के कथानक की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि बड़े भाई चरित्र दूसरों में ईर्ष्या और आत्महीनता जगाने तक उदात्त और उत्कृष्ट था। छोटे भाई ने बड़े भाई के सामने अपनी अवस्था के बारे में खुद कहा है – 'में ईर्ष्या, आत्महीनता की आँच में झुलस रहा था।' इस दृष्टि से उदय प्रकाश की यह कहानी अपनी बुनावट में हिन्दी कहानियों में अब वह क्लॅसिक का दर्जा पा चुकी है। उनकी कहानी के माध्यम से समय और समाज के साथ-साथ पारिवारिक रिश्तों को भी बखूबी देखा जा सकता है। इन संबंधों की बड़ी ही गहन विवेचना उदय प्रकाश के 'अपराध' कहानी मे भी देखा जा सकता है।

१७.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

कहानीकार/कथाकार उदय प्रकाश के लेखन में एक बच्चे की उपस्थिति इतनी गहरी है कि उनकी कहानी उस बच्चे की मानसिकता से ही रची गई है। जो बेहद संवेदनशील हैं। दो भाइयों को लेकर हिन्दी में बहुत सी कहानियाँ लिखी गई है, पर प्रेमचन्द की बड़े भाई साहब तो अद्भुत है ही लेकिन उदय प्रकाश जी की चर्चित कहानी अपराध मेरे ख्याल से दो भाइयों के आपसी प्रेम की सबसे मार्मिक कहानियों में से एक है। ऐसी कोई दूसरी कहानी मुझे समझ में नहीं आई। पोलियो ग्रस्त अपाहिज और ६ साल बड़े भाई के साथ भ्रातृत्व भाव की यह संवेदनशील कहानी छोटे भाई के माध्यम से बहुत बड़ा बयान प्रस्तुत करती है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से देखा जाए तो इसमें बड़े भाई का चरित्र ऐसा है कि वह हमेशा अपने छोटे भाई के साथ रहता है, और उससे बड़ा स्नेह भी रखता है। लेकिन एक दिन खेल-खेल में बड़े ने छोटे की थोड़ी सी उपेक्षा कर दी, जिसका परिणाम यह हुआ कि छोटे ने गलती से खुद के सिर में चोट लगा ली और घर पर माँ को बताया कि बड़े भाईने मारा है। इस पर पिता बड़े भाई की बड़ी बुरी तरह से पिटाई कर देते हैं, और बड़ा भाई पिट ते हुए भी अपेक्षा करता है कि छोटा भाई सच बोल दे।

लेकिन ऐसा कभी नहीं होता है। बरसों पुरानी बचपन की इस घटना के अपराध बोध से ग्रस्त छोटा भाई सजा भुगतना चाहता है, माफी भी माँगना चाहता है, लेकिन बड़े भाई को तो यह याद ही नहीं है कि कभी ऐसा कुछ हुआ भी था। इस कहानी की अंतिम पंक्तियाँ बड़ी ही मार्मिक जान पड़ती हैं – "तो इस अपराध के लिए मुझै क्षमा कौन कर सकता है? क्या यह ऐसा अपराध नहीं है जिसके बारे में लिया गया जो निर्णय था, वह गलत और अन्यायपूर्ण था, लेकिन जिसे अब बदला नहीं जा सकता? और क्या यह ऐसा अपराध नहीं है, जिसे कभी भी क्षमा नहीं किया जा सकता? क्योंकी इससे मुक्ति अब असंभव हो चुकी है। उदय प्रकाश की संवेदनाए इस कहानी में जितनी पारिवारिक और निजी आत्मीय ढंग से व्यक्त हुई हैं, वह उनके समूचे रचनाकार व्यक्तित्व का कदाचित मूलसूत्र है। विस्थापन एक ऐसी बिकट सच्चाई है कि वह उदय प्रकाश की कहानी में निरंतर विद्यमान रहती है। हम संबंधों में भी विस्थापित होते हैं, क्योंकि बहुत से कारणों से हमे नए संबंध बनाने होते हैं और समय के साथ पुराने संबंध बदलते जाते हैं। लेकिन पारिवारिक संबंध हमे अन्तिम समय तक याद रहते हैं। और उनका विस्थापन हमे लगातार कचोटता रहता है। इसीलिए 'अपराध' कहानी की अंतिम पंक्तियाँ हमें यह बताती हैं कि संबंधों से मुक्ति असंभव से चुकी है।

१७.४ 'अपराध' कहानी का उद्देश्य

उद्देश्य की दृष्टि से उदय प्रकाश की कहानियों के बारे में यह कहा जा सकता है कि सन १९८० के बाद के उपनिवेशवादी दौर की पृष्ठभूमि पर रहकर देश की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति को कई मापनों से व्यक्त करने की कोशिश हैं । उदय प्रकाश की कहानियों का प्रमुख उद्देश्य संबंधों के मर्म और उसके महत्व को उजागर करना भी रहा है । उनकी कहानियों में माँ-पिता, भाई-बहन, दादा-दादी आदि अन्य रिश्तों का बड़ा ही गहरा अनुराग मिलता है । इस उद्देश्य से उदय प्रकाश की अपराध कहानी भी संबंधो की गहरी और संवेदनशील मार्मिकता को उजागर करने वाली एक संवेदनशील कहानी है । उदय प्रकाश की संवेदनाएँ 'अपराध' कहानी की दृष्टि से जितना पारिवारिक और निजी आत्मीय ढंग से अभिव्यक्त हुई है, वह उनके लेखन कौशल की पारदर्शिता को भी स्पष्ट करता है।

१७.५ सारांश

सारांशत: यह कहा जा सकता है कि 'अपराध' उदय प्रकाश की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से एक है, जिसके अन्तर्गत उदय प्रकाश के बचपन की एक अविस्मरणीय घटना को ही आधार बनाया गया है । पोलियो ग्रस्त अपाहिज और छह साल बड़े भाई और लेखक के भाई के अनोखे रिश्ते को इस उत्कृष्ट कहानी के माध्यम से देखा जा सकता है। बड़ा भाई हमेशा ही छोटे के साथ रहकर अपना स्नेह निरन्तर उस पर बरसाता रहता है । पूरे गाँव के सभी लडके लेखक उदय प्रकाश से छह साल बड़े थे । इसलिए सभी लड़के खेलते वक्त लेखक हमेशा ही अकेला पड़ता था। लेखक के बड़े भाई बचपन से ही अपाहिज थे, उसके एक पैर में पोलियो हो गया था, फिर भी वे देखने में बड़े सुन्दर थे । वे आस-पास के कई गाँवों में सबसे अच्छे, तैराक थे । और उनको हाथ के पंजो की लड़ाई में कोई भी नहीं हरा सकता था। इसके विपरीत लेखक दुबला-पतला कमजोर था । कमजोर होने के साथ-साथ वह चिड़चिड़ा भी था । भाई के बहुत सारे दोस्त होने के कारण लेखक को भाई मे ईर्ष्या होती थी।

बड़े भाई के लिए लेखक एक उत्तरदायित्व की तरह था, क्योंकि वह सबसे छोटा था, और वे लेखक से अगाध स्नेह भी करते थे । खेलते वक्त लेखक को कोई भी अपनी पाली में हार की डर से नही लेते थे । लेकिन भाई लेखक को अपनी पाली में शामिल करते थे और लेखक की वजह से ही वे अक्सर हारते भी थे, फिर भी भाई उनसे कभी कुछ नहीं कहते थे । जहाँ तक लेखक उदय प्रकाश को याद है, बड़े भाई ने कभी भी लेखक को नहीं मारा। किन्तु लेखक जिस घटना के बारे में बता रहा है, जिसका अपराध बोध आज भी लेखक उदय प्रकाश के मन में अंगारे की तरह सुलगने लगती है । घटना इस प्रकार है – उस दिन भी लड़के खड़त्वल खेल रहे थे । इस खेल में कोई पाली नहीं होती थी, अकेले ही खेलना पड़ता है । भाई भी उसी खेल में डूब गए थे । वे अपने खेल में इतना अधिक डूब गए थे कि वे लेखक को भूल चुके थे । भाई की तरफ से अपनी उपेक्षा पाकर लेखक को बहुत गुस्सा आ गया । गुस्से में आकर लेखक एक खडत्वल को पत्थर पर पटक रहा था, तभी अचानक वह खडत्वल नीचे लेखक के माथे पर आकर लगा । लेखक को गहरी चोट लगी, और खून बहने लगा । उन्होंने घर जाकर माँ को बताया कि उन्हें भाई ने खडत्वल से मारा, इस पर पिता जी ने बड़े भाई को बहुत मारा । बड़े भाई करूणा और कातरता से लेखक को देख रहे थे । जैसे

वक लेखक अर्थात अपने छोटे भाई से याचना कर रहे थे कि वे सच बोल दें। लेकिन सच जानकर पिता जी उल्टा लेखक को मारेंगे यही सोच कर वे चुप रह गए। यह घटना तो वर्षों पुरानी है, लेकिन आज भी लेखक इस घटना को भूल नहीं सके हैं। वे अपने उस 'अपराध' के लिए आज भी क्षमा माँगना तो चाहते हैं, लेकिन अब तो माँ-पिता जी दोनों नहीं रहे। भाई से जब इस घटना के बारे में बात किया तो उन्हें वह इतनी पुरानी घटना तो याद ही नहीं है। लेखक पूछ रहा है कि अब इस अपराध के लिए आखिर उन्हें क्षमा कौन करेगा? लेखक को अब इस अपराध बोध से मुक्ति तो बिल्कुल भी असंभव हो चुकी है।

१७.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

i. 'अपराध' कहानी के कथानक को स्पष्ट कीजिए।

ii. 'अपराध' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

iii. लेखक को ऐसा क्यों लगता है कि उनके अपराध बोध से मुक्ति अब असंभव है, सिद्ध कीजिए।

iv. 'अपराध' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण कीजिए।

१७.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. 'अपराध' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

ii. 'अपराध' कहानी का सारांश लिखिए।

iii. बड़े भाई का चरित्र निरूपित कीजिए।

१७.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'अपराध' कहानी में बड़े भाई को क्या होने से अपाहिज हुए थे?

ii. 'अपराध' कहानी के लेखक का नाम लिखिए?

iii. अपराध' कहानी में कहानीकार ने कब की घटना को आधार बनाकर प्रस्तुत किया है?

iv. 'अपराध' कहानी में बड़े भाई लेखक से कितने साल बड़े थे?

*****

munotes.in

१७.१

लाक्षाग्रह – चित्रा मुद्गल

इकाई की रुपरेखा

१७.१.० इकाई का उद्देश्य

१७.१.१ प्रस्तावना

१७.१.२ कथानक

१७.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

१७.१.४ 'लाक्षागृह' कहानी का उद्देश्य

१७.१.५ सारांश

१७.१.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

१७.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न

१७.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

१७.१.० इकाई का उद्देश्य

- इस इकाई का उद्देश्य चित्रा मुद्गल की कहानी 'लाक्षागृह' की प्रस्तावना को समझने में सहायक होगा।
- इस कहानी के उद्देश्य के माध्यम से 'लाक्षागृह' कहानी के कथानक को भी समझा जा सकता है।
- इस इकाई का उद्देश्य 'लाक्षागृह' कहानी के पात्रों के चरित्र-चित्रण को समझने में उपयोगी है।
- इस इकाई का उद्देश्य 'लाक्षागृह' कहानी के उद्देश्य को भी समझा जा सकता है।

१७.१.१ प्रस्तावना

चित्रा मुद्गल अपने लेखन से जहाँ एक ओर निरंतर रीतती जा रही, मानवीय संवेदना को रेखाकित करते हुए लगभग निम्नवर्ग के पात्रों को, उनकी जिन्दगी के समूचे दायरे में घुसकर अध्ययन करती नजर आती हैं, वहीं दूसरी ओर नए जमाने की रफ्तार में फँसी जिन्दगी की मजबूरियों के तहत अपसंस्कृति की गर्त में धँसते जा रहे आधुनिक मानवीय मूल्यों की स्तब्ध कर देने वाली तस्वीर भी गहरी संवेदना से उकेरती हैं। चित्रा मुद्गल की कहानियाँ एक बार फिर कहानी में भरे-पूरे परिवार को केन्द्र में रखकर चलने पर जोर देती दिखाई देती हैं। चित्रा मुद्गल ने मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन के बाहर जाकर भी कहानियाँ अवश्य लिखी हैं, खास तौर से 'लाक्षागृह' में संकलित मामला आगे बढ़ेगा और त्रिशंकु जैसी कहानियाँ जिनमे उन्होंने झोपडपट्टी से आए किशोरो की मानसिकता, द्वन्द्वों और बदलते तेवरो को पर्याप्त आश्वस्तकारी ढंग से चित्रित किया है, लेकिन चित्रा मुद्गल की कहानियों का वास्तविक और केन्द्रीय सरोकार निश्चित ही नहीं है। चित्रा मुद्गल की कहानियाँ नौकरीपेशा, कामकाजी

munotes.in

महिलाओं के साथ अपनी गृहस्थी में रची-बसी महिलाओं के परिवेशगत तनावों को बहुत बारीकी और संवेदनशीलता के साथ चित्रित करती हैं। अपनी इन कहानियों में जो पद्धति वे अपनाती हैं, वह पात्रों और प्रसंगो को विचारों में परिवर्तित कर देने वाली पद्धति से भिन्न परिवेश के सारे जरूरी ब्योरों और प्रसंगों को रचना की झीनी बुनावट में उतार देने वाली पद्धति है। यही कारण है कि लेखिका चित्रा मुद्गल की कहानियाँ अपने मांसल अस्तित्व का एक ऐसा वृत्त हमारे चारों ओर बनाए रखती हैं, जिसका आवेग और **ताप** हमें हर समय पकड़ के अंदर और छूता हुआ सा महसूस होता है। चित्रा मुद्गल की कहानियों के तेवर अन्य कथाकारों से थोड़ा सा भिन्न होते हुए भी नयी कहानी की धारा को लगातार फुट करती हैं।

१७.१.२ कथानक

चित्रा मुद्गल की कहानी 'लाक्षागृह' एक कामकाजी युवती पर केन्द्रित कहानी है। पारिवारिक दायित्वो को निभाते-निभाते उसकी विवाह योग्य उम्र भी निकल जाती है। अचानक उसे अपने दफ्तर के एक सहकर्मी से विवाह का प्रस्ताव मिलता है। अपने विवाह को लेकर वह काफी उत्साहित होती है कि अचानक उसे पता चलता है कि उसका तथाकथित सहकर्मी नौकरी के कारण ही उससे विवाह करना चाहता है। सच जानकर वह आक्रोश से भर उठती है, और वह न केवल नौकरी से त्यागपत्र देती है, वरन् वह विवाह से भी इनकार कर देती है। 'लाक्षागृह' नामक चर्चित कहानी में सुन्नी नामक कामकाजी महिला की विवशताओं का बड़ा ही यथार्थ चित्रण किया गया है, खूबसूरत न हो पाने के कारण सुन्नी का विवाह नहीं हो पाता है, उसके लिए जब भी कभी लड़का देखा जाता है तो वह इसकी छोटी बहनों के लिए ऑफर करता है। इस प्रकार दोनों छोटी बहनों का विवाह हो जाता है, और सुन्नी अविवाहित ही रह जाती है। सुन्नी के दफ्तर में सिन्हा तबादला होकर आता है, और उसके माँ-बाप नहीं हैं। वह परिवार के खर्चे में से सहयोग की दृष्टि से सुन्नी से शादी करने के लिए तैयार हो जाता है। क्योंकि सुन्नी भी आठ सौ रूपए महीने कमा रही है। सुन्नी को जब इस सच्चाई का पता चलता है तो वह सबसे पहले दफ्तर से इस्तीफा दे देती है, और देवेन्द्र नामक एक लंगड़े दुकानदार से अपने विवाह के लिए सहमति प्रदान करती है, किन्तु तब तक देर हो जाती है, और देवेन्द्र की भी सगाई कहीं और हो चुकी होती है। सुन्नी इस प्रकार 'लाक्षागृह' में जलती रहती है। यह कहानी वरिष्ठ लेखिका चित्रा मुद्गल जी द्वारा फ्लॅश बॅक में लिखी गई है।

आजादी के बाद देश में पाश्चात्य शिक्षा और पाश्चात्य सभ्यता का विकास बड़ी ही तीव्र गति से हुआ। इसके परिणाम स्वरूप पाश्चात्य भौतिक मान्यताएँ यहाँ भी महत्वपूर्ण हो गई और परम्परागत सांस्कृतिक मान्यताओं पर गहरा आघात होने लगा। इस दृष्टि से चित्रा मुद्गल की 'लाक्षागृह' कहानी में पुरूष प्रधान समाज में कामकाजी महिला की स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है। कैसे वह बर्फीले शिलाखण्ड की ढलान पर अलसाती गति से दौड़ने का प्रयास कर रही थी। वजह शायद या पूर्ण रूप से पुरूष सहवास से अस्पर्शित बावली हो उठी प्रौढ़ता जो अपने ही कगार को दहा ज्वार से उतराई विध्वंसकारी मोड़ पर मुड़ने लगी थी। मकान के पीछे उसने अपना बँक बैलेंस खत्म कर दिया। प्रौवीडंण्ट फंड़ से भी सारा पैसा निकाल लिया। पॉलिसी के विरूद्ध अलग से कर्ज भी ले लिया। फिर भी सिन्हा ने जब सोसाइटी में मेम्बर शिप ली तो सिर्फ अपने ही नाम से, और वह माँ के

हस्तक्षेप के बावजूद भी चुप ही रही। माँ कहती है कि 'मकान तेरे नाम लेने में हर्ज? तू मुझे एक छोटा कारण दे?

१७.१.३ पात्र एवं चरित्र-चित्रण

समकालीन महिला कथाकार चित्रा मुद्गल ने सामाजिक जीवन के यथार्थ पर साधिकार लेखन किया है। कहानी विधा में अपनी सक्रियता दिखाते हुए चित्रा मुद्गल ने आरम्भ में पारिवारिक जीवन पर केन्द्रित कहानियाँ लिखना शुरू की थीं। उनकी कहानियों के नए पन और ताजगी ने पाठकों को अपनी ओर आकर्षित किया। उनकी कहानियों के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि उन्हें कभी भी अनुभवों की सीमा का संकट महसूस नहीं हुआ है। महिला रचनाकारों की अनुभवों की सीमित दुनिया पर आलोचना करते हुए कहा जाता है कि लेखिकाएँ कुछ रचनाओं के बाद या तो शांत हो जाती हैं, या स्त्री-पुरूष संबंधों के अपने सुरक्षित क्षेत्र में पहुँचकर राहत महसूस करती हैं। किन्तु चित्रा मुद्गल जी के कहानी साहित्य पर नजर डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने पारिवारिक जीवन के सन्दर्भों के अलावा अन्य सामाजिक राजनीतिक एवं आर्थिक पहलुओं पर भी कहानियाँ लिखी हैं। उनकी रचना धर्मिता का क्षेत्र और लेखन का दायरा विस्तृत है। उन्होंने स्त्री संघर्षों के चित्रण के साथ-साथ मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को विभिन्न कोणों से छुआ है, और हिन्दी साहित्य को कुछ उल्लेखनीय कहानियाँ दी हैं। नारी का दमन एवं शोषण, उसमें व्यक्ति स्वातंत्र्य की छटपटाहट, सामाजिक असमानता, आर्थिक विषमता, गरीबी, भूख आम आदमी की विषमता आदि पर भी कहानियाँ लिखकर चित्रा मुद्गल जी ने अपना रचना धर्म अच्छी तरह से निभाया है। उन्होंने अपनी लेखकीय जागरूकता का परिचय भी दिया है। उनकी कहानियाँ अपने समय की धडकनों और सामाजिक सरोकारों से भरपूर तथा गहरी संवेदना एवं सर्जनात्मकता की सच्ची मिसाले हैं। इस दृष्टि से उनकी कहानी 'लाक्षागृह' को देखा जा सकता है।

चित्रा जी ने 'लाक्षागृह' कहानी के पात्रों का चरित्र-चित्रण बडी ही बारीकी एवं कुशलता से किया है। 'लाक्षागृह' में पात्रों की दृष्टि से यदि देखा जाए तो बदसूरती के कारण समाज में और परिवारों में रिश्तेदारों से उपेक्षा एवं घृणा रखने वाली लडकी सुन्नी की व्यथा-कथा है। शादी के बाजार में सरकारी नौकरी होने के बावजूद अपनी बदसूरती के कारण कोई उससे शादी ही नहीं करना चाहता है 'सेक्स वर्क' करने वाले औरतों के बच्चे सचमुच अनाथ जैसे हैं। ऐसे बच्चों को शिक्षा देकर उन्हे नौकरी दिलवाकर बाद में उनकी शादी के लिए परेशान होना, किसी भी माँ-बाप के लिए बडा ही दुखद है। इस कहानी में चित्रा जी ने असुंदर होने के कारण घर वालों से और हमारे सभ्य पढे-लिखे समाज से घृणा की पात्र सुन्नी नामक युवती के जीवन को बडे ही संवेदना के साथ चित्रित किया है। अपनी बदसुरती के कारण ही सुन्नी नामक युवती के जीवन को छीन लिया जाता है। वह हर चीज से वंचित रह जाती है। माँ-बाप उसका हाथ पीला करने के लिए गँवार, अनपढ, लंगडे-व्यापारी से उसकी शादी तय कर देते है। लेकिन सुन्नी इस शादी से इनकार कर देती है।

इसी बीच ऑफिस में आए नये कर्मचारी सिन्हा, सुन्नी से बडे ही प्यार से व्यवहार करने लगा। सिन्हा बहुत ही चालाक व्यक्ति है। वह जानता था कि आज एक भरे-पूरे परिवार को एक ही व्यक्ति की आमदनी से चलाना कठिन काम है। इसीलिए कुरुप होने पर भी कमाऊ

लडकी से वह शादी करने का निर्णय लेता है। सुन्नी जब यह जानती है कि सिन्हा का प्यार उससे नहीं, बल्कि उसके धन से है, तो सुन्नी, सिन्हा से अपने सारे संबध ही समाप्त कर देती है। साथ ही वह अपनी नौकरी से भी त्यागपत्र दे देती है। आखिर में वह अपने माँ-बाप द्वारा व्यापारी से तय शादी करने का निर्णय सुनाती है, किन्तु तब तक व्यापारी की भी शादी किसी दूसरी लडकी से तय हो जाती है। आज का समय व्यावहारिकता पर टिका हुआ है। इसलिए सिन्हा, सुन्नी से शादी करने को तैयार होता है कि वह महीने में आठ सौ रूपए कमाती है। पारिवारिक संबंधों में अर्थ की इस व्यवहारिकता को चित्रा जी ने इस कहानी में चित्रित किया है। सुनीता कामकाजी युवती होने के साथ-साथ वह रेलवे में किसी अच्छे पद पर कार्य करती है। परन्तु उसका दुर्भाग्य कि वह खूबसूरत नहीं है। उसकी छोटी बहनों की शादी तो हो जाती है, परन्तु सुनीता कुआँरी ही रह जाती है। वह शादी करके घर बसाना चाहती है, जैसी कि सभी स्त्रियों की लालसा होती है। परन्तु सुनीता को कोई भी पसन्द नहीं करता है। 'लाक्षागृह' कहानी के पात्रों का निहितार्थ यह हैं कि स्त्री आज भी पुरूषों की नजर से ऊपर नहीं उठ पाई है। इस़, लिहाज से चित्रा जी ने दोनों पात्रों सुनीता उर्फ सुन्नी एवं सिन्हा का चरित्र-चित्रण बडी ही बारीकी और कुशलतापूर्वक किया है।

१७.१.४ 'लाक्षागृह' कहानी का उद्देश्य

चित्रा मुद्गल जी की कहानियों का उद्देश्य परंपरागत मान्यताओं और रुढ़िगत संस्कारों की परख एवं पहचान करना रहा है। वे अपनी 'लाक्षागृह' जैसी कहानी में बेडियों में जकड़े समाज को स्वतंत्र करके नए मूल्यों की प्रतिष्ठा की पक्षधर चित्रा जी जैसी खुलेमन की लेखिका होने के कारण विचारों के स्तर पर तमाम ज्वलंत मुद्दों को चुनौती देती हैं, और आज के नारी विमर्श को आयाम देती हैं। स्त्रियों का दमन एवं शोषण, उनमें व्यक्ति स्वातंत्र्य की छटपटाहट, सामाजिक असमानता, आर्थिक विषमता, गरीबी, भूख, आम आदमी की विवशता को लेकर अपनी कहानियों का सृजन करना ही लेखिका चित्रा मुद्गल जी का प्रमुख उद्देश्य रहा है। चित्रा जी ने अपनी कहानियों में मुख्यत: मध्यवर्ग और निम्न वर्ग के जीवन को ही प्रस्तुत किया है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि चित्रा मुद्गल जैसी वरिष्ठ लेखिका की कहानियों में समाज का निरुपण प्रेम, सेक्स की कुंठाओं का स्पष्टीकरण, वर्तमान युवा पीढ़ी के तनाव और उनके आक्रोश की अभिव्यक्ति आदि को सामाजिक मूल्यों के परिपेक्ष्य में प्रस्तुत किया है। उनकी रचनाएँ शहर से गाँव और गाँव से शहर का चक्कर लगाते हुए व्यक्ति की संघर्ष गाथा को समाज के सामने प्रस्तुत करती है।

१७.१.५ सारांश

सारांशत: यह कहा जा सकता है कि चित्रा मुद्गल ने अपनी कहानी 'लाक्षागृह' का बड़ा ही मार्मिक और यथार्थ चित्रण किया है। कथानक से लेकर पात्र योजना एवं उनके चरित्र-चित्रण का निर्वाह बड़ी ही कुशलता और सादगी से किया है। उनकी इस कहानी के पात्र जीवन संघर्ष में भी अकेले जूझकर खड़े रहने के लिए हर क्षण तैयार रहते हैं, और अपने जीवन की हर घटनाओं पर अपने आत्मबल से सामना करते हैं। अपनी इस कहानी के माध्यम से चित्रा जी ने शोषित, पीडित समाज और उनकी सुरक्षा के प्रति उनका मन बेबस बना रहता है।

१७.१.६ दीर्घोत्तरीय प्रश्न

i. 'लाक्षागृह' कहानी की कथावस्तु लिखिए।

ii. 'लाक्षागृह' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट कीजिए।

iii. कहानी 'लाक्षागृह' के माध्यम से सुनीता उर्फ सुन्नी का चरित्र-चित्रण कीजिए।

१७.१.७ लघुत्तरीय प्रश्न

i. 'लाक्षागृह' कहानी के उद्देश्य लिखिए

ii. 'लाक्षागृह' कहानी के पात्र सिन्हा पर टिप्पणी लिखिए।

iii. 'लाक्षागृह' कहानी का सारांश लिखिए।

iv. 'लाक्षागृह' के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।

१७.१.८ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. लाक्षागृह कहानी की लेखिका कौन हैं?

ii. सुन्नी किस कहानी की नायिका है?

iii. सुनीता की मासिक पगार कितनी थी?

iv. सिन्हा किस कहानी का पात्र है?

v. सुन्नी किस विभाग में नौकरी करती है?

*****

munotes.in